CPGM - 02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

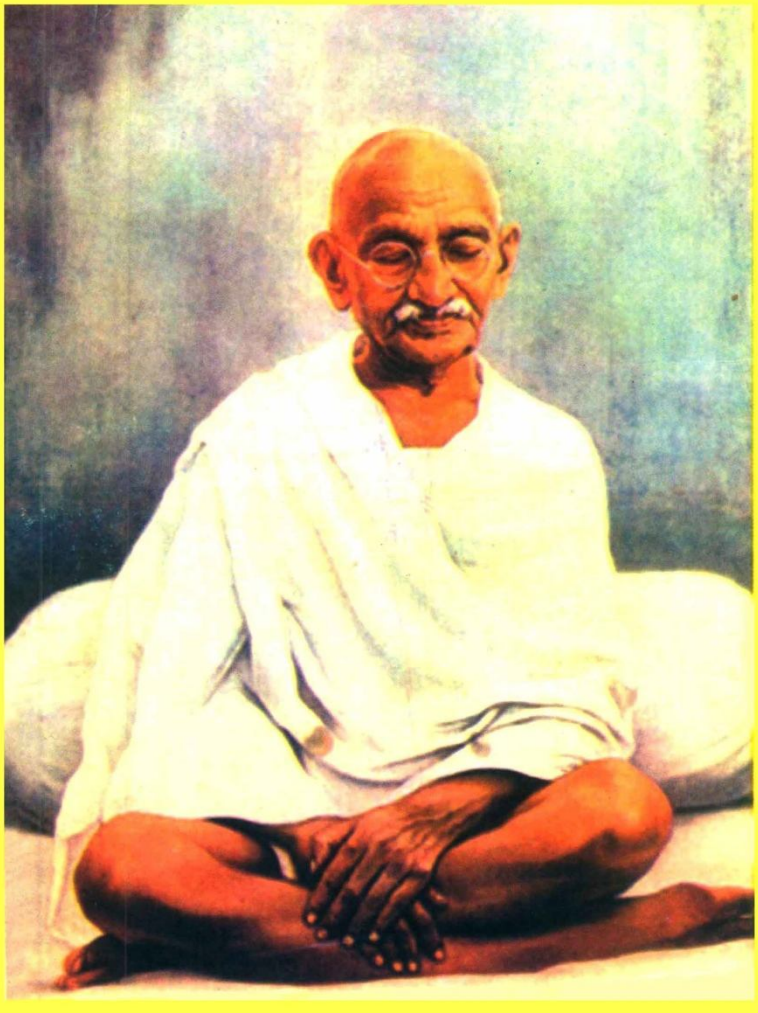

गाँधी : पद्धति

गाँधी : पद्धति

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / सदस्य

संयोजक

डॉ. लीला राम गुर्जर
सह आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

- **प्रो. (डॉ.) एम.एल. शर्मा**
  आचार्य, गाँधी अध्ययन केन्द्र
  पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़
- **प्रो. (डॉ.) हिमांशु बोराई**
  आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
  हेमवती नन्दन बहुगुणा विश्वविद्यालय
  श्रीनगर(गढ़वाल)
- **प्रो. (डॉ.) अनाम जैतली**
  आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
- **डॉ. बी. अरुण कुमार**
  सह आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ लेखक	इकाई संख्या	पाठ लेखक	इकाई संख्या
डॉ. बी. अरुण कुमार सह आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	1,2	**डॉ. नरेन्द्र नाथ** व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग राजकीय महाविद्यालय, बीकानेर	8
डॉ. नरेश भार्गव वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	3,4,5	**डॉ. ज्योति शर्मा** व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग सुबोध महिला महाविद्यालय, जयपुर	9
प्रो.(डॉ.) राधाकृष्णन भारतीय गांधी परिषद, त्रिवेन्द्रम	6		
प्रो.(डॉ.) पी.सी. माथुर सलाहकार, लोक प्रशासन वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा (राजस्थान)	7	**डॉ. निधि शर्मा** व्याख्याता,इतिहास विभाग राजकीय महाविद्यालय, कोटा	10

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो. (डॉ.)एम.के. घडोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक(संकाय)	प्रभारी(एम.पी.डी.)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
रावतभाटा रोड, कोटा	रावतभाटा रोड, कोटा	रावतभाटा रोड, कोटा

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन अगस्त, 2010 **ISBN-13/978-81-8496-041-9**

इस सामग्री के किसी भी अंश की व. म. खु. वि. कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी' (चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि. कोटा के लिए कुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा(राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

गाँधी : पद्धति

विषय सूची

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई- 1	दक्षिण अफ्रीका मे गांधी का अभियान	6–22
इकाई- 2	भारत मे गांधी: चम्पारण सत्याग्रह से भारत छोड़ो आन्दोलन तक	23–53
इकाई- 3	चंपारण आंदोलन और महात्मा गांधी	54–68
इकाई- 4	खेड़ा सत्याग्रह और गांधी	69–86
इकाई- 5	बारदोली सत्याग्रह और महात्मा गांधी	87–102
इकाई- 6	किंग की अहिंसा	103–116
इकाई- 7	ग्रामदान	117–128
इकाई- 8	भारत मे गांधीवादी शांति आन्दोलन	129–141
इकाई- 9	गाँधी- आश्रम	142–158
अध्याय- 10	गाँधी एवं राजस्थान	159–181

इकाई -1

दक्षिण अफ्रीका में गांधी का अभियान

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 अश्वेतों की प्रतिकूल व अन्यायपूर्ण स्थिति

1.4 मार्टिज़बर्ग की घटना एवं गांधी की प्रतिक्रिया

1.5 नटल में गांधी की भूमिका

1.6 टान्सवाल में गांधी की भूमिका

1.7 दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण में गांधी की भूमिका

1.8 सारांश

1.9 अभ्यास प्रश्न

1.10 संदर्भ ग्रन्थ

1.1 उद्देश्य

इस इकाई में आप जान पायेंगे-

- दक्षिण अफ्रीका में अश्तेव लोगों की अन्यायपूर्ण स्थिति
- अश्वेतों और गांधी के साथ होने वाले अन्यायपूर्ण व्यवहार की विभिन्न घटनायें
- इन घटनाओं पर गांधीजी की प्रतिक्रिया
- दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण के बाद गांधीजी की भूमिका

1.2 प्रस्तावना

गांधीजी ने अपने जीवनकाल के दक्षिण अफ्रीकी दौरे में बिताये गये वर्षो (1893-1914) में विरोध करने के अपने तरीके विकसित किये । अपने विरोध करने के तरीके को उन्होंने सत्याग्रह नाम दिया । बाद में इसका उपयोग न केवल भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में हुआ अपितु विश्व के अनेक हिस्सों में समाज के शोषित व दलित वर्गो द्वारा अपनी वैयक्तिकता व स्वतंत्रता की दृढ़ता से माँग करने के लिये भी किया गया ।

1.3 अश्वेतों की प्रतिकूल व अन्यायपूर्ण स्थिति

जब गांधी दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हुये थे, उन्हें नयी जगह पर मिलने वाली बाधाओं व अपमान का कोई अंदेशा नहीं था । उस समय दक्षिण अफ्रीका में सामान्य स्थितियाँ अश्वेत व्यक्ति के लिए प्रतिकूल थीं । अश्वेत व्यक्ति पर श्वेत व्यक्ति का प्रभुत्व सामान्य बात समझी जाती थी । अल्पसंख्यक होने के बावजूद, श्वेत लोगों के दिमाग में प्रजातीय श्रेष्ठता की भावना भरी थी । उनकी वेरोकटोक राजनीतिक शक्ति व उनके द्वारा की जा रही लूटपात ने उनकी इस भावना को और हवा दी । उनके व्यवहार में घंमड व अश्वेतों के प्रति नफरत

झलकती थी। अश्वेतों के प्रति नफरत की भावना तब और बढ गई जब श्वेतों ने सोचा कि संसाधनों से परिपूर्ण दक्षिण अफ्रीका उपमहाद्वीप में अश्वेत अपनी संख्या के बल पर श्वेतों को उनकी लाभदायक स्थिति में हानि पहुंचा सकते है । अपने आप को इस देश से बाहर निकाले जाने की संभावनाओं को ध्वस्त करने के लिये श्वेतों ने अश्वेतों को अपना आज्ञापालक व आश्रित बनाने की योजना बनाई । इसी साधन से वे इस संसाधनों से परिपूर्ण उपमहाद्वीप में अपने शासन को जारी रख सकते थ । इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये तथा वहां के विधिक अधिकारियों के सहयोग से अनेक ऐसे कानून लागू कर दिये जिससे अश्वेतों पर मुश्किलों का पहाड़ टूट पडा । अधिवास तथा नागरिक जीवन, कानून व प्रशासन, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, व्यापार, स्वास्थ्य, जीवन आजादी व सम्पत्ति इन सभी मामलों में प्रजातीय पहचान के आधार पर लोगों को अलग-थलग करने की नीति का पालन किया जाने लगा । अश्वेतों को अल्पसंख्यक श्वेतों के पूर्णत: अधीन करने के उद्देश्य से उन्हें किसी भी कानून का उल्लंघन किये जाने पर कडा से कडा दण्ड दिया जाने लगा ।

यद्यपि ये कानून मूल अफ्रीकी अश्वेतों के लिये बनाये गये थे तथापि बाद में इनका उपयोग दक्षिण अफ्रीका में रह रहे अन्य अश्वेतों पर भी किया जाने लगा । इन अश्वेतों में भारतीय मूल के अनुबंधित व स्वतन्त्र मजदूर, कुछ व्यापारी व उनके सहायक शामिल थे । उद्योग स्थलों व खनन क्षेत्रों में काम करने वाले ये अनुबंधित मजदूर अर्ध-गुलामी का जीवन जी रहे थे । दुर्व्यवहार के कारण अपना मालिक बदलना इनके लिये बहुत मुश्किल था । अपने अनुबन्ध के निर्धारित वर्षो के बाद अनुबन्ध का नवीनीकरण न कराने पर तो इनकी मुश्किलें और बढ़ जाती थी । कुछ भारतीयों ने जब व्यापार व वाणिज्य में मामूली सफलता हासिल की तो यूरोपीय व्यापारी उनसे ईर्ष्या करने लगे । उन्होंने पुरजोर माँग उठाई कि अपने अनुबन्ध का नवीनीकरण न कराने वाले भारतीयों को वापिस उनके देश भेज दिया जावे । मताधिकार छीनने के प्रयास भी किये गये । लाइसेंस नीति लागू होने से भारतीयों तथा अन्य गैर-यूरोपिय व्यापारियों के लिये व्यापार करना मुश्किल तथा महँगा हो गया । इसी प्रकार यूरोपीय भाषा परीक्षा उत्तीर्ण करने की अनिवार्यता लागू करके दक्षिण अफ्रीका आने की इच्छा रखने वाले अनेक व्यापारियों के रास्ते को प्रबलता से रोक दिया गया ।

कानूनी बाधाओं के अतिरिक्त भारतीयों को अनेक सामाजिक अशक्तताओं का सामना भी करना पडा । उनके बारे में अपमानजनक टिप्पणियां की जाने लगी । यहां तक कि उन्हें फुटपाथ पर चलने व रात नौ बजे बाद घर से बाहर रहने पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया । रेलगाडियों में उन्हें अलग डिब्बों में यात्रा करनी पडती थी तथा ट्रान्सवाल जैसे राज्यों में उनके लिये प्रथम व द्वितीय दर्जे की रेल्वे टिकिट ही जारी नहीं की जाती थी । श्वेत यात्री द्वारा विरोध किये जाने पर उन्हें बेहद अपमानजनक रूप से बाहर फेंका जा सकता था । यात्री डिब्बों में तो कभी-कभी उन्हें पावदान पर खडे होकर यात्रा करने पर मजबूर किया जाता था । यूरोपीय होटलों में उनके लिये ठहरने व भोजन की सुविधा उपलब्ध नहीं थी । आरेन्ज फ्री स्टेट के श्वेत उपनिवेशिकों ने भारतीयों को किसी भी प्रकार का व्यापार करने से रोकते हुए उन्हें अपने राज्य से बाहर कर दिया ।ट्रान्सवाल जैसे अन्य राज्यों में उनके लिये रहने व व्यापार करने के लिये अलग स्थान (गेटो) निर्धारित कर दिये गये जहां न्यूनतम नागरिक सुविधाये उपलब्ध थी ।

फिर भी विदेशी धरती पर साधनहीन अल्पसंख्यकों के रूप में रहते हुये जीवनयापन की बाध्यताओं के कारण भारतीयों ने इस अपमान को सहन किया तथा इन सभी बाधाओं पर उदासीन रहने का भाव विकसित किया । अपमान सहते हुए भी उन्होंने केवल अपनी दैनिक आय पर ही ध्यान दिया।

1.4 मार्टिज़बर्ग की घटना एवं गांधी की प्रतिक्रिया

दक्षिण अफ्रीका में गांधी अपने प्रवास के दौरान अनेक प्रकार की अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पडा । डरबन में अपने प्रवास के प्रथम सप्ताह में ही उन्होंने अनुभव कर लिया कि किस प्रकार भारतीयों को अपमानित किया जाता है तथा उनके लिये अनेक प्रकार की बाधायें उत्पन्न की जाती है ।किन्तु मार्टिज़बर्ग की घटना से तो उनका माथा ही ठनक गया । सही टिकिट होते हुए भी ट्रेन के प्रथम दर्जे के डिब्बे से उन्हें सामान सहित बाहर फैंक दिया गया और कडाके की सर्दी में काँपते हुए उन्हें प्रतीक्षालय में रात बितानी पड़ी । उन्होंने उसी रात तय किया कि वे इस अपमानजनक स्थिति के मूक दर्शक बने नहीं रह सकते । उन्होंने निश्चय किया कि न केवल अपने व्यक्तिगत सम्मान के लिये अपितु अपने अन्य अश्वेत साथियों के लिये भी वे इसका विरोध करेंगे व आंदोलन चलायेगे । बुराई के आगे समर्पण करने के बजाय कष्ट सहते हुए विरोध करने के निर्णय से यह स्पष्ट होता है कि गांधीजी लोगों को आजादी दिलाने के लिये इस विधि का रचनात्मक उपयोग करने का इरादा रखते थे । प्रेसिडेन्ट स्ट्रीट के फुटपाथ पर लात मार कर भगा दिये जाने की घटना से भी यह स्पष्ट होता था कि वे बदला लेने की भावना रखने के स्थान पर बुराई करने वाले को माफ करने की भावना रखते थे । इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में आगमन के प्रारम्भिक दिनों में ही सत्याग्रह की कुछ मूल आवश्यकताओं को निर्धारित करते हुए उन्होंने व्यवहार में लाना शुरू कर दिया था ।

स्वयं व अपने देशवासियों द्वारा बर्दाश्त किये जा रहे इस प्रजातीय कलंक का उन्मूलन करने की ठानने के बाद गांधीजी ने समय बर्बाद नहीं किया । दक्षिण अफ्रीका में ईसाईयों से तो इनका सम्पर्क था ही, उन्होंने भारतीय समुदाय के लोगों से भी सम्पर्क साधना शुरू किया । प्रिटोरिया में आने के एक सप्ताह के अन्दर ही उन्होंने वहां रह रहे समस्त भारतीयों की बैठक आहूत की तथा उन्हें अपनी निःशक्तताओं के प्रति जागरूक किया । इस बैठक में गांधाजी ने अपने जीवन का प्रथम भाषण दिया । उन्होंने व्यापारिक व्यवहार में भी सत्यता की आवश्यकता पर बल दिया, जीवन में स्वच्छता के नियमों की पालना पर बल दिया और जाति, धर्म, क्षेत्रीयता के भेदों को भूलकर तथा संगठित होकर जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास करने की बात कही । उन्होंने एक संघ का गठन करने का भी सुझाव दिया ताकि भारतीय समुदाय द्वारा सहन की जा रही मुश्किलों के सम्बन्ध में सम्बन्धित अधिकारियों से प्रभावशाली तरीके से बात की जा सके । यह भी प्रस्तावित किया गया कि संघ के सदस्यों की नियमित बैठकें हों और गांधीजी ने ऐसे संघ को अधिकतम सहयोग का आश्वासन दिया । ऐसे बैठकों के माध्यम से प्रिटोरिया में रह रहे समस्त भारतीयों से गांधी का परिचय हुआ और विचारों के आदान-प्रदान से भारतीय समुदाय की स्थिति के बारे में विस्तृत जानकारी लेने के बाद गांधी ब्रिटिश ऐजेन्ट से मिले जो भारतीय समुदाय के प्रति सहानुभूति रखते थे तथा उन्होंने गांधी को विश्वास दिलाया

कि वह अपने सामर्थ्य के अनुसार यथासंभव मदद करेंगे जिस मुकदमें के सिलसिले में गांधीजी दक्षिण अफ्रीका गये थे उसे समाप्त करने के बाद वे भारत के लिये प्रस्थान करने की तैयारी कर रहे थे । विदाई पार्टी के दिन नेटल मर्क्यूरि नाम समाचार पत्र में उनकी नजर एक समाचार पर पडी जिसमें नेटल विधानसभा में भारतीयों से मताधिकार छीनने सम्बन्धी उठाये जा रहे कदमों का जिक्र था । गांधीजी के अनुसार भारतीयों के पास जो थोडे बहुत अधिकार थे, यह कदम इन अधिकारों के लिए ताबूत की पहली कील के समान था । उन्होंने वहां उपस्थित साथियों को इस विधेयक के निहितार्थ को समझाया तथा उन्हें संभावित अन्यायपूर्ण स्थितियों के बारे में जागरूक किया । इस पर साथी लोगों ने गांधीजी से वहीं रूकने का अग्रह किया तथा सम्बन्धित विधेयक व इसके दुर्भावनापूर्ण इरादों का विरोध करने के लिये उन्हें नेतृत्व 'प्रदान करने को कहा ।

विधेयक का विरोध करने का निर्णय लेने. के बाद सुनियोजित विरोध करने के लिये स्वयंसेवकों को नामांकित किया गया । सरकार में शामिल प्रमुख लोगों को तार भेज कर यह निवेदन किया गया कि विधानसभा में विधेयक पर चर्चा स्थागित की जाये । याचिकायें तैयार की गई व उन पर भारतीय समुदाय के लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त किये गये । इसे विधानसभा के लये प्रेषित किया गया तथा एक प्रति प्रेस को भी भेजी गई ताकि विधेयक पर संभावित निर्णय को प्रभावित किया जा सके । इन प्रयासों के बावजूद विधानसभा में विधेयक पारित हो गया । यद्यपि प्रारम्भिक गतिविधयों का कोई अनुकूल प्रभाव नहीं पडा तथापि इस आंदोलन ने भारतीय समुदाय में नई जान फूँक दी, उन्हें अपनी मुश्किलों व अन्यायपूर्ण स्थिति के प्रति जागरूक किया गया । साथ ही वे अपने रानीतिक अधिकारों के लिये लडने के लिये दृढ़तापूर्वक एक जुट हो गये । उपनिवेशी राज्यों के राज्य 'सचिव लार्ड रिपन के पास एक विस्तृत याचिका प्रस्तुत करने का निश्चिय किया गया । याचिका में गांधी ने भारतीयों के मताधिकार को सैद्धान्तिक व समीचीन बताते हुए समर्थन किया । तर्क था कि नेटल में रह रहे भारतीयों के लिये नेटल में मताधिकार उतना ही औचित्यपूर्ण है जितना कि भारत में । साथ ही उन्होंने कहा कि नेटल में भारतीय आबादी का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही मताधिकार का उपयोग करने में सक्षम है, इसे बनाये रखना समीचीन होगा । याचिका पर लगभग दस हजार हस्ताक्षर लिये गये तथा उसे प्रसारित व वितरित किया गया । इसने भारतीय जनता को नेटल में उनकी स्थिति से पहली बार अवगत कराया । इसकी प्रतियाँ इंग्लैण्ड तथा भारत के समाचार पत्रों व प्रचारकों को भी भेजी गई । इन प्रयासों के माध्यम से गांधीजी ने भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं के प्रति जन सहानुभूति निर्मित करने का प्रयास किया ताकि उनके सम्मिलित प्रयास से नेटल के प्राधिकारियों को प्रभावित किया जा सके कि वे भारतीयों की मांगें स्वीकार कर उनकी परिवेदानाओं को कम कर सकें ।

गांधीजी को इस बात का एहसास होने लगा कि निकट भविष्य में उनके लिये नेटल छोड़ना असम्भव होगा । अत: उन्होंने अपने करीबी मित्रों व भारतीय समुदाय के प्रमुख लोगों से विचार विमर्श कर वहीं बस जाने की योजना बनाई । कुछ मुश्किल जरूर आई किन्तु वह सर्वोच्च न्यायालय में वकील की हैसियत से प्रवेश पाने में सफल हुए ।

1.5 नेटल में गांधी की भूमिका

गांधीजी ने शीघ्र ही यह समझ लिया कि किसी भी सतत् गतिविधि के लिये एक स्थायी संस्था का होना अपरिहार्य हैं । अत: उन्होंने भारतीय समुदाय के प्रमुख लोगों से विचार विमर्श कर मई 1894 में नेटल इंडियन कांग्रेस का गठन किया । इसकी नियमित बैठकों में नेटल सरकार का विरोध करने सम्बन्धी योजनाओं पर चर्चा की जाती थी । साथ ही आन्तरिक सुधार के प्रश्न पर भी चर्चा की जाती थी । बैठकों में धरेलू साफ-सफाई, व्यक्तिगत स्वास्थ्य, घर व दुकानों के अलग-अलग भवन होने की आवश्यकता जैसे विषयों पर व्याख्यान, चर्चायें व सलाह मशविरा होने लगे । युवा भारतीय जो अपनी मातृभूमि के विषय में कम जानकारी रखते थे उनके लिये नेटल भारतीय शैक्षिक संघ का गठन किया गया । उनमें मातृभूमि के साथ साथ भारतीय समुदाय के विभिन्न वर्गो के प्रति प्रेम की भावना विकसित की गई । यधपि सरकार की ओर से कांग्रेस पर अनेक प्रहार किये गये तथापि कांग्रेस ने उनका डट कर सामना किया । गांधीजी अतिश्योक्ति में विश्वास नहीं रखते थे तथा उन्होंने अपनी हर आलोचना का पूर्वाग्रहमुक्त उनमें सुधार करते थे । विचार की कार्यविधि में गलतियां हो सकती है और नेटल भारतीय कांग्रेस ने आलोचकों के तर्को को स्वीकार किया । इसमें खुलापन था व आत्म निरीक्षण के लिये तत्परता थी और उन्नति के नये शिखरों को छूने की अपनी क्षमता पर भरोसा था । जहां संभव हो समानता व आत्मसम्मान की शर्तो पर यूरिपियन्स का सहयोग किया गया । 1896 में गांधीजी अपने परिवार को लेने भारत आये । यहां उन्होंने दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों में रह रहे भारतीयों की दयनीय स्थिति पर लोगों को अवगत कराया । वे गोखले, फिरोज. शाह मेहता, बदरूद्दीन, रानाडे, तिलक जैसे प्रमुख नेताओं से मिले । सभी ने दक्षिण अफ्रीका में उनके कार्यो की प्रशंसा की व हर प्रकार की मदद का आश्वासन दिया ।

जनवरी 1897 में नेटल संसद की बैठक होनी थी । इसकी सूचना का तार जब गांधीजी को मिला तो उन्हें भारत में अपना काम बीच में ही छोड़ना पडा । 1896 में वे दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हुये । समाचार पत्रों में गांधीजी द्वारा नेटल के श्वेतों के विरूद्ध कार्यवाही की मिथ्या रिपोर्ट छपी । उन्होंने यह अफवाह फैलाई कि गांधी दो जहाजों में लोगों को लेकर नेटल आ रहें है ताकि नेटल में भारतीयों की भरमार हो सके । इससे यूरोपियन्स के मन में गांधी के प्रति नफरत व शत्रुता की भवना में बढोत्तरी हो गई । उन्होंने गांधी के डरबन पहुंचने से रोकने के हर संभव प्रयास किये और जब वे इसमें सफल नहीं हुए तो उन्होंने उन्हें जान से मारने का प्रयास किया जब वे रूस्तम जी के घर जा रहे थे । बाद में वे उनके घर पर जमा हुये ताकि वे उन्हें मार सकें। लेकिन गांधीजी ने अपने आक्रमणकारियो के विरूद्ध काई शिकायत मन में नहीं रखी और उनपर मुकदमा चलाने से भी इन्कार कर दिया । बदला न लेने की भावना में उनकी नैतिक परिपक्वता झलकी । पापियों को सजा देने के बजाय उन्हें उनकी अज्ञानता के लिये माफ करना गांधी जी अधिक श्रेष्ठ समझते थे ।

जब बोर युद्ध छिड़ा तब बहस का प्रमुख विषय थी कि दक्षिण अफ्रीका में रह रहा भारतीय समुदाय ब्रिटिश युद्ध प्रयासों में मदद करें अथवा नहीं । प्रारम्भ में भारतीय समुदाय इसके लिये तैयार नहीं था । इस पर उनकी आलोचना भी हुई । उन्हें 'धन के भूखे 'ब्रिटिश

लोगों पर बोझ' 'दीमक' 'कृतघ्न' आदि कहा गया । गांधी युद्ध में ब्रिटिश सरकार का सहयोग करने के पक्ष में थे । इसके लिये उन्होंने अपने साथियों को विश्वास में भी लिया । उनके अनुसार राष्ट्र पर मंडरा रहे खतरों में व्यक्ति उदासीन रहे तो यह कोई सम्मानजनक स्थिति नहीं हैं । विशेषत: युद्ध की स्थिति में तो ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिये । उनका तर्क था कि ब्रिटिश लोग भारतीयों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं-यह उदासीनता का कोई आधार नहीं है बल्कि ब्रिटिश नागरिकता के बल पर उन्होंने जो कुछ भी हासिल किया है अब ब्रिटिश साम्राज्य की संकट की स्थिति में उसे चुकाने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ है । साथ ही गांधी का यह भी मानना था कि इससे उनपर लगाये गये दुर्भावनापूर्ण मिथ्या आरोपों को भी झुठलाया जा सकता है तथा उनके द्वारा अधिक आजादी व खुशहाली के लिये किये जा रहे प्रयासों को भी बल मिलेगा ।

तत्पश्चात् भारतीय समुदाय ने सेना में अपनी सेवायें देने का प्रस्ताव दिया । गांधी ने अपनी निष्ठा का प्रमाण देने के लिये ब्रिटिश सेना के लिये इंडियन एम्बूलेंस कोर का गठन किया । यद्यपि प्रारम्भ में भारतीयों के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया गया तथापि जब युद्ध में हानि बढती गई और भारतीयों ने अपना प्रस्ताव दोहराया तो अन्तत: एम्बूलेंस कोर का गठन करने के लिये कहा गया जो घायल व मृत सैनिकों को बेस केम्प ले जा सके । विपरीत व जोखिम भरी स्थितियों के बावजूद भारतीयों ने अच्छी सेवायें दी तथा इसके लिये उनकी प्रशंसा भी की गई । गांधी को आशा थी कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के सद कार्यो के कारण उनका सम्मान बढेगा और ब्रिटिश भी प्रभावित होकर उनकी परिवेदनाओं को कम करने का प्रयास करेगा । इसी आशा के साथ गांधीजी ने घर लौटने की योजना बनाई ।

वह 1901 में भारत लौटे तथा बम्बई में उच्च न्यायालय में वकालत शुरू की । बम्बई में मुश्किल से तीन या चार माह ही गुजरे थे कि दक्षिण अफ्रीका में रह रहे उनके साथियों ने उन्हें तार भेजकर बुला लिया । गांधी ने बम्बई में अपना काम समेटा व 1902 के अन्त में दक्षिण अफ्रीका रवाना हो गये । ।

दक्षिण अफ्रीका पहुंचने पर गांधीजी ने महसूस किया कि वहां भारतीयों की स्थिति बद से बदतर हो गई थी । बोर युद्ध के दौरान भारतीयों द्वारा ब्रिटिश को दिये गये सहयोग के कारण गांधीजी ने आशा की थी कि भारतीयों की स्थिति सुधरेगी । किन्तु यह आशा धाराशाही हो गई । भारतीयों व्यापरियों से प्रतिस्पर्धा से आक्रांत व जातीय पूर्वाग्रह से ग्रस्त प्राधिकारियों ने दृढ़ निश्चिय कर लिया कि दक्षिण अफ्रीका को श्वेत अल्पसंख्यकों के अधीन ही रखा जायेगा । अत: उन्होंने आनेवाले भारतीयों को तो रोक ही दिया, दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशों में रह रहे भारतीयों का जीवन और कष्टकारी बना दिया । उन्हें आशा थी कि इससे भारतीय अपने देश लौटने के लिय मजबूर होगें तथा जो बचे रहेंगे वे गुलामी का जीवन व्यतीत करेंगे । दक्षिण अफ्रीका में रह रहे एशिया के लोगों के लिये एक अलग एशियाटिक विभाग का गठन किया गया । इस विभाग के प्राधिकारी मौका मिलते ही भारतीयों का अपमान करने से नहीं चूकते थे और तो और इस विभाग में भ्रष्टाचार भी व्यापक स्तर पर फैला हुआ था ।

1.6 ट्रान्सवाल में गांधी की भूमिका

इस दौरान लार्ड चेम्बरलेन ने दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों में आने की योजना बनाई । जब वह नेटल गए तब गांधीजी भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्वमंडल के साथ उनसे मिले व अपनी परिवेदनायें प्रस्तुत की । लार्ड चेम्बरलेन ने बडे सब्र से उन्हें सुना और नेटल सरकार से बातचीत करके यथासंभव मदद करने का वादा किया । लेकिन नेटल सरकार ने भारतीयों के प्रति वैमनस्य को देखते हुये तथा ब्रिटेन सरकार की दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों की सरकारों के प्रति तुष्टीकरण की नीति के रहते, गांधी जी को किसी परिवर्तन की उम्मीद कम ही थी । फिर भी उन्होंने भारतीय समुदाय की परिवेदनाओ को व्यक्त कर उपलब्ध संवैधानिक साधनों से उनका निदान खोजने की मांग की । तत्पश्चात् उन्होनें ट्रांसवाल के भारतीय समुदाय के एक प्रतिनिधिमण्डल को लार्ड चेम्बरलेन से मिलने भेजा । लेकिन ट्रांसवाल सरकार ने न केवल उन्हें लार्ड चेम्बरलेन से मिलने से रोका अपितु उनका अपमान भी किया । गांधी के अपमान के कारण भारतीय प्रतिनिधित्वमण्डल बिना लार्ड चेम्बरलेन से मिले लौटना चाहता था किन्तु गांधीजी ने उन्हें किसी अन्य व्यक्ति के नेतृत्व में लार्ड चेम्बरलेन से मिलने के लिये समझाया और अपनी समस्याओं के बारे में ज्ञापन देने को कहा । इसी प्रकार भारतीय समुदाय के प्रतिनिधि मण्डल के प्रतिष्ठित व्यक्तियों व अधिकारियों से मिल इण्डियन ओपिनियन नामक समाचार पत्र भी दक्षिण अफ्रीका में शुरू किया । इस पत्र के माध्यम से उन्होंने भारतीय समुदाय की परिवेदानाये व्यक्त की व भारतीयों के प्रति सहानुभूति का वातावरण निर्मित करने का प्रयास किया ।

इसी बीच एक महत्वपूर्ण घटना घटी । ट्रांसवाल जिसे व ओरेन्ज फ्री स्टेट में ब्रिटिश शासन स्थापित होने के बाद एक समिति का गठन किया गया ब्रिटिश सरकार के प्रति पूर्वाग्रह युक्त कानूनों की सूची बनाने का दायित्व दिया गया । भारत विरोधी कानूनों की सूची की बात इसमें नहीं थी । विडम्बना यह हो गई कि ब्रिटिश, विरोधी कानूनों की सूची बनाने के लिये गठित समिति ने भारत विरोधी अधिनियमों की सूची भी प्रस्तुत कर दी 1 इसे एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया जो भारतीय समुदाय के विरूद्ध उपयोग में लाने हेतु एक सुलभ साधन हो गया । तब स एशियाइ समुदाय क प्रात अन्यायपूण कानूना का एशियवाटक विभाग ने अधिक सख्ती से लागू किया । गांधीजी का भ्रष्ट अधिकारियों से कोई व्यक्तिगत विद्वेष नहीं था । लेकिन उन्हें उनके काम करने का तरीका पंसद नहीं था और उन्होंने उनकी निंदा भी की । फिर भी ये प्राधिकारी अपने पक्ष में जो कुछ भी कहते गांधी जी उन्हें धैर्य से सुनते थे ।

शीघ्र ही ट्रांसवाल सरकार ने एशियाई लोगों के प्रवासन को रोकने की योजना बनाई । भारतीय वाशिंदों के पुनःपंजीकरण की योजना बनी । नये पंजीकरण कार्ड में धारक के हस्तारक्षर या अंगूठे के निशान लिये जाने थे । इसके साथ ही धारक का फोटो भी लगाना था । इस मामलें में भारतीय समुदाय सरकार से सहयोग करने के लिये सहमत ही नहीं हुआ था कि ट्रांसवाल सरकार ने 1906 में विधानसभा में एशियाटिक बिल नामक एक कुख्यात विधेयक पेश किया । यह विधेयक ट्रांसवाल में भारतीयों के अस्तित्व को ही संकट में डालने वाला था तथा कठोर पंजीकरण प्रक्रिया द्वारा उन्हें अपमानित करने का इरादा रखता था । विधेयक के प्रावधानों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि यह न केवल भारतीयों का अपितु उनकी मातृभूमि का

भी अपमान है । परिणामत: उन्होंने भारतीयों से इस विधेयक का विरोध करने तथा अपना सम्मान बनाये रखने की बात कही । साथ ही उनका विचार था कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीय समुदाय ने ऐसा कोई अपराध नहीं किया था जिसके लिए उनके साथ ऐसा दुर्व्यवहार हो । गांधी के अनुसार भारतीयों के साथ अन्याय हो रहा है और इसलिए उन्हें एशियाटिक बिल का विरोध करना चाहिये ।

पुराने एम्पायर थियेटर में एक बैठक आयोजित की गई जिसमें लगभग तीन हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया । वे सभी ट्रांसवाल के विभिन्न क्षेत्रों से थे । जो थोडे बहुत प्रस्ताव पारित हुए उनमें सबसे प्रमुख वह प्रस्ताव था जिसके अनुसार भारतीयों ने यह निर्णय लिया कि इस विधेयक के कानून बनने पर इसकी अनुपालना नहीं की जायेगी तथा इसका विरोध व अवहेलना करने पर जो भी परिणाम हों उन्हें भुगता जायेगा । एक पुराने साथी सेठ हाजी हबीब ने इस कानून का विरोध करने के लिये ईश्वर के नाम की शपथ लेने की बात कही । इससे प्रेरित होकर गांधीजी ने उपस्थित सभी साथियों से इस प्रकार की शपथ लेने के लिये कहा । लेकिन इससे पहले उन्होंने इस प्रकार की शपथ का आशय भलीभांति समझ लेने को कहा । उन्होंने उनसे कहा कि वे आत्मनिरीक्षण करें तथा यदि उनकी अन्तरात्मा उन्हें विधेयक का विरोध करने लायक साहस व बल दे तभी वे ईश्वर के नाम की शपथ लें । नेताओं से भी उन्होंने कहा कि वे भी शपथ लेने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि उनमें भी अडिग रहने की तत्परता व क्षमता है । साथ ही स्थानीय प्राधिकारियों से मिल कर अपनी परिवेदानाये प्रस्तुत कर उनका निदान पाने के प्रयास भी जारी रहे। 'इंडियन ओपिनियन' में एशियाटिक अध्यादेश के विभिन्न आपत्तिजनक प्रावधानों को उजागर करने सम्बन्धी लेख छापे गये, इसके अन्यायपूर्ण अमानवीय व अनैतिक आधार की निंदा की गई तथा भारतीय समुदाय के विरोध के औचित्य को सिद्ध करने का प्रयास भी किया गया ।

प्रारम्भ में इस आदोलन को 'निष्क्रिय' प्रतिरोध की संज्ञा दी गई किन्तु बाद में इसे अनुपयुक्त समझा गया और 'इण्डियन ओपिनियन' में आदोलन के लिये उपयुक्ता नाम सुझाने के लिये एक खुली प्रतियोगिता रखी गई । मदनलाल गांधी ने 'सत्याग्रह नाम सुझाया जिसका अर्थ है 'अच्छे कार्य के लिये दृढ़ता' । गांधी जी ने इस शब्द में सुधार करते हुए इसे 'सत्याग्रह कर दिया ।

भारतीय समुदाय के विरोध के बावजूद ट्रांसवाल विधानसभा ने विधेयक पारित कर ही दिया । तब भी गांधीजी व उनके साथी आशान्वित थे कि ब्रिटिश सम्राट इस विधेयक पर अपनी सहमति नहीं देगें । इस आशा के साथ उन्होंने अपना एक प्रतिनिधिमण्डल इंग्लैण्ड भेजा ताकि ब्रिटेन के प्रभावशाली लोगों को आवश्यक जानकारी दी जा सके । इंग्लैण्ड जाने के लिये गांधी व एच.ओ.अली को चुना गया । गांधी ने अपनी यात्रा के दो उद्देश्य घोषित किये:-

(i) उपनिवेशों के राज्य सचिव लार्ड एल्गिन से निवेदन करना कि सम्राट पंजीकरण अधिनियम को स्वीकृत न करें ।

(ii) बडे स्तर पर अवैध भारतीय अप्रवासन के आरोपों की जांच करने हेतु एक आयोग की नियुक्ति की मांग करना । इन्ही आरोपों को बहाना बनाकर पंजीकरण अधिनियम लाया गया था।

एक ज्ञापन तैयार कर लार्ड एल्गिन को दिया गया । गांधी व अली भारत के लिये राज्य सचिव श्री मोरली से तथा ' कुछ प्रमुख ब्रिटिश जैसे सर लेपल ग्रिफिन, सर डब्ल्यू, डब्ल्यू हंटर, रेडमंड आदि से मिले । दादाभाई नौरोजी से भी सम्पर्क किया गया और उनके माध्यम से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की ब्रिटिश समिति से सम्पर्क किया गया । कुछ निष्पक्ष व विख्यात पलों इण्डियन्स का सहयोग भी मांगा गया । यह भी तय किया गया कि एक स्थायी समिति बनाई जाये जिसमें वे सब जो भारतीय मुद्दों के संदर्भ में सहयोग कर सकें एक ही छतरी के नीचे आ जाये । इस प्रकार दक्षिण अफ्रीकी ब्रिटिश भारतीय समिति का गठन हुआ । डंग्लैण्ड में प्रतिनिधिमण्डल ने लोक जीवन के महत्वपूर्ण लोगों को बडी संख्या में परिपत्र व पर्चे भेजे ।

इंग्लैण्ड में छ: सप्ताह ठहरने के बाद गांधीजी दक्षिण अफ्रीका लौटे । लौटते समय उन्हें समाचार मिला कि लार्ड एल्गिन ने घोषणा की है कि वह ब्रिटिश सम्राट को सलाह देंगें कि वे एशियाटिक अध्यादेश पर जल्दबाजी में हस्ताक्षर न करें । भारतीय खुशी से फूले नहीं समा रहे थे किन्तु यह खुशी एक बुलबुले की तरह थी जो फूट गई । दक्षिण अफ्रीका का एक प्रसिद्ध अधिवक्ता व ट्रांसवाल उपनिवेश का प्रतिनिधि रिचर्ड सोलमन लार्ड एल्गिन से मिले । लार्ड एल्गिन ने उसे बताया कि जब तक ट्रांसवाल ब्रिटेन का उपनिवेश बना रहेगा सम्बन्धित बिल पर सम्राट की सहमति नहीं मिलेगी किन्तु जब ट्रांसवाल को जिम्मेदार सरकार का दर्जा मिल जायेगा और वह सरकार इस विधेयक को पारित कर देता है तो सम्राट उस पर हस्ताक्षर कर देंगे । इस प्रकार लार्ड एल्गिन ने दिखावे के तौर पर भारतीयों से मित्रता व समर्थन का नाटक किया पर वास्तव में उन्होंने ट्रांसवाल सरकार का समर्थन किया और जिस बिल को उसने स्वयं वीटो किया था उसी बिल को पारित करने के लिये प्रोत्साहित किया । गांधीजी ने इस कार्य को मुंह में राम बगल में छुरी माना । किन्तु इन सभी निराशाजनक स्थितियों के बावजूद गांधी जी अभी भी ब्रिटिश शासन को न्यायपूर्ण ही मानते थे । जिसमें बातचीत के जरिये परिवेदनाओं का निदान किया जा सकता था ।

लार्ड एल्गिन की सर रिचर्ड सोलमोन को दी गई सलाह से प्रोत्साहित होकर ट्रांसवाल की नई विधानसभा ने एशियाटिक पंजीकरण अधिनियम पारित कर दिया । तारीखों में परिवर्तन के अलावा इसमें सारे प्रावधान पुराने बिल के समान ही थे । नये बिल को 21 मार्च 1907 को आयोजित एक ही बैठक में पारित कर दिया गया और इसे 1 जुलाई 1907 से लाग घोषित किया गया । भारतीयों को पंजीकरण के लिये 31 जुलाई 1907 तक का समय दिया गया ।

अब चूंकि परिवेदानाओं का निदान संवैधानिक तरीकों से तो नहीं हो पा रहा था, सत्याग्रह संघर्ष आवश्यक हो गया था । संघर्ष को प्रभावी बनाने के लिये एक अलग एजेन्सी की आवश्यकता महसूस की गई । अत: निष्क्रिय प्रतिरोध संघ की स्थापना की गई । अन्तत: जब पंजीकरण हेतु परमिट दफ्तर खोले गये तो यह निश्चित किया गया कि इन दफ्तरों में धरना दिया जायेगा । परमिट दफ्तरों की ओर जाने वाली सडकों पर स्वयंसेवक खडे किये गये जो पंजीकरण कराये जाने वाले भारतीयों को पंजीकरण न करवाने के लिये निवेदन करेंगे । साथ ही उन्हें यह भी हिदायत दी गई कि जो भारतीय निवेदन के बावजूद पंजीकरण करवाना ही चाहते हैं उन्हें जोर जबरदस्ती से न रोका जाये । इसके स्थान पर स्वयंसेवक पर्चे बाँटे थे जिनमें काले अधिनियम से होने वाली हानि का वर्णन था । गांधी ने बल दिया कि वे प्रत्येक व्यक्ति के

साथ सम्मानजनक व्यवहार करे चाहे वह सरकारी प्राधिकारी ही क्यों न हो । ऐसे व्यवहार करते वक्त प्राधिकारी यदि उनके साथ दुर्व्यवहार भी करें तो उसे भी गांधी ने चुपचाप सहने को कहा । इस दौरान 'इंडियन ओपिनियन' के माध्यम से भारतीय समुदाय तथा उसके कठिन संघर्ष 'के बारे में महत्वपूर्ण समाचार दक्षिण अफ्रीका, इंग्लैण्ड व भारत की जनता तक पहुंचते रहे । सत्याग्रह के संदर्भ में किसी के विचार चाहे जो भी रहे हों 'इंडियन ओपिनियन' एक खुली किताब की तरह था जिससे वह भारतीय समुदाय की कमजोरी व ताकत का आकलन कर सकता था । आंदोलन में खुलापन को आवश्यक माना गया ।

गांधीजी ने कहा कि आंदोलन में गोपनीयता का कोई स्थान नहीं है और कोई गलत काम नहीं किया जाएगा और इसमें दोहरेपन या धूर्तता का कोई स्थान नहीं होगा । कमजोरी तथा उन्मूलन करना गांधी ने आवश्यक माना और सही ढंग से पहचानने तथा दूर करने पर बल दिया गया । जब प्राधिकारियों ने देखा कि इण्डियन ओपिनियन की यह नीति हे तो उनके लिये यह पत्र भारतीय समुदाय के तत्कालीन इतिहास का सच्चा दर्पण बन गया ।

जैसे ही पंजीकरण की अन्तिम तिथि समीप आ रही थी, जिन्होंने पंजीकरण नहीं करवाया था उनके पास कोर्ट के आदेश आने लगे और उन्हें एक सप्ताह या एक पखवाडे में देश छोडने का आदेश दिया गया । जब इन आदेशों की पालना नहीं हुई तो प्राधिकारियों ने दोषीयों को जेल में डालना शुरू किया । जब जेल सत्याग्रहियों से भरने लगे और सत्याग्रही अपने निश्चय पर अटल रहे कि वे इस अधिनियम को कदापि स्वीकार नही करेंगे तो ऐसी स्थिति में सरकार थोड़ा झुकी और भारतीय समुदाय के साथ बातचीत के जरिये समझौता करने का प्रयास किया गया ।

एल्बर्ट कार्टराइट जो 'ट्रांसवाल लीडर' नाम के समाचार-पत्र के सम्पादक थे, उन्हें सरकार व भारतीय समुदाय के बीच मध्यस्थ बना दिया गया । अन्ततः गांधीजी व जनरल स्मट्स मिले तथा एक समझौता फार्मूला पर सहमत हुये जिसके अनुसार स्मट्स ने वादा किया कि जैसे ही अधिकांश भारतीय स्वैच्छिक पंजीकरण करवा लेंगे काले अधिनियम को जनरल बोथा की सरकार वापिस ले लेगी । जनरल स्मट्स ने विश्वास दिलाया कि ऐसे प्रत्येक पंजीकरण को वैध घोषित किया जायेगा।

गांधीजी का तर्क था कि सरकार बिना वहां की प्रजा के सहयोग के उन पर नियंत्रण नहीं कर सकती । गांधीजी का तर्क था कि एक सत्याग्रही कानून की पालना करके जो सहयोग करता है वह सजा के डर से नहीं अपितु यह सोच कर करता है कि इसमें जनहित निहित है । भारतीयों ने स्वेच्छा से अपना पंजीकरण इस आशा एवं विश्वास से कराया था कि ऐसा करने पर काला अधिनियम वापिस ले लिया जायेगा । लेकिन जनरल स्मट्स की कार्यवही ने उनकी आशाओं पर पानी फेर दिया । उसने न केवल काले अधिनियम को संवैधानिक अपितु विधानमण्डल में ऐसे प्रस्ताव भी रखे जिससे ट्रांसवाल में नये आने वाले सभी भारतीयों के लिये आधिनियम के प्रावधानों के अनुसार पंजीकरण आवश्यक कर दिया गया ।

गांधीजी ने फिर एक बार नई स्थिति पर चर्चा करने के लिये अपने भारतीय साथियों के साथ बैठक आयोजित की । उन्होंने जनरल स्मट्स को पत्र लिखा, कुछ प्रभावशाली अंग्रेजों से चर्चा की, नवीनतम स्थिति पर इंडियन ओपिनियन में धारावाहिक लेख लिखे गए और भारतीयो

की ओर से सरकार को याचिकायें पेश की गई । जब इन संवैधानिक साधनों से अपेक्षित परिणाम नहीं निकले तो उन्होंने सरकार को अंतिम चेतावनी दी कि वे सभी भारतीयों के पंजीकरण प्रमाण पत्रों को एकत्रित कर उनकी होली जला देगें यदि अमुक तारीख तक एशियाटिक अधिनियम वापिस नहीं लिया जाता । यह भी घोषित कर दिया गया कि ऐसा करने के जो भी परिणाम होगें वे भुगतने के लिये तैयार है ।

जब अंतिम चेतावनी की तिथि निकल गई फिर एक बैठक आयोजित की गई और सभी पंजीकरण प्रमाणपत्र को एकत्रित किया गया तथा बैठक स्थल के एक कोने में उनकी होली जला दी गई । यह बैठक 16 अगस्त 1907 को जान्सबर्ग में स्थित हमीदिया मस्जिद में आयोजित हुई । यह भी निश्चिम हुआ कि सत्याग्रह संघर्ष में ट्रांसवाल अप्रवासी प्रतिबन्ध विधेयक का विरोध भी शामिल किया जायेगा जिसमें उन सभी अप्रवासियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था जो शिक्षा परीक्षा तो उत्तीर्ण कर चुके थे किन्तु एशियाटिक अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकरण के लिये अयोग्य थे । यह अधिनियम भारतीय समुदाय के अधिकारों पर एक नया कुठाराघात था तथा इसे भी उसी मंशा से बनाया गया था जिससे एशियाटिक अधिनियम को बनाया गया । लेकिन गांधीजी अपने कुछ साथियों के दृष्टिकोण से सहमत नहीं थे जो मांग कर रहे थे कि ट्रांसवाल के सभी भारत विरोधी विधानों के विरूद्ध समान व्यवहार किया जाये । कुछ साथियों का सुझाव था कि दक्षिण अफ्रीका के सभी भारतीयों को संघटित कर सभी उप निवेशों में भारत विरोधी विधानों के विरूद्ध एक साथ सत्याग्रह अभियान चलाया जाये । गांधीजी इसके भी पक्ष में नहीं थे । गांधी ने सत्याग्रह संघर्ष में अवसरवादिता की निंदा की और इस बात पर बल दिया कि सत्याग्रह आंदोल जिस मुद्दे को लेकर शुरू किया जाये, उस पर बने रहना चाहिये । फिर भी उन्होंने ऐसे किसी मुद्दे को शामिल करने का रास्ता खुला रखा जो विरोधियों द्वारा संघर्ष के दौरान नई मुश्किलें पैदा करने के प्रयासों से उपजे हों । ट्रांसवाल आप्रवासन प्रतिबन्ध विधेयक करने के लिये, यह तय किया गया कि ट्रांसवाल में भारतीय एक एक करके या समूह में प्रवेश करेंगे व नये कानून का उल्लंघन करेगें । दाउद सेठ के नेतृत्व वाला समूह जब ट्रांसवाल में प्रवेश कर रहा था तो उसे गिरफ्तार कर लिया गया तथा सभी को मजिस्ट्रेट के सम्मुख प्रस्तुत किया गया । मजिस्ट्रेट ने सभी को आदेश दिया कि वे एक सप्ताह के अन्दर ट्रांसवाल छोड दें । आदेश की पालना करने के बजाये समूह प्रिटोरिया की ओर बढ़ा जहां उनहें फिर गिरफ्तार कर लिया गया । वहां उनहें यह सजा सुनाई गई कि या तो वे पचास पाउंड का जुर्माना भरें या तीन माह का कठोर कारावास भुगते । समूह ने खुशी खुशी जेल जाने का रास्ता चुना । बिना लाइसेंस के फेरी लगाकर या ट्रांसवाल में प्रवेश करने पर अपना पंजीकरण प्रमाण पत्र न दिखा कर नेटल के भारतीयों ने ट्रांसवाला के साथियों का साथ दिया । जेल भरे जाने लगे और भारतीय कैदियों को परेशान करने के हर संभव प्रयास किये गये । जब सरकार ने देखा कि गिरफ्तारी की धमकी से भारतीय हतोत्साहित नहीं हो रहें है और उनका ट्रांसवाल में आना या बिना लाइसेंस के फेरी लगाना जारी है, तो सरकार ने भारतीयों को अपने देश भेजना शुरू किया । इससे भारत में हंगामें की स्थिति हो गई और भारतीय सरकार ने कानून बनाकर अनुबंधित मजदूरों को नेटल की ओर देशांतरण पर रोक लगा दी । अन्ततः ट्रांसवाल सरकार को मजबूरन सत्याग्रहियों को भेजना बद करना पडा । यधपि जेल में हालात बडे विकट व कठोर हो गये थे,

तथापि सत्याग्रहियों ने इनको साहस और दृढ़ निश्चय से सहन किया । किन्तु जैसे ही संघर्ष खिंचता चला गया, सरकार यह जान चुकी थी गिरफ्तारी या निर्वासन से सत्याग्रहियों के उत्साह को भंग नहीं किया जा सकता । भारतीय भी इस स्थिति में नहीं थे कि वे मजबूत लडाई लड़ सकें । सरकार कुछ मामलें अदालत में ले गई थी जो वह हार गई । उधर भारतीय थके हुए थे व उत्साहहीन थे ।

1.7 दक्षिण अफ्रीका संघ और सत्याग्रह की प्रगति

दक्षिण अफ्रीकी संघ के निर्माण के प्रयास जारी थे । भारतीयों ने एक प्रतिनिधिमण्डल इंग्लैण्ड भेजा ताकि दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीयों के मूल अधिकारों की प्राप्ति व सुरक्षा की मांग की जा सके । जुलाई 1909 में गांधी एक बार फिर लंदन आये ताकि ट्रांसवाल विधानमण्डल के सम्बन में शाही दबाव डलवाया जा सके । लेकिन इस बार वे पूर्व की तरह आशावादी नहीं थे । प्रतिनिधिमण्डल की असफलता के अंदेशे के कारण उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में चल रहे सत्याग्रह संघर्ष पर ही भरोसा किया । लंदन में प्रतिनिधिमण्डल ने लार्ड एम्प्टिहल समिति के निर्देशन में कार्य किया ।

गांधी के लिये राहें आसान नहीं थी । एक तरफ तो उच्च प्राधिकारियों को प्रभावित करना टेढी खीर था । दूसरी तरफ उनपर ऐसे आरोप भी लग रहे थे कि दक्षिण अफ्रीकी आंदोलन को भारत में काम कर रही क्रांतिकारी व राजद्रोही आर्थिक सहयोग दे रहे हैं । अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिये बुलाये जाने पर गांधी ने कहा, ' 'माफ करें, मै यहां ऐसे किसी भारतीय को नहीं जानता हूँ न तो दक्षिण अफ्रीका में न भारत में, जो मुझसे अधिक सतत् व निर्भीक रूप से राजद्रोह के विरूद्ध हो । मेरा धर्म यह कहता है कि मेरा राजद्रोह से कोई वास्ता नहीं, चाहे इसके लिये मेरी जान ही क्यो न चली जाये । अधिकांश भारतीयों व एंग्लो इण्डियन्स ने बम फैकने और हिंसक गतिविधियों की निन्दा की है । ट्रांसवाल का आंदोलन जिससे मैने अपना नाम जोड़ रखा है, ऐसे किसी भी तरीके के स्पष्ट रूप से खिलाफ है । निष्क्रिय प्रतिरोध का परीक्षण ही यही है कि स्वयं कष्ट सह लें पर दूसरों को कष्ट न दें । अत: भारत में या अन्य कहीं से किसी राजद्रोह वाले दल से एक पैसा भी लेने का प्रश्न ही नहीं है । अगर लेने का प्रस्ताव भी होता तो सिद्धान्तत: हम उसे अस्वीकृत कर देते । " भारत मे हिंसा करने वाले दल को दक्षिण अफ्रीकी भारतीय आदोलन के माध्यम से गांधी दिखलाना चाहते थे कि ऐसे दल गलत राह पर हैं । हिंसा पर भरोसा रख कर उन्हें कुछ भी हासिल नहीं होने वाला । इन सभी कठिन प्रयासों के बावजूद गांधी की प्रतिनिधिमण्डल की लंदन में सफलता के सम्बन्ध में निराशा सही साबित हुई ।

भारतीय प्रतिनिधिमण्डल की असफलता के बारे में गांधी द्वारा की गई भविष्यवाणी आधारहीन नहीं थी । ब्रिटेन में उनके कटु अनुभव, बढती मोहभंग की स्थिति व स्वयं के आध्यात्मिक विकास के कारण उन्हें आधुनिक सभ्यता की बुराईयां स्पष्ट नजर आने लगी थी । वे मानते थे कि ब्रिटेन आधुनिक सभ्यता के कुचक्र में फंस चुका है । अब वह अपने ओपनिवेशक हितों को नहीं छोड़ सकता । उससे खुलेपन, रचनात्मक व मानवीयता की अपेक्षा करना बेकार है ।

गांधी द्वारा आधुनिक सभ्यता पर प्रहार उनकी पुस्तक 'हिन्द स्वराज या इण्डियन होम रूल' के रूप में सामने आया । यह पुस्तक उन्होंने 1909 में लंदन से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज में लिखी । इसमें उनका निष्कर्ष था कि भारत अंग्रेजों के पैरों के नीचे नहीं अपित आधुनिक सभ्यता के पैरो के नीचे कुचला जा रहा है ।

इस प्रकार यह मानते हुये कि भारतीय स्वतंत्रता का वास्तविक शत्रु आधुनिक सभ्यता है, गांधी ने आधुनिक सभ्यता से जुडी समस्त वस्तुओं को त्यागने की वकालत की । उनका मानना था कि भारत से ब्रिटिश को भगा देने मात्र से तत्कालीन भारत की बीमारियों से निजात नहीं मिलेगी । गांधी ने माना कि आधुनिक सभ्यता के सांस्कृतिक खतरे से प्रभावपूर्ण तरीके से निपटने के लिये एक ही तरीका हैं - भारतीयों में व्यक्तिगत नवजीवन का संचार जिसका अर्थ हे भारतीय परम्परा के आध्यात्मिक मूल्यों को आत्मसात करना । ऐसी विधि से ही भारत अपनी खोई हुई आभा व वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है । ब्रिटिश दासता से भारत को मुक्त कराने का हिंसा या ऐसा कोई और रास्ता नहीं हो सकता ।

इस दौरान दक्षिण अफ्रीकी संघ अस्तित्व में आया और 1913 में एक नया संकट उत्पन्न हो गया । दक्षिण अफ्रीका के सर्वोच्च न्यायालय ने सर्ल केस में निर्णय देते हुए केवल ईसाई विवाह को ही दक्षिण अफ्रीका में वैध करार दिया । किसी भी अन्य पारम्परिक पद्धति से हुए विवाह को दक्षिण अफ्रीका में अमान्य कर दिया गया । परिणामस्वरूप, गैर ईसाई परम्परा से विवाहित महिलायों को अवैध पत्नी का दर्जा दे दिया गया । जिससे उनके बच्चों का पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार समाप्त कर दिया गया । गांधी ने सरकार को पत्र लिखकर पूछा कि क्या वह सर्ल के फैसले के अनुसार ही चलेगी या कानून में संशोधन करके भारत में वैधानिक माने जाने वाले वैधानिक पद्धतियों को भी मान्यता प्रदान करने का इरादा रखती है । शीघ्र ही भारतीय समुदाय ने एक बैठक आयोजित की जिसमें यह चर्चा रखी कि फैसले के विरूद्ध अपील की जाये अथवा नहीं । यह तय हुआ कि दावा करने का विचार फिलहाल छोड दिया जाये । क्योंकि स्पष्ट प्रतीत होता था कि सरकार ऐसे अपमानजनक मामलें में पीडित पक्ष का साथ नहीं देगी । सत्याग्रह अभियान ने एक बार फिर जोर पकडा । अब महिलायें भी इस सघर्ष में शामिल हुई । उन्होंने बिना अनुमति ट्रांसवाल में प्रवेश किया । लेकिन सरकार ने भी जानबूझ कर उन्हें गिरफ्तार नहीं किया । तब उन्होंने नारेबाजी शुरू की । तब भी सरकार ने उनकी उपेक्षा की । उसे आशा थी कि इससे आंदोलन कमजोर पड जायेगा । इस चुनौती का सामना करने के लिये यह तय किया गया कि फिनिक्स में बचे हुये सदस्य जिन्में अधिकांश महिलायें थी, ट्रांसवाल में प्रवेश करेगें व गिरफ्तारी देगें । साथ ही वे महिलायें जो ट्रांसवाल प्रवेश कर चुकी है पर गिरफ्तार नहीं हुई, वे अब नेटल में प्रवेश करेगी और न्यूकासल कोयला खदान में जायेंगी और यदि तब भी गिरफ्तार नहीं होती है तो वे अनुबंधित भारतीय मजदूरों को हडताल पर जाने के लिये निवेदन करेंगी । जब फिनिक्स सदस्य सीमा पार कर रहे थे और उन्होंने पुलिस को अपनी पहचान बताने से मना कर दिया तब उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और अदालत ने उन्हें तीन माह का कठोर कारावास की सजा सुनाई । इस दोरान महिला दल ने नेटल में प्रवेश किया और न्यूकासल जाकर मजदूरों से हडताल पर जाने की अपील की । जैसे ही महिलाओं ने सरकार की ज्यादतियों की करूण गाथा सुनाई, मजदूर प्रभावित हो गये व

उन्होंने हडताल पर जाने का निश्चय कर लिया । महिलाओं की गिरफ्तारी वे बाद में जेल में उनके साथ हुये जुल्मों की खबरों ने दक्षिण अफ्रीका व भारत में रह रहे भारतीयों के दिलों में आहत कर दिया ।

न्यूकासल कोयला खान मजदूरों ने अपना काम छोडा व सत्याग्रह संघर्ष में शामिल होने का निश्चय किया । उन्होंने अपने मालिकों के जुल्मों को भी बहादुरी से सहा । गांधी न्यूकासल पहुंचे और उन्हें सलाह दी की वे अपनी बेडियों से मुक्त हों और सत्याग्रह संघर्ष में भाग लें । यह योजना बनी कि सत्याग्रहियों की सेना जिसमें लगभग पाँच हजार कार्यकर्ता होगें; ट्रांसवाल सीमा को पार करेगी । जब इस कूच की तैयारी चल रही थी, गांधी को खदान मालिकों की ओर से मामला सुलझाने के लिये मिलने का निमंत्रण मिला । अत: वे डरबन के लिये रवाना हुये । उन्होंने उनसे कहा कि वे अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके सरकार से कहे कि तीन पाउंड टैक्स वापिस ले लें । लेकिन इस मुलाकात के कोई उल्लेखनीय लाभ नहीं मिलें । अन्तत: सैनिकों की कूच शुरू हुई । गांधी ने समस्या हल करने के बहुत प्रयास किये किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ । उन्हें दो बार गिरफ्तार किया गया लेकिन दोनों बार उन्हें जमानत पर छोड़ दिया गया । गांधी जैसे व्यक्ति की गिरफ्तारी से भी सत्याग्रहियों का' उत्साह कम नहीं हुआ । उनके अहिंसा व दृढ़ निश्चय ने सरकार को मजबूर किया कि वह उन्हें रोकने क लिये कार्यवाही करें अन्यथा अपना असफलता के लिये अंग्रेज जनता के सामने अपमानित होना पडेगा । छत्तीस मील की आठ दिन लम्बी चलने वाली कूच के चौथे दिन गांधी को तीसरी बार गिरफ्तार कर लिया गया ।

इस दौरान कूच कर रहे सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करने की तैयारियां भी चल रही थी । उन पर मुकदमें चलाये गये व उन्हें जेल भेजा गया । कोयला खदान क्षेत्रों को बाहरी जेल घोषित कर दिया गया । और गिरफ्तार सत्याग्रहियों को उनमें काम करने के लिये मजबूर किया गया । काम करने से मना करने वालों पर जुल्म ढाये गये । इन जुल्मों के समाचार प्रेस व जेल के बाहर लोगों द्वारा दूर दूर तक पहुंचाये गये । भारत में दक्षिण अफ्रीका की समस्या सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया । वायसराय लार्ड हार्डिन्ज ने सरकार की कार्यविधि की कडी आलोचना की और सत्याग्रहियों को उचित ठहराया । अन्य अनुबन्धित भारतीय मजदूरों ने जब आपने भाई- बन्धुओं के साथ अमानवीय व्यवहार की बातें सुनी तो उन्होंने भी सत्याग्रह संघर्ष में कूद पड़ने का निश्चय किया । अब सरकार ने भारतीयों को काम पर लौटने के लिये मजबूर करने के लिये बल प्रयोग करने की ठान ली । इससे सरकार के विरूद्ध जनमत और प्रबल हो गया । हर तरफ से दबाव पडने पर अन्तत: यह निश्चित हुआ कि तीन सदस्य आयोग नियुक्त होगा जो भारतीय मांगों पर विचार करेगा और गतिरोध समाप्त करने के लिये उपयुक्त सुझाव देगा । इस समिति में भारतीय तो एक भी नहीं था पर साथ ही तीन में से दो व्यक्ति तो भारत विरोधी विचार रखने के लिये कुख्यात थे । अत: भारतीय समिति ने सरकार के सम्मुख अपना विरोध दर्ज कराया और तो और अधिकांश सत्याग्रही तो अभी भी जेल में थे और उनकी रिहाई की भी मांग की गई । लेकिन जब सरकार ने इन मामलों पर ध्यान नहीं दिया तो गांधी अपनी योजनानुसार आगे बढ़े ।

गांधी ने एक बार फिर सत्याग्रह कूच की तैयारियां शुरू की । इस दौरान संघीय रेल्वे के यूरोपियन कर्मचारियों ने हडताल पर जाने की योजना बनाई । जब गांधी से कहा गया कि

भारत कूच उसी समय शुरू करें जब रेल्वे की हडताल हो, उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया । उन्होंने कहा कि सत्याग्रह आंदोलन सरकार को परेशान करने वाले किसी समूह के साथ नहीं हैं ऐसी विनम्रता व अहिंसा से युक्त श्रेष्ठ कार्यो के कारण तथा अन्य दबावों के रहते अन्ततः गतिरोध निवारण के लिये अनुकूल वातावरण तैयार हो गया । जनरल स्मट्स व गांधी के बीच चली वार्ताओं के दौर में एक अन्तरिम समझौता हुआ जिसमें यह सहमति हुई कि सरकार केद सत्याग्रहियों के विरूद्ध मामलें समाप्त कर देगी और भारतीयों की समस्याओं के सम्बन्ध में गठित आयोग के सुझावों के मामलें में आवश्यक कार्यवाही करेगी जिससे भारतीय समुदाय की परिवेदानाओं के निराकरण के सम्बन्ध में कुछ किया जाये । इधर सत्याग्रही अपना आदोलन स्थगित करेगें और आयोग के मूल प्रस्तावित सदस्यों को स्वीकार करेगें तथा उसके कार्य में कोई रूकावट पैदा नहीं करेगें ।

आयोग ने अपनी जाँच पूरी की । अन्य बातों के अतिरिक्त उसने तीन पाऊंड टैक्स समाप्त करने, भारतीय परम्परा से हुये विवाह को मान्यता देने, व कुछ अन्य लाभ देने की बात कही । इस रिपोर्ट के जारी होने के कुछ समय बाद ही, संसद में इंडियन रिलीफ बिल प्रस्तुत हुआ । इसमें तीन पाऊंड टैक्स, विवाह, मूल निवास आदि के सम्बन्ध में भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं को कम करने की बात थी । प्रशासनिक मामलें, जो इंडियन रिलीफ बिल के अन्तर्गत नहीं आये उनका निराकरण जनरल स्मट्स व गांधी के बीच हुये पत्र व्यवहार से कर लिया गया । इस प्रकार सत्याग्रह का महान संघर्ष आठ वर्षो में समाप्त हुआ और गांधी ने दक्षिण अफ्रीका छोडकर भारत आने का निश्चय किया । वे 18 जुलाई 1914 को दक्षिण अफ्रीका से रवाना हुये तथा लंदन होते हुये 9 जनवरी 1915 को भारत पहुंचे ।

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में गांधी की सक्रियता यह बतलाती है कि किस प्रकार गांधी ने सुव्यवस्थित तरीके से भारतीय समुदाय की समस्याओं का हल खोजा । उन्होंने भारतीय समुदाय से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया तथा नेटल भारतीय कांग्रेस का गठन कर इसकी नियमित बैठकें आयोजित की । इससे भारतीय समुदाय में यह जागृति आई कि किस प्रकार जन प्राधिकारी उनके साथ अन्यायपूर्ण, अमानवनीय व उपेक्षापूर्ण व्यवहार करते है । साथ ही हम यह भी देखते है कि किस प्रकार गांधी ने एक मंच बनाने में मदद की जहां से दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशों की सरकारों द्वारा अपनाई जा रही प्रजातीय नीतियों के विरोध व असंतोष के स्वर दिया जा सके । इन प्रयासों से दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीय समुदाय के भिन्न-भिन्न तत्वों को एकीकृत करने में भी मदद मिली । भारतीय समुदाय के बाहर के व्यक्तियों से सम्पर्क का उपयोग उन्होंने इस प्रकार किया कि प्राधिकारियों से भारतीय समुदाय की शिकायतों को कम करने हेतु कुछ अनुकूल निर्णय करवायें । साथ ही उन्होंने भारतीय समुदाय के विरोध को औचित्यपूर्ण सिद्ध करते हुये उनके लिये सहानुभूति बटोरने का प्रयास भी किया । उनके ऐसे निकटस्थ व दीर्धकालीन सम्पर्को में सफलता के दो कारण थे-उनका व्यक्तिगत चरित्र व वकालत के व्यवसाय में उनके द्वारा सीखे गये सबक । प्यारेलाल लिखते है "वकालत करते हुए गांधीजी ने मानव स्वभाव के बेहतर पक्ष को जाना और लोगों के दिलों में प्रवेश करने की कला सीखी । इसने उन्हें सच्चे समझौते के अर्थ और श्रेष्ठता के बारे में सिखाया । गांधी के हाथों में यह व्यवसाय पारस्परिक तालमेल का एक शक्तिशाली हथियार बन गया और इसका सामुदायिक सेवा

के लिये श्रेष्ठ उपयोग हुआ । उन्होंने कभी भी अपने कानूनी ज्ञान का विजय हासिल करने के लिये उपयोग नहीं किया अपितु वे तो समानता व न्याय के आधार पर दोनों पक्षों को साथ मिलाने का प्रयास करते थे । "

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका जाने से पूर्व गांधीजी को अश्वेत व्यक्ति के जीवन से जुडे प्रजातीय कलंक के बारें में जानकारी नहीं थी । अपने आगमन के कुछ ही दिनों के अन्दर उन्हें अनेक अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पड़ा । इन अपमानजनक स्थितियों के अनुभवों से उनका दृढ़निश्चय बढ़ा कि उन्हें हटाना है । यह काम उन्हें स्वयं के लिये नहीं अपितु पूरे भारतीय समुदाय के हित में करना था जो इन अपमानों का शिकार था । अच्छी वकालत चल रही थी, स्वयं के भौतिक उन्नयन के प्रयास चल रहे थे किन्तु गांधी इनसे उपर उठ कर जन सक्रियता के क्षेत्र में आ गये जहां उन्होंने सामान्य व्यक्तिव व भारतीयों के सम्मान की रक्षा कार्य कें लिये कार्य किया । बाद में उन्होंने परहितार्थ कार्य किये जिनमें कई वर्गो के लोग उनके साथ जुड़े । उनका मानना था कि जनसक्रियता के साथ-साथ होगा । भारतीयों को स्वयं भी पूर्णत: दोषमुक्त बनना होगा - आत्मा व शरीर की चिनताओ से ऊपर उठकर उन्हें सामाजिक हित व आध्यात्मिकता के बारे में सोचना होगा ।

1.8 सारांश

जैसे गांधी आध्यामिक उद्विकास की दिशा में आगे बढे और प्रजातीवाद के विरूद्ध संघर्ष में शामिल होते गये, उनके राजनीतिक दर्शन का क्षेत्र भी परिपक्व होता गया । अन्होंने प्रजातिय पूर्वाग्रह की नैतिक आधार पर निंदा की ओर जनकार्यकर्ता के रूप में दक्षिण अफ्रीका की स्थानीय सरकारों के विषय में खुल कर अपने विचार प्रकट किये । उन्होंने उनकी भेदवावपूर्ण व अन्यायपूर्ण नीतियों की आलोचना की और उन्होंने इस बुराई के विरूद्ध भारतीय समुदाय को इकट्ठा करने का प्रयास किया । उन्होंने परिवेदनायें व्यक्त करने व उनके निराकरण मांगने के लिये उपलब्ध साधनों का भरपूर प्रयोग किया । चूंकि स्थानीय सरकारें अडियल थी, गांधी के नेतृत्व में भारतीय समुदाय व स्थानीय सरकारों के बीच आमना सामना अपरिहार्य था । इस झगडे का परिणाम सत्याग्रह के जन्म के रूप में हुआ । सत्याग्रह का दर्शन व सक्रियता महात्मा गांधी का इस संसार को एक महत्वपूर्ण योगदान है ।

1.9 अभ्यास प्रश्न

1. दक्षिण अफ्रीका में अश्वेतों द्वारा झेली गई अन्यायपूर्ण स्थितियों के बारे में लिखें ।
2. गांधीजी के साथ हुये अन्यायपूर्ण व्यवहार की विभिन्न घटनायें लिखें ।
3. दुर्व्यवहार की घटनाओं पर गांधीजी ने किस प्रकार प्रतिक्रिया व्यक्त की ।
4. दक्षिण अफ्रीकी संघ के गठन के बाद गांधीजी की भूमिका व सक्रियता के बारे में चर्चा कीजिये

1.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. एम.के.गांधी, सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, अनु. वी.जी देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1972

2. क्लैक्टिड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी, पब्लिकेशन विभाग सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1961
3. प्यारेलाल, महात्मा गांधी, दी अर्ली फेस, भाग- 1, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1965

इकाई - 2

भारत : चम्पारण सत्याग्रह से भारत छोडो आन्दोलन तक

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 चम्पारण सत्याग्रह

- 2.2.1 चम्पारण समस्या की प्रकृति
- 2.2.2 गांधी के विचार एवं कार्य
- 2.2.3 चम्पारण सत्याग्रह का महत्व

2.3 खेड़ा सत्याग्रह

- 2.3.1 कारण
- 2.3.2 गांधी के विचार एवं कार्य
- 2.3.3 महत्व

2.4 अहमदाबाद मिल सत्याग्रह

- 2.4.1 कारण
- 2.4.2 गांधी का योगदान
- 2.4.3 महत्व

2.5 रोलत सत्याग्रह

- 2.5.1 सत्याग्रह के कारण व प्रगति
- 2.5.2 महत्व

2.6 असहयोग आंदोलन

- 2.6.1 आंदोलन के कारण व प्रगति
- 2.6.2 असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम
- 2.6.3 आंदोलन में गांधी की भूमिका व कार्ययोजना
- 2.6.4 आदोलन का महत्व

2.7 बारदोली सत्याग्रह

- 2.7.1 बारदोली सत्याग्रह के लिये उत्तरदायी कारण
- 2.7.2 बारदोली सत्याग्रह की प्रगति
- 2.7.3 गांधी की कार्ययोजना
- 2.7.4 सत्याग्रह की प्रगति
- 2.7.5 सत्याग्रह की महत्व

2.8 सविनय अवज्ञा आंदोलन

2.8.1 सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण
2.8.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति
2.8.3 आंदोलन का महत्व
2.8.4 सविनय अवज्ञा आंदोलन का पुनर्त्थान व प्रगति
2.9 वाइकोम सत्याग्रह
2.9.1 वाइकोम सत्याग्रह के उद्देश्य
2.9.2 आंदोलन की कार्य योजना व प्रगति
2.9.3 वाचकों सत्याग्रह में गांधी का नेतृत्व
2.9.4 सत्याग्रह का महत्व
2.10 भारत छोड़ो आंदोलन
2.10.1 भारत छोड़ो आंदोलन के कारण
2.10.2 आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गांधी की भूमिका
2.10.3 आंदोलन का महत्व
2.11 सारांश
2.12 अभ्यास प्रश्न
2.13 संदर्भ ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात गांधी द्वारा भारत में सम्पन्न किये गये विभिन्न सत्याग्रह के बारे में निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकेगे :-

- चम्पारण सत्याग्रह के कारण, गांधी के विचार एवं कार्य
- खेडा सत्याग्रह के कारण, गांधी के विचार एवं कार्य
- अहमदाबाद सत्याग्रह कारण, गांधी के विचार एवं कार्य
- रोलत सत्याग्रह के कारण, प्रगति, महत्व व उसमें गांधी की भूमिका
- असहयोग आन्दोलन कारण, गांधी के विचार एवं 'कार्य
- बारदोली सत्याग्रह कारण, गांधी के विचार एवं कार्य
- सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कारण गांधी के विचार एवं कार्य
- वायक्म सत्याग्रह कारण गांधी के विचार एवं कार्य
- भारत छोड़ो आन्दोलन के कारण, गांधी के विचार एवं कार्य

2.1 प्रस्तावना

दक्षिण अफ्रीका में भारतीय मूल के लोगों की समस्याओं का समाधान करके गांधी 9 जनवरी 1915 को भारत लौटे । पहुँचने के पश्चात जब वे अपने राजनीतिक गुरू गोखले से मिले तो उन्होंने गांधी को कहा कि वे सक्रिय भारतीय राजनीति में आने से पूर्व अपने आप को भारतीय समस्याओं और परिस्थितियों से भली-भाँति परिचित कर लें । गांधी ने अत: एक साल

के लिए अपने आप को इस ध्येय के लिए समर्पित कर दिया । उन्होंने भारत का भ्रमण किया और अनेक लोग, जनप्रतिनिधि तथा विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं में कार्यरत लोगों से मिले । उन्होंने अहमदाबाद में सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की तथा अनेक समारोह में भाग लिया परन्तु गोखले को दिए हुए वचनानुसार विवादास्पद राजनीक विचारों पर चुप्पी साधी । एक साल का समय जैसे-जैसे समाप्त होने को आया तो गांधी ने भी अपनी चुप्पी तोड़ी और राजनीतिक विषयों पर अपना मत सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करने लगे । अपने आप को सार्वजनिक कार्य के लिए समर्पित करने का मौका गांधी को 1916 में चम्पारन समस्या ने प्रदान किया ।

2.2 चम्पारण सत्याग्रह

2.2.1 चम्पारण समस्या की प्रकृति

बिहार स्थित चम्पारन जिला में कृषकों को नील की खेती से सम्बन्धित अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था । 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में चम्पारन में नील की खेती तथा उधोग का प्रारम्भ हुआ । यूरोपीय उत्पादक जो नील उधोग से जुड़े थे उनके दबाव में आकर वही 'तीन कथिया व्यवस्था' अपनाया गया जिसमें कृषकों को अनिवार्य रूप से अपने खेत में कम से कम 20 प्रतिशत कृषि नील उत्पादन के लिए रखना था । नील उद्योग से जुडे यूरोपीय लोग अथवा उनके प्रतिनिधि कृषकों द्वारा उत्पादित नील को बहुत सस्ते दाम में खरीदते थे और भारतीय कृषकों का अनेक तरीके से शोषण करते थे जिसमें उन्हें अक्सर सरकार की मदद भी मिलती थी । जैसे-जैसे प्राकृतिक नील को अप्राकृतिक नील ने हटाना प्रारम्भ किया तो यूरोपीय लोग जो इस उद्योग से जुड़े हुए थे उन्होंने इस तरह की परिस्थिति में भी अपने स्वार्थपूर्ति हेतु भारतीय कृषकों का नए-नए प्रकार से शोषण करना प्रारम्भ किया । कुल मिलाकर भारतीय कृषकों की स्थिति बहुत ही खराब थी ।

तभी राजकुमार शुक्ला नाम के एक अमीर ब्राह्मण कृषक जो चम्पारण निवासी थे गांधी के पास आए और उनसे चम्पारण चलकर दक्षिण अफ्रीका की तरज पर चम्पारण के कृषकों की समस्याओं को दूर करने की गुहार की । इस तरह गांधी ने बिहार के चम्पारण जिले में भारत लौटने के बाद अपना सर्वप्रथम सक्रिय सार्वजनिक कार्य प्रारम्भ किया ।

2.2.2 गांधी के विचार एवं कार्य

बिहार पहुँचते ही गांधी तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने में जुट गए । पटना से मुजफरपुर पहुँचकर गांधी संभागीय आयुक्त मॉरशीद से मिले और चम्पारण आने का अपना मकसद बताकर सहयोग की अपेक्षा की । परन्तु मॉरशीद का मानना था कि गांधी नील समस्या के हल में कोई सकारात्मक योगदान दे सकते हैं अपितु उन्होंने तो गांधी के नेक इरादों को भी शक किया और जिला मजिस्ट्रेट हेकॉक को पत्र लिखकर अनुरोध किया कि गांधी को चम्पारण छोड़ने के न्यायिक आदेश जारी किया गया । गांधी ने सत्याग्रह करके ऐसे आदेश का पालन करने से इनकार किया और वायसराय महोदय के निजी सचिव को पत्र लिखकर चम्पारण समस्या, इसमें उनके स्वयं के कार्य और अधिकारियों का नाकारात्मक दृष्टिकोण के बारे में

स्पष्ट किया । चम्पारण छोड़ने के आदेश से इनकार करने से गांधी को पता था कि उन्हें गिरफ्तार किया जा सकता है या फिर उन्हें वहाँ से दूर किया जा सकते हैं । मजिस्ट्रेट के सामने गांधी ने चम्पारण छोड़ने के सरकारी आदेश की अवहेलना करने का कारण स्पष्ट किया और मजिस्ट्रेट ने अपना निर्णय सरकार से वार्ता करने के पश्चात् सुनाने की बात कही ।

बिहार के सरकार को इस दौरान यह आभास हुआ कि जिला स्तर पर शासन ने गांधी के संदर्भ में गलत निर्णय लिए हैं । अत: उसने गांधी के खिलाफ किए जाने वाले उक्त कार्यवाही को समाप्त करने तथा उनके उपयुक्त सहयोग प्रदान करने के आदेश दिए । गांधी को भी चेतावनी दी गई कि वे सावधानीपूर्वक कृषकों एवं जनता को उक्साए बिना तथा शाँति को भंग किए बिना अपना कार्य करें ।

गांधी ने पुन: जाँच कार्य प्रारम्भ किया और शीघ्र ही वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि चम्पारण कृषकों का शोषण किया जा रहा है और उनकी स्थिति काफी दयनीय है । नील उत्पादकों के साथ किसी प्रकार का समझौता कर चम्पारण समस्या का निराकरण करने के गांधी का प्रयास साकार नहीं हो सका । क्रमश: उन्हें यह आभास हुआ कि नील उत्पादक गरीब कृषकों के आधारभूत माँगों को भी स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं और इस कारण कोई भी व्यक्तिगत प्रयास चम्पारण समस्या का निदान करने में सफल नहीं हो सकता । इसलिए गांधी ने सरकार के हस्तक्षेप से इस समस्या का निराकरण करने के लिए प्रयास प्रारम्भ किया । उन्होंने सम्मागीय भारत सरकार का भी उन्होंने पत्र लिखकर चम्पारण समस्या की जानकारी दी । सरकार से उन्होंने जाँच आयोग भारत सरकार ने बिहार सरकार को जाँच समिति गठित करने के आदेश दिए तथा गांधी को भी समिति में सदस्य बनने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया । बिहार सरकार ने क्रमश: चम्पारण जाँच समिति का गठन किया ।

समिति के जाँच के दौरान गांधी ने चम्पारण के कृषकों की समस्याओं तथा उनके अधिकारों के हनन तथा नील उत्पादकों के अन्यायपूर्ण और शोषणात्मक व्यवहार के तथ्यात्मक प्रस्तुति कर आग्रह किया कि कृषकों को उनके आधारभूत अधिकार और सुविधाएँ वापिस मिलने चाहिए और इसके लिए न्यायोचित कार्यवाही की जानी चाहिए । समिति ने अन्त में निर्णय लिया कि चम्पारण में अपनष्ट जाने वाले तीन काथिया व्यवस्था को तुरन्त समाप्त कर देना चाहिए और गरीब किसानों से जो गैर कानूनी वसूली नील उत्पादकों द्वारा किया जा रहा था उसे भी समाप्त कर दिया जाए और किए गए वसूली का 25 प्रतिशत पुन: कृषकों को लौटाया जाए । समिति की सिफारिश को कानून के माध्यम से लागू करने का प्रयास किया गया ।

चम्पारण सत्याग्रह का महत्व

इस सत्याग्रह में भारत में सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में गांधी के सत्याग्रह का प्रारम्भ हुआ । भारत में नेता के प्रति ब्रिटिश सरकार की उदासीनता देख उन्हें काफी दुख हुआ । उनके इस कार्य से भारत में उनकी लोकप्रियता को और बढ़ावा मिला तथा अनेक शुभ सम्बोधन उन्हें प्राप्त हुआ । कांग्रेस के पटल पर भी उनके इस प्रयासों को सराया गया और तालियों से स्वागत किया गया । एक महत्वपूर्ण बात यह भी थी कि इस कार्य में गांधी ने बिना किसी संस्थागत मदद से समस्या का निराकरण अपने ही ढंग से करने में सफलता प्राप्त की । इसने उनका आत्मविश्वास बढ़ाने का कार्य किया और आने वाले सार्वजनिक जीवन में सत्याग्रह का प्रयोग

करने के लिए प्रेरित किया । स्वतंत्रता आन्दोलन के चलते सत्याग्रह और गांधी ने नए प्रयोग द्वारा प्राप्त के लिए क्रमश: निषप्रभावी होते हुए उदारवादी और उग्रवादी तरीकों का विकल्प प्रस्तुत कर भारतीयों की उम्मीद जगाने का भी कार्य किया । ब्रिटिश सरकार का गांधी के साथ सम्बन्ध को प्रभावित करने में भी इस सत्याग्रह ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । सरकार ने तत्पश्चात् काफी सोच समझकर सावधानीपूर्वक ही गांधी के विरूद्ध कार्य करने के लिए कदम बढ़ाने का निर्णय किया । इस सत्याग्रह के माध्यम से गांधी अपने अन्तरंग अनुयायी और साथी बनाने में सफल हुए जिनके सहयोग एवं समर्थन ने उन्हें स्वतंत्रता आन्दोलन में काफी सम्बल प्रदान किया ।

2.3 खेडा सत्याग्रह

2.3.1 कारण

इस सत्याग्रह ह का केन्द्रीय विषय 1917- 18 में फसल की स्थिति कृषि उत्पादन से सम्बन्धित था । अत्यधिक वर्षा ने खरीफ फसलों को काफी नुकसान पहुँचाया था । यदपि रबि खेती ने किसानों से इस नुकसान की भरपाई करने में काफी मदद पहुँचाई थी । गुजरात के खेड़ा जिले में रबि फसल में से बहुत कम लाभ प्राप्त हुआ । महामारियों के फैलने से लोगों की परेशानियाँ और बढ़ी । मुसीबतों से सूझते हुए खेड़ा के लोगों ने स्थानीय अधिकारियों में कर अदायगी में रियायत देने का आग्रह किया।

2.3.2 गांधी के विचार एवं कार्य

गांधी के अनुसार स्थानीय अधिकारियों ने कर आँकलन गलत किया था । उन्होंने यह भी कहा कि जनता को जब विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है तो ऐसी अवस्था में यह उनका कानूनी अधिकार है कि उन्हें इस प्रकार की रियायत मिल सके । जब स्थानीय सरकार उनके तथा खेड़ा की जनता की बात मानने के लिए तैयार नहीं हुए तो उन्होंने सरकार को कर नहीं देने के लिए जनता को प्रेरित किया और कहा कि यदि ऐसे सभ्य तरीके से किया जाए तो यह कार्य गैर कानूनी नहीं माना जा सकता है ।

4 फरवरी, 1918 को मुम्बई के एक सार्वजनिक मीटिंग में उन्होंने सत्याग्रह प्रारम्भ करने का संकेत दिया । सरकार से उन्होंने सत्याग्रह प्रारम्भ करने से पूर्व इस विवाद के निस्तारण के लिए सरकार से आग्रह किया परन्तु असफल हुए । स्वयं उन्होंने तथ्यों को जानने का प्रयास किया और जब वे आश्वस्त हुए कि खेड़ा कृषकों के समस्या वास्तव में सही है तो उन्होंने सरकार से आग्रह किया कि वह कर वसूली को फिलहाल स्थगित कर दे और एक स्वतंत्रता जाँच आयोग गठित कर तथ्यों को जानने का प्रयास करे । परन्तु सरकार ने गांधी के इस सुझाव को भी अस्वीकार किया। तभी गांधी ने 22 मार्च 1918 से सत्याग्रह प्रारम्भ करने का निर्णय किया । सत्याग्रह का प्रारम्भ इस शपथ से हुआ कि खेड़ा के कृषक निर्धारित कर की अदायगी नहीं करेंगे और शान्तिपूर्वक सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्यवाही को सहेंगे । गांधी ने खेड़ा कृषकों के लिए जनसमर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया । अखबारों, विभिन्न मंचों एवं भ्रमण के माध्यम से गांधी ने इस सत्याग्रह को प्रभावी बनाने का प्रयास किया । आन्तरिक

स्तर पर उन्होंने सत्याग्रह के विभिन्न सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष पर अपने वक्तव्यों और कार्यों से सम्बल प्रदान करने का प्रयास किया । प्रथम विश्वयुद्ध की समस्याओं से प्रभावित ब्रिटिश सरकार भारत की जनता के विरूद्ध टकराव की स्थिति को त्याग कर युद्ध में उनका सहयोग प्राप्त करने का इच्छुक था । इसलिए उसने प्रान्तीय सरकार को आदेश दिया कि वह इस सम्बन्ध में राज्य के हितों को ध्यान में रखते हुए समस्या का निदान करने के लिए आवश्यक कार्यवाही करे । क्रमानुसार यह निर्देश जिला प्रशासन तक पहुँचा और जिला कलक्टर महोदय ने कुछ रियायतों की घोषणा की तथा अधिकारियों को निर्देश दिया कि कर वसूली करते वक्त कृषकों के साथ सहानुभूतिपूर्वक कार्य करें ।

2.4 अहमदाबाद सत्याग्रह

2.4.1 कारण

अहमदाबाद के मिलों में काम करने वाले मजदूरों को दिए जाने वाला महंगाई भत्ता इस विवाद का केन्द्रीय विषय था । अगस्त 1917 में प्लेग जैसे महामारी के दौरान मजदूरों को मिलों में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए मिलों के मालिकों ने मजदूरों को बोनस प्रदान किया था । जनवरी 1918 में स्थिति के सामान्य होने पर मालिकों ने यह बोनस बन्द करने का निर्णय किया । मजदूरों का कहना था कि विश्वयुद्ध की बढ़ती सम्भावनाओं के कारण सभी आवश्यक वस्तुओं की कीमत दुगनी से भी ज्यादा हो गई है और इसलिए जो बोनस उन्हें मिल रहा था उसका 5० प्रतिशत राशि श्रमिकों को महंगाई भत्ता के रूप में दिया जाए ।

2.4.1 गांधी का योगदान

गांधी अब तक न केवल गुजरात में अपितु सम्पूर्ण भारत के महत्वपूर्ण सार्वजनिक कार्यकर्ता के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे । अम्बालाल साराबाई नाम के प्रसिद्ध उधोगपति गांधी से मिले और उनसे अनुरोध किया कि वे मजदूरों और अहमदाबाद मिल मालिकों के मध्य उत्पन्न विवाद को समाप्त करने में मदद करें । गांधी ने सहमति व्यक्त करते हुए जाँच कार्य प्रारम्भ किया । वह मिल मालिक एवं मिलों में कार्य करने वाले श्रमिकों के प्रतिनिधियों से मिले और दोनों पक्ष के लोगों को अधिग्रहण समिति को विवाद सौंपने और निस्तारण करने के लिए तैयार किया । जहाँ गांधी शंकरलाल बैंकर एवं वल्लबभाई पटेल मजदूरों का प्रतिनिधित्व इस बोर्ड में कर रहे थे वहीं अम्बालाल साराबाई जगाभाई दलपतभाई और चंदूलाल मालिकों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे ।

अधिग्रहण समिति का कार्य प्रारम्भ ही हुआ था कि कुछ मिलों के मजदूरों ने हड़ताल पर जाने का निर्णय लिया । मिल मालिक ऐसे निर्णय से बहुत नाराज हुए और उन्होंने यह निर्णय लिया कि वे अधिग्रहण समिति के निर्णय को स्वीकार. नहीं करेंगे । 22 फरवरी 1918 से मिल मालिकों ने मिलों की तालाबन्दी करना प्रारम्भ किया । उन्होंने यह भी निर्णय लिया कि वे उन सभी श्रमिकों की सेवाएँ समाप्त कर देंगे जो 20 प्रतिशत अतिरिक्त वेतनभत्ता लेकर काम पर पुन: लोट कर नहीं आते हैं । 12 मार्च 1918 को जब मिल मालिकों ने तालाबन्दी

समाप्त कर मिलों को चालू करने का प्रयास किया तो मजदूरों ने उसी दिन से अपना असन्तोष व्यक्त करने के लिए हड़ताल पर जाने का निर्णय किया ।

गांधी ने जाँच के पश्चात् पाया कि 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि श्रमिकों के लिए न्याय सम्मत मांगा है, और उन्हें इस न्यूनतम न्याय सम्मत वृद्धि के लिए ही मांग करना चाहिए । यहा मांग श्रमिकों को गांधी द्वारा दिलाए गए शपथ का मूल तत्व बन गया । जब मिल मालिकों ने इस मांग को अस्वीकार किया तो गांधी श्रमिकों का नेतृत्व करते हुए उनसे सत्याग्रह करने को कहा । गांधी श्रमिकों के घर-घर जाकर उन्हें सत्याग्रह के लिए तैयार किया । सार्वजनिक मंच एवं अपने लेखन के माध्यम से भी गांधी ने श्रमिकों को इस संदर्भ के लिए जाग्रत किया । अहमदाबाद की सड़कों में श्रमिकों का जुलूस निकाला गया । सत्याग्रह का शपथ प्रत्येक दिन के बैठकों में दोहराया गया और संघर्ष की प्रगति सम्बन्धित सूचनाओं को प्रसारित किया गया । बैठकों में उत्पन्न होने वाले समस्याओं के बारे में भी विचार-विमर्श किया गया । गांधी ने श्रमिकों को हड़ताल के दौरान कोई वैकल्पिक काम ढूँढ कर रोजी-रोटी कमाने का परामर्श दिया । श्रमिकों को स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के बारे में भी गांधी ने उपदेश दिए ।

कुछ समय बाद जब कुछ श्रमिकों ने अपने आप को हड़ताल में सहयोग करने के लिए असमर्थ पाया तो उन्होंने 20 प्रतिशत महंगाई भत्ता पर ही मिलों में लौटकर कार्य करना चाहा तो गांधी काफी क्षुब्ध हुए । उन्होंने श्रमिकों से पुन: अपील करते हुए कहा कि वे अपने मूल मांगों पर अड़े रहे और सत्याग्रह जारी रखें ।

15 मार्च, 1918 को गांधी ने एलान किया कि वे तब तक उपवास रखेंगे जब तक कि सभी श्रमिक मिलों में जाना बन्द नहीं करते । उनके उपवास के तीसरे दिन मिल मालिकों का नेतृत्व कर रहे अम्बालाल साराबाई ने मालिकों की तरफ से श्रमिकों को 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि देने का प्रस्ताव रखा और गांधी को उनकी मदद करने के लिए आग्रह किया ।

समस्या के निदान के लिए अधिग्रहण समिति स्थापित करने के लिए गांधी ने अपनी स्वीकृति प्रदान की । गुजरात महाविद्लय के उपप्राचार्य प्रोफेसर आनन्दशंकर ध्रुव को अधिग्रहण अधिकारी के रूप में दोनों पक्ष द्वारा स्वीकार किया गया और तीन महीने के अन्दर अपने निर्णय सुनाने का आग्रह किया । गांधी ने अपना उपवास समाप्त करने की घोषणा की और श्रमिकों ने गांधी को क्रतज्ञता ज्ञापित हुए मिठाईयाँ बाँटी ।

2.4.3 महत्व

अहमदाबाद सत्याग्रह से गांधी को गुजरात में और अधिक सम्बल प्राप्त हुआ । जहाँ खेड़ा ने उन्हें एक सशक्त देहाती और कृषक आधार प्रदान किया वहीं अहमदाबाद ने उन्हें एक सशक्त शहरी और श्रमिक आधार प्रदान किया । मिल मालिकों को भी समस्या से संतोषजनक निदान प्राप्त हुआ और उनके तथा गांधी. के सम्बन्धों में किसी प्रकार की कड़वाहट भी उत्पन्न नहीं हुई । श्रमिकों एवं उद्योगों के क्षेत्र में भी सत्याग्रह के माध्यम से समस्याओं का निराकरण हो सकता है यह इस सत्याग्रह द्वारा सिद्ध हो गया । अहमदाबाद सत्याग्रह में उनके द्वारा अपनाया गया उपवास भविष्य में सार्वजनिक राजनीतिक आन्दोलन में भूख हड़ताल का द्योतक था ।

2.5 रोलत सत्याग्रह

ब्रिटेन पर प्रथम विश्व युद्ध का दबाव व भारत के प्रति उसकी नीति ने गांधी को राष्ट्रीय स्तर का नेता बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । युद्ध मे उलझा ब्रिटेन भारत पर अपनी पकड मजबूत करने का मार्ग खोज रहा था क्योंकि यह उसका सर्वाधिक सम्पन्न उपनिवेश था । अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिये उन्होने 'दमनात्मक समझौते' की नीति का पालन किया । इस प्रकार एक तरफ तो वे भारतीयों के बढ़ते असंतोष के कारण सत्ता हस्तांतरण की योजना बना रहे थे व साथ ही इस तरीके से भारतीयों मे अपने ऐसे समर्थको को आकर्षित कर रहे थे जो उनके शासन को स्थायित्व दे सके । दूसरी तरफ वे उन भारतीयों के विरूद्व दमनात्मक नीति अपना रहे थे जो उनकी सत्ता को चुनौती दे रहे थे ।

2.5.1 सत्याग्रह के कारण व प्रगति

दमनात्मक तरीकों के माध्यम से रोलत अधिनियम ने भारत में ब्रिटिश शासन के सुदृढ़ीकरण की दिशा मे एक कदम और आगे बढाया । रोलत विधेयक के माध्यम से सरकार अपराध व विद्रोह पर नियन्त्रण करना चाहती थी । सरकार ने इस विधेयक का यह कहते हुए पक्ष लिया कि यह तो एक निरोधात्मक कार्यवाही है जिसका उपयोग तभी होगा जब गवर्नर जनरल यह समझेंगे कि भारत के अमुक भाग में क्रान्तिकारी गतिविधियों से प्रशासन को खतरा है । अंग्रेजो ने यह भी दावा किया कि इस अधिनियम का दुरूपयोग रोकने के लिये एक जाँच अधिकारी नियुक्त किया जायेगा जो लोगों के विरूद्ध इस प्रकार के आदेशों की जाँच करेगा । तथापि भारतीय इसे स्वतन्त्रता, न्याय व नागरिको के मूलभूत अधिकारों के सिद्वान्तों के विरूद्ध मानतें थे । वे यह भी मानते थे कि ब्रिटिश सरकार युद्ध से पूर्व किये गये वादों से पीछे हट रही है तथा वह भारत को वास्तव में स्व-शासन देने की इच्छा नहीं रखती है ।

सभी तत्कालीन राजनेताओं ने सरकार के इस कार्य की सर्वसम्मति से निंदा की । लेकिन विरोध करने के पारम्परिक तरीकों की सीमाओ के कारण वे ब्रिटिश सरकार की दमनात्मक कार्यवाही का प्रभावपूर्ण तरीके से सामना करने की रणनीति नहीं बना सके । इस राजनीतिक गतिरोध को दूर करने के लिये गांधी ने सत्याग्रह को अपनाने की बात कही ।

रोलत विधेयक के सम्बन्ध में सरकार की कार्यवाही से गांधी जी बेहद आहत थे । उन्होने माना कि यह विधेयक न केवल न्यायविरूद्ध है अपितु ब्रिटिश प्रशासन की दमनात्मक नीति का प्रमाण है । ऐसे स्वेच्छाचारी व तानाशाह शासन का विरोध करना भारतीयो के लिये खुली चुनौती है । ऐसा कहते हुए उन्होने सरकार को चेतावनी दी कि यदि वह इस क्रूर विधेयक की दिशा में आगे बढ़ी तो एक बडा आंदोलन किया जायेगा ।

24 फरवरी 1991 को 'सत्याग्रह प्रतिज्ञा' तैयार की गई । इसमें रोलेट विधेयक को अनुचित व स्वतन्त्रता व न्याय के सिद्वान्तों के विरूद्ध मानते हुए इसे व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों को छीनने वाला माना गया । अत: गांधी ने कहा कि यदि यह विधेयक कानून बन जाता है तो इसका सविनय उल्लंघन किया जायेगा और ऐसा तब तक किया जायेगा जब तक कि इसे वापिस नहीं ले लिया जाता । इस प्रतिज्ञा में यह भी कहा गया कि विरोधकर्त्ता सत्य

और अहिंसा का पालन करेंगे । यह विधेयक यदि अधिनियम बन जाता है तो गांधी ने सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करने का इरादा भी व्यक्त किया ।

उन्होने सरकार से रोलत विधेयक पर पुनर्विचार करने की अपील की । मार्च के महीने में प्रेस, बैठकों, पर्चो आदि के माध्यम से रोलत विधेयक व इसके अनुचित पक्षों के बारे में विस्तृत प्रचार प्रसार किया गया । एक सत्याग्रह सभा की स्थापना की गई और आंदोलन चलाने के लिये इसका मुख्यालय बम्बई रखा गया । एक सत्याग्रह समिति भी नियुक्त की गई जिसका कार्य सविनय अवज्ञा हेतु कानूनों का चयन करना था । 3० मार्च 1991 को एक हडताल का आव्हान किया गया । बाद में इसे 6 अप्रेल1919 के लिये स्थगित कार दिया गया । गांधी ने इस दिवस को 'अपमान व प्रार्थना दिवस' के रूप में मनाने की अपील की । साथ ही प्रत्येक सत्याग्रही के लिये आवश्यक था कि वह 24 घंटे का उपवास रखकर सविनय अवज्ञा के लिये अनुशासन बनाये । वे जो इस प्रतिज्ञा या उपवास के लिये तैयार नहीं थे उन्हे भी इसमें भाग लेने की अनुमति इस शर्त पर दी गई कि वे सत्य' पालन की शपथ लेगें तथा किसी भी परिस्थिति में हिंसा का सहारा नही लेगें ।

दुर्भाग्य से सूचना के प्रभावी प्रसार की कमी के कारण दिल्ली के कुछ इलाकों में 3० मार्च को ही हडताल कर दी गई । सडकों पर प्रदर्शन हुए व दुकानें बंद करा दी गई । हिंसा व उपद्रव की घटनायें हुई । पुलिस ने गोलीबारी की व कुछ लोगों की जानें गई । गांधी ने सरकारी कार्यवाही की निंदा की और सत्याग्रहियों को यह निर्देश दिए कि वे हर स्थिति में सत्य का पालन करेगे व शांति और व्यवस्था बनाये रखेगें । भारत के अन्य इलाकों में 6 अप्रेल को हडताल की गई । बम्बई में गांधी ने एक बड़ी सभा को सम्बोधित किया और सत्याग्रह के अनेक पक्ष पर विस्तार से चर्चा की । अनेक पत्र पत्रिकाओं, जन सम्बोधनों व प्रेस विज्ञप्तियों के माध्यम से गांधी ने सत्याग्रहियों को अनेक दिशा निर्देश दिये ।

बम्बई की सत्याग्रह सभा ने प्रतिबन्धित साहित्य व समाचार पत्रों के पंजीकरण से संम्बन्धित कानूनों का उल्लंघन करने सम्बन्धी निर्देश जारी किये । प्रचार के लिये गांधी के 'हिन्द स्वराज' सर्वोदय या यूनिवर्सल डीन' 'स्टोरी ऑफ अ सत्याग्रही' तथा 'लाईफ एंड एड्रेस ऑफ मुस्तफा कमाल पाशा को चुना गया । गांधी के सत्याग्रह का प्रथम संस्करण बिना पंजीकरण के ही जारी हुआ । गांधी जी ने पत्रिकाओं में अपने लेख की एक इखला के माध्यम से लोगों को स्वदेशी की अवधारणा के बारे में बताया तथा साम्प्रदायिक सौहार्द बनाये रखने पर बल दिया । उनहोने यह भी बतलाया कि चुनिंदा कानूनों को किस प्रकार सविनय, साहसपूर्वक व अहिसंक रूप से उल्लंघन किया जाये ।

गांधी ने दिल्ली जाने का निश्चय किया ताकि वे वही जाकर 3० मार्च की घटना के शिकार लोगों को शांत कर सकें व उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त कर सके । अप्रेल 1919 को दिल्ली जाते समय ही उन्हे आदेश मिला जिसमें उनके पंजाब व दिल्ली जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया । जब गांधी ने आदेश मानने से इंकार किया तो उन्हे गिरफ्तार कर बम्बई भेज दिया गया जहां उन्हे छोड़ दिया गया ।

गांधी की गिरफ्तारी का समाचार आग की तरह फैला । उनकी गिरफ्तारी का विरोध करने के लिये 10 अप्रेल को पूरे भारत में हड़ताल करने की योजना बनाई गई । लेकिन इस

हड़ताल में अहमदाबाद, अमृतसर जैसे कुछ स्थानो पर आगजनी, उपद्रव व हिंसा की घटनायें हुई । कुछ यूरोपिय लोगों को मार दिया गया तथा सरकारी सम्पत्ति को क्षति पहुंचायी । पुलिस ने जब गोलीबारी की तो कुछ भारतीयों को जान गवांनी पड़ी । पंजाब में गांधी की गिरफ्तारी व पंजाब के दो प्रमुख नेताओं डॉ. सत्यपाल व डॉ. किचलु गिरफ्तारी व निर्वासन की कार्यवाही एक साथ हुई । इन गिरफ्तारियों का व मिकेल ओ डायर के सैनिक शासन की दमनकारी कार्यवाहियों का विरोध करने के लिये लोगों ने प्रदर्शन किये व जुलूस निकाले । जन विद्रोह, पुलिस गोलाबारी व कई यूरोपियन्स के मारे जाने की घटनायें हुई । अमृतसर के जलियांवाला बाग में लगभग दस हजार लोग एकत्रित हुए । वे अपने नेताओं की गिरफ्तारी व ओ डायर के निरंकुश शासन का विरोध कर रहे थे । ब्रिगेडियर जनरल डायर, जिसकी कमाण्ड में सेना की दुकडी ने जनहिंसा को सफलतापूर्वक कुचला था, ने सभा को तितर बितर करने की ठानी । वह अपने सेना के साथ बाग तक गया और बिना चेतावनी के उसने गोलाबारी शुरू कर दी । इस भयावह कार्यवाही के परिणामों ने भारतीयों को हिला कर रख दिया । इसी प्रकार बम्बई, वीरम्गम व नदियाड मे भी उपद्रव हुए । पत्थरबाजी, सार्वजनिक भवनों को जलाने व टेलीफोन की लाईने काटने की घटनाये भी हुई ।

सत्याग्रह की हिंसात्मक घटनाओं से आहत गांधी ने 18 अप्रेल 1919 को 'सत्याग्रह स्थगित कर दिया । उन्होने सत्याग्रह के प्रयास को एक बड़ी गलती माना व तीन दिन के प्रायश्चित उपवास की घोषणा की । उन्होंने सत्याग्रहियो को भी उपवास रखने व अपना अपराध स्वीकार कारने की सलाह दी । उन्होने महसूस किया कि लोग सत्याग्रह के लिये अभी उचित रूप से तैयार नहीं है । उन्होने निश्चय किया कि भविष्य में ऐसा आंदोलन चलाने के पूर्व वे एक ऐसे स्वयंसेवकों का दल बनायेंगे जो सुप्रशिक्षित होगें, निर्मल मन के होगें तथा सत्याग्रह के मूल भाव को समझते होगें । इस प्रर उन्होने स्वयंसेवकों का दल बनाया और लोगों को सत्याग्रह का अर्थ और उसके प्रयोग के बारे में प्रशिक्षित किया ।

रोलत सत्याग्रह बीच में ही समाप्त कर दिये जाने के कारण अपने स्वाभाविक परिणाम तक नहीं पहुँच सका व अपने उद्धेश्यो को प्राप्त नही कर सका । किन्तु सत्याग्रह के माध्यम से लोगों की तीव्र प्रतिक्रिया को देखते हुए सरकार ने दूसरे रोलत विधेयक का विचार त्याग दिया व सामान्य अपराधिक कानून में स्थायी परिवर्तन लाना चाहा । रोलत सत्याग्रह गांधी के 'सत्याग्रह के आदर्श सिद्वान्तों से अत्यधिक विचलित हो गया । इन घटनाक्रमों से गांधी बेहद आहत हुए तथा उन्होने रोलत सत्याग्रह चलाने में अपनी गलती स्वीकार की ।

2.5.2 महत्व

रोलत सत्याग्रह ने भारत में गांधी की राजनीतिक प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । उन्होने स्वयं को अखिल भारतीय स्तर के एक सशक्त नेता के रूप में स्थापित किया । उन्होने सत्याग्रह के माध्यम से राजनीतिक स्तर पर बने गतिरोध को दूर करने का एक अलग तरीका बतलाया जो भारतीयों की आकांक्षाओं व ब्रिटिश सरकार के अडियलपन को देखते हुए यथोचित था । निरकुंश सत्ता के विरोध की तकनीक के रूप में गांधी के निर्देशन में सत्याग्रह अनेक

स्थानीय परिवेदनाओं को व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम बन गया तथा साम्राज्यवादी सरकार से सभ्य व्यवहार की अपेक्षा के साथ एक साथ जुड़ गये ।

सत्याग्रह के दौरान घटी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं ने गांधी के अखिल भारतीय नेतृत्व की खामियों को उजागर किया । अपनी शक्ति व कमजोरियों के प्रति सजग रहते हुए गांधी ने राजनीति में सक्रिय व प्रत्यक्ष भूमिका निभाने का निश्चय किया ताकि वे भारत को अपने आदर्शो के अनुरूप लक्ष्यों की ओर ले जा सकें । अमृतसर में आयोजित कांग्रेस में गांधी की मन: स्थिति स्पष्ट हुई । उन्होने स्वयं माना कि अमृतसर में कांग्रेस में उनकी भागीदारी कांग्रेस राजनीति में उनका वास्तविक प्रवेश है । इस प्रकार वे न केवल कांग्रेस के मंच पर अपितु भारत के नेतृत्व के स्पष्ट भागीदार बन गये ।

2.6 असहयोग आन्दोलन

2.6.1 आंदोलन के कारण व प्रगति

रोलत सत्याग्रह के बाद गांधी ने भारतीय राजनीति में प्रत्यक्ष व सक्रिय भूमिका निभाई 1 दिसम्बर 1919 के शाही घोषणा व सुधार अधिनियम को शासन व शासित के बीच एक नये युग का सूत्रपात माना गया । रोलत सत्याग्रह को समाप्त करने में यह भी गांधी के लिये एक प्रेरक कारक था । इससे गांधी के मन में आशा की किरण जगी और उन्होने माना कि भारत में ब्रिटिश शासक ब्रिटेन की व्यवस्था के स्वाभाविक आदर्शो के अनुरूप कार्य करेगें । यही आशा उनके ब्रिटिश शासन के प्रति निष्ठा के मूल मे थी । इसीलिये उन्होने शाही घोषणा व सुधारो को ब्रिटिश आदर्शो के अनुरूप माना और उन्होने अपेक्षा की कि भारतीय संदर्भ में ब्रिटिश शासक भारतीयों के साथ न्याय करेंगे । उन्होने भारतीयों से कहा कि वे सुधारों को सफल बनाने में सरकार का सहयोग करें और साथ साथ अपनी अपूर्त आकांक्षाओ को प्राप्त करने की दिशा में कठोर परिश्रम भी करें ।

लेकिन अंग्रेजो ने गांधी की आशाओं को फिर से झूठा साबित किया । वे मुसलमानों को किया गया वादा भी न निभा सके जिसमें उन्होने तुर्की साम्राज्य के संदर्भ में व वहाँ के शासक जिसे खलीफा या मुसलमानों के धार्मिक नेता के रूप में मान्यता के संदर्भ में था । साथ ही हण्टर आयोग की रिपोर्ट जिसमें पंजाब में अपराध के दोषी प्राधिकारियों को बरी किया गया था तथा भारतीयो को स्वराज देने की माँग के संदर्भ मे की गई प्रार्थनाओ व विरोधो को मानते हुए भारतीय आकांक्षाओ के अनुरूप एक जिम्मेदार सरकार की भूमिका निभाने मे असफल होने पर गांधी की आशाये धूमिल हो गई । इन घटनाओ ने अंग्रेजो के लोकतान्त्रिक आदर्शो में विश्वास होने के दावो को खोखला साबित किया । साथ ही न्यायोचित्त व्यवहार व व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सिद्वान्तो का घोर उल्लंघन परिलक्षित हुआ । वे केवल ब्रिटिश के निजि औपनिवेशिक हितो को स्थायी रखना चाहते थे व भारत मे अपना एकछत्र राज्य बनाये रखना चाहते थे क्योंकि यह उनके औपनिवेशिक हितो की रक्षा के लिये अपरिहार्य बन चुका था ।

भारत मे खिलाफत समस्या अंग्रेजों द्वारा भारतीय मुसलमानों से किये गये वादे से पीछे हटने के कारण हुई । मुसलमानों ने विश्व युद्व में ब्रिटेन का साथ इस वादे के साथ किया था कि मुसलमान धार्मिक प्रमुख या खलीफा, जो तुर्की शासक भी था, के साथ अच्छा व्यवहार

होगा । किन्तु हस्ताक्षरित युद्व विराम की शती के अनुसार खलीफा की शक्तियों को काफी कम कर दिया गया और तुर्की साम्राज्य में भारी कटौती भी की गई ।

तुर्की मामले में की गई कार्यवाही को मुस्लिम समुदाय ने वादाखिलाफी तो माना ही पर साथ ही यह लार्ड एक्विथ व लियोर्ड जार्ज जैसे जिम्मेदार ब्रिटिश राजनेताओं की पूर्व में की गई खुली घोषणाओं और वादों को भी झूठा साबित करती है । एक साथी नागरिक के रूप में गांधी ने भी मुसलमानों के विचारों से सहमति व्यक्त की । उन्होने अंग्रेजो द्वारा खिलाफत मामले में की गई कार्यवाही को अनुचित माना और सरकार से कहा कि खिलाफत के संदर्भ में मुसलमानों की परिवेदनाओ का उचित समाधान निकालें ।

खिलाफत मामले के संदर्भ में परिवेदनाओं के निराकरण के प्रयासों को संस्थागत करते हुए केन्द्रीय खिलाफत समिति का गठन किया गया जिसका मुख्यालय बम्बई रखा गया । प्रारम्भिक अवस्था में इसकी गतिविधियाँ सुविचारित व नरम रही । मुसलमानों की आकांक्षाओं व खतरों को व्यक्त करने के लिये यदा-कदा सभायें हुई । 19 मार्च 1919 को बम्बई खिलाफत समिति ने संकेन्द्रित कार्ययोजना के अनुसार कार्य करने का प्रस्ताव पारित किया । इसने पूरे भारत में बड़े आंदोलन चलाये । इसके लिये उसने उत्तर भारत के अतिवादी सर्व-इस्लामिस्ट से सहयोग प्राप्त किया । 21 सितम्बर को लखनउ में अखिल भारतीय खिलाफत सम्मेलन का आयोजन हुआ । इस सम्मेलन में सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह हुआ कि 17 अक्टूबर 1919 को खिलाफत दिवस के रूप में मनाया जायेगा ।

इस दौरान गांधी ने खिलाफत मामले में हिन्दुओ व मुसलमानों को संघटित करने का प्रयास किया। उन्होने कुछ हिन्दु व मुसलमान नेताओं से निकट सम्पर्क बनाने का प्रयास किया, बम्बई में खिलाफत सभा को सम्बोधित किया और लखनऊ सभा में 17 अक्टूबर 1919 को खिलाफत दिवस मनाने की घोषणा का स्वागत किया । उन्होने इस सुझाव को विस्तार देते हुए हिन्दुओं व मुसलमानों से कहा कि इस दिवस पर वे प्रार्थना, उपवास व हड़ताल का आयोजन करें । केन्द्रीय प्रान्त व बम्बई, मद्रास तथा बंगाल की प्रेसिडेन्सी में बड़ी संख्या में हिन्दु व मुसलमान संघटित हुए ताकि इस दिवस को सफल बनाया जा सके । दिल्ली जैसे कुछ स्थानो पर हिन्दु मुस्लिम भाईचारे के अद्भुत दृश्य देखने को मिले ।

नवम्बर में दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय खिलाफत सम्मेलन में खिलाफत आदोलन को विशेष बल मिला । सम्मेलन में उग्र खिलाफत समर्थकी का नियन्त्रण था । सम्मेलन में पारित एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव के अनुसार यदि सरकार खिलाफत मामले में उपेक्षा का व्यवहार जारी रखती है तो वे सरकार के साथ असहयोग ' करेगें । असहयोग के प्रश्न पर विचार करने के लिये एक उपसमिति का गठन किया गया । अपने भाषण में, गांधी ने इस विचार का समर्थन किया । दिसम्बर 1919 के अन्त में दोनों अलि बन्दुओ व मौलाना अब्दुल कलाम आजाद को रिहा कर दिया गया । खिलाफत मामले में अपने उग्र विचारों के कारण वे यू.पी. व बंगाल जैसे प्रान्तो के उग्र खिलाफत समर्थकों के नजदीक आये । उदारवादियों ने खिलाफत आदोलन पर धीरे-धीरे अपना नियन्त्रण खो दिया । यू.पी. के उग्र प्रतिनिधि, उलेमा व पत्रकार अब नेतृत्व करने लगे । इस परिवर्तन के साथ आदोलन प्रादेशिक केन्द्र से बढ़कर छोटे कस्बों व गाँवों तक फैल गया ।

दिसम्बर 1919 के अन्त में दूसरा खिलाफत सम्मेलन अमृतसर में आयोजित हुआ । इसमें कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग दोनों ने भाग लिया । यहाँ यह प्रस्ताव पारित हुआ कि वायसराय के सम्मुख एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा जायेगा जो खिलाफत संबंधित मांग उनके समक्ष प्रस्तुत करेगा । वायसराय ने मुस्लिम भावनाओं के प्रति सहानुभूति व्यक्त की । यद्यपि उन्होने इस मामले में अपनी ओर से प्रयास करने का आश्वासन दिया तथापि उन्होने शांति सम्मेलन के बारे में संकेत दिया कि यह खिलाफत आदोलनकारियों की सभी मांगो को स्वीकार करने में समर्थ नहीं है । गांधी ने ऐसे अस्पष्ट आश्वासनों की निंदा की । उन्होने कहा कि भारतीय केवल सर्वोत्तम प्रयासों के आश्वासन मात्र नहीं चाहते । वे चाहते है कि उनके शासक उनकी भावनाओं को समझे और उनकी परिवेदनाओ के निराकरण व उनकी आकांक्षाओ को पूरा करने के पूरे पूरे प्रयास किए जाए।

खिलाफत पर अगला अखिल भारतीय सम्मेलन बम्बई में 15 से 17 फरवरी 1920 तक हुआ । उग्र वर्ग की ओर से दबाव था कि ब्रिटिश माल का बहिष्कार किया जाये व सरकार से सहयोग वापिस लिया जाये । कुछ उग्रवादी तो इतने हताश हो गये कि उन्हे लगा कि खिलाफत समस्या का हल नरम विरोध से सम्भव नहीं है । उन्होने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध कठोर कदम उठाने की माँग की । इस प्रकार बंगाल खिलाफत समिति ने एक और खिलाफत दिवस मनाने का प्रस्ताव पारित किया । कुछ ने मुसलमानों से अंग्रेजो के प्रति निष्ठा त्यागने की बात कही, दूसरों ने अंग्रेजो के विरूद्ध जिहाद या धर्मयुद्ध छेडने की बात कही । 7 मार्च 1920 को गांधी ने खिलाफत परिवेदनाओ के निराकरण के सम्बन्ध में अपनी योजना प्रस्तुत की । उन्होने 19 मार्च 1920 को खिलाफत दिवस मनाने का सुझाव दिया और उस दिन हड़ताल करने की वकालत की । उन्होने उस दिन हिंसा से दूर रहने पर विशेष बल दिया । उन्होने बहिष्कार करने या मिश्र जैसे अन्य प्रश्नो को इस आदोलन में मिलाने से बचने की बात कही । सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होने कहा कि यदि दूसरे खिलाफत दिवस के बाद भी यदि उनकी मांगे नहीं मानी जाती है तब वे असहयोग का सहारा ले । उन्होने क्रमिक असहयोग का सुझाव दिया यह सुझाव भी दिया गया कि भारतीय पहले अपनी उपाधियां व पुरस्कार लौटायेंगे तत्पश्चात् कोर्ट की सदस्यता व राजकीय सेवा से त्याग पत्र दे और अन्ततः कर चुकाने से मना करें ।

14 मई 1920 को शांति समझौते के प्रकाशन ने उग्रवादी खिलाफत आदोलनकारियो की इस आशंका को सही साबित किया कि खिलाफत मामले में नरम विरोध निष्फल ही साबित होगा और खिलाफत परिवेदनाओं के निराकरण के लिये कठोर कदम उठाना अत्यावश्यक है । शांति शर्तो को गांधी ने भारतीय मुसलमानों पर कुठराघात बताया । साथ ही न्याय पाने के लिये उन्होने असहयोग की वकालत की । केन्द्रीय खिलाफत समिति ने वायसराय के पास फिर एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा जिसने यह संदेश दिया कि शांति शर्ते भारतीय मुसलमानों को स्वीकार्य नही है और यह चेतावनी भी दी कि यदि शांति शर्तो में संशोधन नहीं किया गया तो मुसलमान हिन्दुओ के साथ मिलाकर 1 अगस्त 1920 से असहयोग आदोलन चलायेगे ।

जून 1920 में पंजाब में आम असन्तोष व जलियाँवाला बाग नरसंहार के कारणों की जाँच से सम्बधिक अधिकारिक रिपोर्ट साम्राज्यवादी सरकार ने प्रकाशित की । अब तक गांधी

पंजाब मामले को खिलाफत मामले में मिलाने के पक्ष में नही था । उन्होने अन्य नेताओं को भी ऐसे मामलों को खिलाफत के साथ जोडने से रोका था । अन्य नेताओ के समान मैकल ओ डायर के नेतृत्व में दमनकारी सैनिक शासन व पंजाब में हिंसात्मक घटनाओ को देखकर गांधी भी द्रवित थे । लेकिन अन्य राष्ट्रीय नेताओं के विपरीत गांधी ने सैनिक शासन में की जा रही कार्यवाहियो पर कभी टिप्पणी नहीं की । बिना प्रमाण राजकीय कार्यो की आलोचना करने के स्थान पर गांधी ने पंजाब में दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं की अधिकारिक जाँच की मांग करते हुए बार-बार अभियान चलाये । जब सरकार ने पंजाब की घटनाओं की जांच के लिये हण्टर समिति की नियुक्ती की घोषणा की तो गांधी उत्साहित हुए! कुछ भारतीयो में असंतोष था क्योंकि वे इसके सदस्यगण से असंतुष्ट थे और कुछ भारतीयों की मांग थी कि यह आयोग राजशाही कमीशन होना चाहिये । गांधी ने उन्हे सलाह दी कि इस पर भरोसा रखे और इसके समुख प्रमाण प्रस्तुत करें ताकि यह हो चुके अन्य का निराकरण कर सके ।

पंजाब में हुई घटनाओं की जांच के लिये नियुक्त कांग्रेस उप समिति के गांधी भी एक सदस्य थे। इस समिति के माध्यम से गांधी को पूरे मामले का प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त हुई । अन्तत: जब साम्राज्यवादी सरकार ने हण्टर आयोग की रिपोर्ट प्रकाशित की तो उसे पढकर गांधी बहुत द्रवित हुए । आयोग ने पंजाब की घटनाओ पर लीपापोती कर पाश्विक अपराध के दोषी प्राधिकारियों को दोषमुक्त कर दिया था । इससे उनकी यह मान्यता, कि अंग्रेज न्यायपंसद है, भंग हो गई और उन्होने घोषणा की कि भारतीय इस प्रकार की निन्दात्मक कार्यवाहियां सहन नहीं करेगे । उन्होने कहा, "कि उनके विचार से अब समय आ गया है कि भारतीय प्रभावपूर्ण कार्यवाही के लिये संसद में पेश याचिकाओं पर ही निर्भर रहना छोड़ दें । आवश्यक हो तो संसद मे अपील करे किन्तु यदि संसद उन्हें निराश करे और यदि उन्हें स्वयं को राष्ट्र कहलाने में सक्षम समझते है तो उन्हें सरकार से समर्थन वापिस ले लेना चाहिये । इस प्रकार जब गांधी ने देखा कि अंग्रेज शासकीय अराजकता की अनदेखी कर रहे है और बाग में हुए भयंकर नरसंहार की लीपापोती कर रहे है तो उन्होने जून 192० में पंजाब व खिलाफत मामलों को जोड़ दिया और ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग करने के लिये इन्हे मुख्य आधार बना दिया । सितम्बर 192० मे कलकत्ता में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस के विशेष सत्र में खिलाफत व पंजाब के मामलों को तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा स्वराज की नाग की उपेक्षा को असहयोग आंदोलन के मुख्य कारण घोषित कर दिया । इस सम्बन्ध में प्रस्ताव भी पारित किया गया । कलकत्ता में आयोजित कांग्रेस के विशेष सत्र में पारित प्रस्तावों को बाद में दिसम्बर 192० में नागपुर में आयोजित वार्षिक सत्र में पुष्ट कर दिया गया ।

2.6.2 असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम

असहयोग आंदोलन का एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया तथा लोगो को इस बारे में शिक्षित करने के प्रयास किये गये । असहयोग आदोलन में कुछ नकारात्मक व कुछ सकारात्मक कार्यक्रम थे तथा अंतिम हथियार के रूप में सविनय अवज्ञा की चेतावनी थी । गांधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सात सूत्री असहयोग आंदोलन कार्यक्रम बनाया जिसे हम नकारात्मक असहयोग कार्यक्रम कह सकते है । ये सात सूत्री कार्यक्रम थे:-

1. सरकार द्वारा प्रदत्त उगधियों व सम्मानजनक पदों को लौटाना व राजकीय सेवाओं से त्यागपत्र देना ।
2. सरकारी या अनुदानित स्कूल एवं कॉलेजों का बहिष्कार ।
3. 1919 के अधिनियम में प्रस्तावित चुनावों का बहिष्कार ।
4. ब्रिटिश द्वारा भारत में स्थापित अदालतों का बहिष्कार ।
5. विदेशी माल व व्यापार का बहिष्कार ।
6. सरकारी कार्यक्रमों का बहिष्कार ।
7. ब्रिटेन की अन्तर्राष्ट्री गतिविधियों के प्रति असहयोग ।

सकारात्मक असहयोग कार्यक्रम कुछ इस प्रकार थे :-

1. सूत कातना व खादी का प्रचार ।
2. छुआछुत उन्मूलन ।
3. अन्तरवैयक्तिक विवादों को सुलझाने के लिये पारम्परिक पंच सस्थांओं की स्थापना ।
4. राष्ट्रीय स्कूल व कॉलेजों की स्थापना ।

यदि असहयोग आंदोलन के उद्वेश्य इन कार्यक्रमों से प्राप्त नहीं होते हैं तो अन्तिम हथियार के रूप में सविनय अवज्ञा को अपनाने की बात कही गई । गांधी ने नये वाइसराय लार्ड रीडिंग को लिखे पत्र में सारी स्थिति को स्पष्ट कर दिया ।

2.6.3 आंदोलन में गांधी की भूमिका व कार्ययोजना

गांधी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस. को इस प्रकार पुनर्गठित करने का प्रयास किया कि इसमें सभी का अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व हो । गांवो व छोटे कस्बों से भी कांग्रेस के सदस्य जोडे गये तथा वार्षिक सत्रों के बीच में भी सतत रूप से ठीक ढंग से कार्य हुए ।

गांधी ने भारतीय जनता को 'एक वर्ष में स्वराज' का वादा किया यदि वे असहयोग आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेते है । लेकिन उन्हे शांतिपूर्ण व वैधानिक तरीके अपनाते हुए बड़े से बड़े बलिदान के लिये साहस व तत्परता दिखाने पर भी बल दिया गया ।

गांधी ने अनेक राष्ट्रीय नेताओं के साथ पूरे भारत का दौरा किया और लोगों को असहयोग आंदोलन के बारे में बतलाते हुए उन्हे इसमें भाग लेने के लिये प्रेरित किया । गांधी ने स्वयं को प्राप्त दक्षिण अफीकी युद्व पदक व केसर-ए-हिंद स्वर्ण पदक लौटा दिये और कहा कि वे ब्रिटिश सरकार के प्रति सम्मान भाव अब नहीं रखते है क्योंकि वह अपनी अनैतिका के पक्ष में गलती पर गलती किये जा रही है । गांधी का अनुसरण करते हुए अनेक नेताओ व अन्य भारतीय व्यक्तियों ने ब्रिटिश उपाधियां लौटा दी और अहिसक असहयोग आंदोलन के विभिन्न कार्यक्रमों में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया । इस मामले में सरकार की प्रतिक्रियायें असफल रही चाहे प्रारम्भ में हस्तक्षेप न करने की नीति हो या बाद में आंदोलन बंद करने के लिये प्रमुख नेताओं का तुष्टिकरण के प्रयास हो । अन्ततः सरकार बलप्रयोग के लिये मजबूर हुई । इसके अन्तर्गत अहिंसक असहयोगी आन्दोलनकारीयों के विरूद्ध हिंसा व उनकी गिरफ्तारी की गई । स्वैच्छिक संगठनो को अवैध धोषित कर दिया गया । जन सभाओं व जुलूसों को बलपूर्वक तितर

बितर किया गया । सामूहिक गिरफ्तारियां की गई व गिरफ्तार लोगों के साथ बर्बरता अत्याचार किये गये ।

दिसम्बर 1920 में आयोजित कांग्रेस के नागपुर सत्र से दिसम्बर 1921 में आयोजित अहमदाबाद सत्र तक कुल एक वर्ष बीत चुका था और गांधी के 'एक वर्ष में स्वराज' के वादे के पूर्ण होने के कोई संकेत नहीं थे । कांग्रेस के सदस्यों में असन्तोष था, लोगों में बैचेनी थी तथा वे गांधी की आलोचना कर रहे थे । कुछ राष्ट्रवादी विद्रोह करना चाहते थे । लेकिन गांधी स्वराज प्राप्ति के लिये हिंसात्मक साधनों के पक्ष में नहीं थे । वह अपनी पूर्व मान्यता पर अडिग थे कि स्वराज प्राप्ति के लिये हिंसा का रास्ता नहीं हो सकता । उन्होने बार बार सत्याग्रह संघर्ष के आत्मशुद्धि पक्ष पर ध्यान आकर्षित किया था । सरकारी हिंसा व दमन के बीच अहिंसा पर अडे रहकर उन्होने अपने ऊपर लगे कायरता के आरोपो को भी झुठलाया । उन्होनें स्पष्ट किया कि यदि असहयोग आंदोलन हिंसक हो जाता है तो वे इसको बंद करने का पूरा प्रयास करेगें और इसे पूरे राष्ट्र में फैलने से रोकेगें । बम्बई के गेट वे ऑफ इंडिया पर प्रिंस ऑफ वेल्स के आगमन पर 17 नवम्बर 1921 को आयोजित सरकारी समारोह में यूरोपिय लोग, पारसियों व अन्य पर हुए हमलों की भी उन्होने निंदा की । गांधी ने भारतीयों से व्यक्तिगत अपील करते हुए ऐसे हिंसात्मक कार्यो से दूर रहने को कहा और जब तक ये उपद्रव समाप्त नहीं हो गये तब तक उपवास रखा जो पाँच दिन तक चला ।

यद्यपि भड़की हिंसा के कारण गांधी ने सविनय अवज्ञा कार्यक्रम स्थगित कर दिया तथापि कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं व दिसम्बर 1921 व जनवरी 1922 में स्वयंसेवकों की गिरफ्तारी व मुकदमेबाजी के कारण गांधी को सविनय अवज्ञा पर अपने पक्ष पर पुनर्विचार करना पड़ा । लेकिन राष्ट्रव्यापी सविनय अवज्ञा के स्थान पर बारदोली, गुजरात में एक सीमित अवज्ञा आंदोलन चलाने का निश्चय किया ताकि वे कार्यकत्ताओं की गतिविधियों पर व्यक्तिगत निगरानी रख सकें । 1 फरवरी 1922 को वाइसराय को लिखे अपने पत्र में गांधी ने इस निर्णय से अवगत कराया और उन्हे भारतीयों के विरूद्ध सरकार द्वारा की जा रही दमनात्मक कार्यवाही को सात दिन में रोकने का समय दिया ।

दुर्भाग्य से 5 फरवरी 1922 को चोरी चौरा में असहयोग आदोलनकारियों व पुलिस के बीच हिंसक मुठभेड़ हुई । यह संयुक्त प्रांत के गोरखपुर जिले का एक छोटा सा गांव था । इस हिंसात्मक घटना का समाचार गांधी के पास तीन दिन बाद पहुँचा तो वे बेहद आहत हुए । उन्होंने कहा कि भारत अभी सविनय अवज्ञा के लिये तैयार नही है और बारदोली में सविनय अवज्ञा का विचार त्याग दिया । 24 फरवरी 1922 को दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की सभा में गांधी के कहने पर एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें चौरी चौरा घटना की निंदा की गई, भारत मे हर जगह पर चल रहे जन सविनय अवज्ञा आंदोलन को स्थगित कर दिया गया और रचनात्मक कार्यक्रमों पर जोर दिया गया । इस प्रकार 24 फरवरी 1922 को असहयोग आंदोलन औपचारिक रूप से समाप्त हुआ ।

2.6.4 आंदोलन का महत्व

यद्यपि असहयोग आंदोलन अपने उद्धेश्यों को प्राप्त नहीं कर सका तथापि यह आंदोलन' गांधी व भारत दोनों के लिये महत्वपूर्ण था । गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस वास्तव में राष्ट्रीय व जन आंदोलन बन गया । कांग्रेस पर गांधी का नियन्त्रण हुआ तथा और स्वतन्त्रता आंदोलन को गति मिली । गांधी ने लोगो में राष्ट्रीयता की भावना जाग्रत की । उन्होने माना कि गांधी का स्वराज का वादा पूरा हो सकता है और उन्होने गांधी के आव्हान पर राष्ट्रीय आंदोलन में उत्साह से भाग लिया । सरकारी आदेशों की आलोचना या अवहेलना करने पर होने वाली सरकारी दमनात्मक कार्यवाही का डर लोगों के दिमाग से निकल गया । साधारण व गरीब लोग भी बडे से बडे बलिदान के लिये साहस व तत्परता का परिचय देने लगे । इस आंदोलन ने इस तथ्य को फिर से पुष्ट किया कि विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सत्याग्रह का माध्यम महान् सम्मावनाओं से परिपूर्ण है तथा सत्याग्रह की सक्रियता व भावना को सरकारी पारम्पारिक तरीकों से नही दबाया जा सकता । स्वराज प्राप्ति के लिये गांधी द्वारा शुरू किये गये अहिंसक सत्याग्रह आंदोलन का भारत की ब्रिटिश सरकार के पास कोई जवाब नही था ।

2.7 बारडोली सत्याग्रह

भारत में ब्रिटिश शासन के औपनिविशिक हितो के कारण सरकार का मुख्य ध्यान राजस्व पर था और वह भारतीय लोगो की आवश्यकता पर बहुत कम ध्यान देती थी । भारतीय किसानों के भूमि सम्बन्धी हितो की भी यही स्थिति थी । परिणामत: भारत के अनेक हिस्सों में भूमि सम्बन्धी असन्तोष उभर रहा था । गुजरात के सूरत जिले में बारडोली तालुक में किसानो द्वारा यह असन्तोष खुल कर व्यक्त किया गया और गांधी के सत्याग्रह तकनीक से इसको हल करने की मांग की गई ।

2.7.1 बारडोली सत्याग्रह के लिये उत्तरदायी कारण

1927 में सरकार ने बारडोली तालुक में राजस्व निर्धारण 22 प्रतिशत बढ़ाने का निश्चय किया । बारडोली में किसान असन्तोष का यह प्रमुख व प्रारम्भिक कारण था । बारडोली के किसानों का कहना था कि यह बढोतरी अनुचित है क्योंकि टैक्स अधिकारी बिना ढंग से जांच किये गलत रिपोर्ट तैयार किया गया है जिससे सरकार टैक्स बढा सके । किसानो ने बढे हुए टैक्स देने में असमर्थता व्यक्त की ।

2.7.2 बारडोली सत्याग्रह का कार्यक्रम

1920-22 के असहयोग आंदोलन के दौरान गांधी ने बारडोली को एक आदर्श स्थान के रूप में चयनित किया था जहां प्रथमत: सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाया जायेगा । तत्पश्चात अन्य स्थानो पर असहयोग आदोलन के उद्धेश्यों की प्राप्ति के लिये ऐसे ही कार्य किये जायेगें किन्तु चौरी चौरा की हिंसात्मक घटना के कारण फरवरी 1922 में यह निर्णय रद्द कर दिया और असहयोग आंदोलन ही स्थगित कर दिया । 1927 में बारडोली में किसान आंदोलन के कारण गांधी फिर परिदृश्य में आये और 12 फरवरी 1928 को उन्होने बारडोली में सत्याग्रह

शुरू करने के संकेत दिये । यद्यपि उन्होने बारडोली सत्याग्रहियों का प्रत्यक्ष नेतृत्व नहीं किया तथापि वे यंग इंडिया में लेख लिखकर अपने विचार व्यक्त करते रहे तथा अभियान का समर्थन करते रहे । वे अभियान की पूरी सूचना रखते थे । यद्यपि गांधी जी अभियान को निर्देशित व प्रेरित करते रहते थे तथापि वल्लभ भाई पटेल ने अब्बास तैयब जैसे साथियों के साथ प्रत्यक्ष नेतृत्व सम्भाला । अब्बास तैयब गांधी के साथ दक्षिण अफीका में काम कर चुके थे । बारडोली तालुक व आस पास के लोगो ने इस आदोलन में उत्साह से भाग लिया । न केवल पुरूषों ने अपितु महिलाओं ने भी आदोलन मे भाग लिया व अलग अलग स्थानो पर नेतृत्व किया । अनेक गांवो के मुखिया व प्राधिकारियों ने भी अपने सरकारी पद त्याग कर अभियान में भाग लिया । सत्याग्रह कैम्प स्थापित किये गये, प्रतिदिन समाचार बुलेटिन जारी किये गये, सूत कातना व अन्य रचनात्मक गतिविधियां शुरू की गई, जनसभायें की गई, गीतो की रचना कर उन्हे गाया गया, प्रार्थनायें की गई, गांधी की आत्मकथा में से चुनिंदा अनुच्छेदो को सभाओं में पढा गया । ग्रामीण बुजुर्गो व प्राधिकारियों को सत्याग्रहियो का साथ देने को कहा गया, राजस्व अधिकारियों से कर जमा न करने के लिये कहा गया । ग्रामीणों ने अपने औजारों को खोल कर छिपा दिया और जब प्राधिकारी या पुलिस उनकी सम्पत्ति जब्त करने व उसे बेचने का प्रयास करती तो ग्रामीण हिंसा का सहारा कदापि नहीं लेते थे । समझाइश वाले तरीको के साथ-साथ सामाजिक बहिष्कार के माध्यम से भी लोगों को सत्याग्रह के साथ जुड्ने के प्रेरित किया गया ।

2.7.3 गांधी की कार्ययोजना

गांधी ने बारडोली के किसानों का समर्थन किया व माना कि उनकी मांगे न्यायोचित है । इसके समर्थन में उन्होने कुँजरू वजी व अमृतलाल ठक्कर द्वारा की गई बारडोली जांच की ओर इशारा किया । उन्होने सत्याग्रहियों को सदा सर्तक रहने की पूर्व चेतावनी दी और बारडोली सत्याग्रह के प्रति निष्ठा बनाये रखें । सत्याग्रह की तकनीक का गुणगान करते हुए उन्होने सत्याग्रह कर रहे किसानों का मनोबल बढाया । साथ ही उन्होने सत्याग्रह के आधारभूत नैतिक मूल्यों के साथ सतत रूप से जुडे रहने को कहा । उन्होने लोगों से बारडोली अभियान का समर्थन करने की अपील की और सत्याग्रह आंदोलन का समर्थन करने बाहर से आये लोगों के प्रयासों को भी सराहा। आंदोलन के बारे में फैलाई जा रही दुर्भावनापूर्ण अफवाहों को भी उनहोने दूर करने का प्रयास किया और, खुली चुनौती दी कि कोई भी बारडोली सत्याग्रह आंदोलन से सम्बन्धित हिसाब किताब का लेखा परीक्षण कर अपने संदेहों का दूर कर सकता है ।

विरोध कर रहे सत्याग्रहियों पर सरकारी कार्यवाही की धमकी पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए गांधी ने कहा कि सैकड़ो-हजारों लोग सत्याग्रही बन रहे है । करो या मरो का भाव लेकर आने वाले इन सत्याग्रहियों पर सरक धमकियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला । ये वो लोग है जो मृत्यु के भय से मुक्त है, धन-सम्पत्ति का मोह त्याग चुके है और आत्म सम्मान को सर्वोपरि मानते है । साथ ही उन्होने इस बात पर जोर दिया कि सरकार के रोष से नाराज न हों और सदा सत्य के मार्ग पर चलें । उन्होने आंदोलन का समर्थन किया व कहा कि सत्याग्रहियों की शिकायतों को सुनने के लिये एक स्वतन्त्र व निष्पक्ष समिति बने व उनके साथ न्याय करे तथा संघर्ष के संदर्भ में गिरफ्तार हुए सत्याग्रहियों को रिहा करने सम्बन्धी शर्तो को लागू करें,

संघर्ष के दौरान जब्त भूमि लौटाई जाये और लोगो को हुए नुकसान का पुर्नभरण करे । उन्होने कहा कि यदि सरकार ये मांगे मान लेती है तो लोग अपना बकाया राजस्व नियमपूर्वक जमा करायें । उन्होने कहा कि सरकार इस आंदोलन से सबक ले की वह सत्य व अहिंसा पर टिके लोगो के विरूद्व नहीं जा सकती । ऐसी स्थिति में उसे लोगों के साथ सहयोग करके उनकी सद्भावना प्राप्त करे व अपना जनाधार मजबूत करें । इसी प्रकार बारडोली के लोग भी आंदोलन से सबक लें कि जब तक वे अहिंसा पर अडिग रहेंगे प्राधिकारियों या किसी से भी डरने की आवश्यकता नहीं है । इस प्रकार संगठित हो अहिंसा पर अडिग रहने की भावना संयुक्त प्रयास से रचनात्मक कार्यक्रमों में संलग्न रहकर विकसित की जा सकती है ।

2.7.4 सत्याग्रह की प्रगति

सरदार पटेल के नेतृत्व में सत्याग्रह आंदोलन अपनी मूल मांगो पर अडा था कि जांच समिति का गठन हो । बाद में मांग थी कि सत्याग्रह में भाग लेने वाले लोगों की जब्त भूमि व सम्पत्ति छोडी जाये और कैद सत्याग्रहियों को रिहा किया जाये । ऐसे में सरकार ने बल प्रयोग का मानस बनाया । सूरत में अडियल प्राधिकारियों को नियुक्त करने, पटेल जैसे प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार करने, सत्याग्रह कैम्पों को जब्त करने व सेना की मदद माँगने जैसे कार्यो का सरकार ने विचार बनाया ।

ऐसी परिस्थितियों में, विशेषत: जब सरदार पटेल के गिरफ्तार होने की आशंका थी, गांधी 2 अगस्त 1928 को बारडोली आ गये ताकि सरदार पटेल के गिरफ्तार होने की स्थिति में वे नेतृत्व सम्भाल सकें । सत्याग्रह आंदोलन के समर्थन में बम्बई विधान परिषद, सेंट्रल असेम्बली व ब्रिटिश संसद में स्वर सुनाई दिये । यद्यपि वाइसराय इरविन व गवर्नर विल्सन जाँच कराने या टैक्स के पुराने दरों को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे तथापि 8 अगस्त 1928 को सरकार अन्तत: झुक गई । उसने विज्ञप्ति जारी कर बताया कि बढ़े हुए करों के मामले की जांच के लिये कमेटी बनाई जायेगी जिसे बूमफील्ड समिति कहा गया । सरकार जब्त भूमि को छोडने, सत्याग्रही कैदियों को रिहा करने वाले राजस्व अधिकारियों को बहाल करने के लिये सहमत हो गई । बदले में सरदार पटेल ने वादा किया कि किसान पुरानी दरो पर निर्धारित कर जमा करायेगे । इस प्रकार बारडोली सत्याग्रह का अन्त हुआ । इधर किसानों ने पुरानी दरो पर भू राजस्व चुकाना शुरू किया उधर आरएस. ब्रूमफील्ड और आरएम. मैक्सेल की बूमफील्ड समिति बारडोली के किसानों की अधिकतर मांगे मान ली और नयी भू राजस्व दरें प्रस्तावित की जिससे किसान, सरदार पटेल व गांधी सभी सन्तुष्ट हुए ।

2.7.5 सत्याग्रह का महत्व

सत्याग्रह की सफलता ने भारत के लोगों मे उत्साह भर दिया । पहली बार सत्याग्रह को इतने बडे स्तर पर परखा गया । बारडोली के पूरे तालुक ने इस आंदोलन मे प्रत्यक्ष भाग लिया और उन्हे समर्थन देश के अन्य हिस्सों तथा दक्षिण अफ्रीका से भी मिला । इसकी सफलता ने सिद्व किया कि यदि लोग अडिग हो तथा हिंसा या उपद्रव के मार्ग पर न चलें तो अन्तत: ब्रिटिश सरकार भारतीयों की मांगो के आगे झुकेगी । इससे न केवल बारडोली अपितु पूरे भारत

के किसानो का मनोबल बडा तथा आशा की किरण जगी । यह आंदोलन पूर्णरूप से गांधी सत्याग्रह के मूलभूत नियमो के अनुसार चला । इस आंदोलन ने यह बात पुष्ट की कि गांधी ने 1922 में असहयोग आंदोलन के दौरान बारडोली का ही चुनाव करके सही ही किया । बारडोली अभियान उनकी अपेक्षाओं पर खरा उतरा और इसकी सफलता से गांधी व कांग्रेस निश्चित रूप से प्रभावित हुए कि सविनय अवज्ञा को राष्ट्रीय स्तर पर परखा जाये और इसके शीघ्र बाद ही गांधी ने 1930 में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरूकर दिया ।

2.8 सविनय अवज्ञा आंदोलन

गांधी जी ने सविनय अवज्ञा आदोलन 193० में नमक कानून का विरोध करने के लिये शुरू किया था । यह कानून भारत में ब्रिटिश शासन की अनेक बुराईयों में से एक था । इस आंदोलन की औपचारिक शुरूआत 12 मार्च व 930 को गांधी द्वारा नमक सत्याग्रह के प्रारम्भ के साथ ही हुई ।

2.8.1 सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण

अपने शोषक औपनिविशिक हितों की रक्षा की नीति पर चलते हुए ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों के दमन व उपेक्षा का भाव जारी रखा । अत: भारत में असन्तोष व्यापक था जबकि 1920 का दशक समाप्ति की ओर था । ऐसी सरकार पर नकेल डालने के लिये कोई भी राजनीतिक दल सक्षम नही था और न ही कोई दल भारतीय आम जनो में पनप रहे असन्तोष को रोक सकती थी । सरकार ने 1919 के सुधारों की प्रगति के बार में रिपोर्ट तैयार करने व सवैधानिक सुधारों के बारे मे सुझाव देने के लिये साइमन कमीशन को नियुक्त किया । इस नियुक्ति को लेकर भी आम तौर पर रोष था । 1928 की नेहरू रिपोर्ट में भारत को स्वतंत्र उपनिवेश बनाने की माँग का समर्थन अंग्रेजों ने नहीं किया । कांग्रेस के अन्दर युवा वर्ग भारतीय आवश्यकताओ के आगे सरकार को झुकाने व दबाव बढाने के लिये अधिक कारगर उपाय करने की माँग करने लगा । वे स्वतन्त्र उपनिवेश के स्थान पर भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्ष में थे ।

1929 की लाहौर कांग्रेस ने अपनी कार्यकारी समिति को अधिकृत कर दिया कि पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लक्ष्य के लिये सविनय अवज्ञा आंदोलन चला सकती है । गांधी ने लार्ड इरविन को लिखे अपने पत्र में ग्यारह सूत्री न्यूनतम मांगो को पूरा करने की माँग की ताकि कांग्रेस को पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये शुरू किये जा रहे सविनय अवज्ञा आंदोलन को रोका जा सके ।14-16 फरवरी 1930 को कांग्रेस की कार्यकारी समिति ने अहमदाबाद के साबरमती आश्रम में सभी की व गांधी को सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के लिये पूर्णत: अधिकृत कर दिया ' नमक सत्याग्रह का तात्कालिक लक्ष्य नमक अधिनियम की अवज्ञा कर ऐसे कानून को हटाने की मांग थी जो समस्त भारतीयों, विशेषत: गरीबों के लिये मुश्किलों से भरा था ।

सरकार द्वारा पारित नमक अधिनियम भारत में तैयार नमक पर कर लगाने के बारे में था । इसके माध्यम से सरकार भारत में उत्पादित नमक पर पूर्ण नियन्त्रण व एकाधिकार करना

चाहती थी । बिना लाइसेन्स प्राप्त किये नमक उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया । इस कानून का उल्लंघन करने पर उत्पादित नमक जक करने व छः माह की कैद का प्रावधान था ।

गांधी ने कहा कि सरकार का ऐसा अधिनियम प्रत्येक भारतीय पर प्रतिकूल असर डालेगा । गरीबों पर तो यह कुठराघात था । उन्होने कहा कि इन कानूनों के कारण गांव बरबाद हो चुके है और बेरोजगारी बढने से गरीबों की दुर्दशा बढ़ी है । उनके अनुसार यह एक घोर अमानवीय कर है ।

आंदोलन के दीर्घकालीन उद्वेश्यों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि गांधी जी ने भारत में ब्रिटिश की बुराईयों पर वार करके इन बुराईयों को तत्काल हटाने पर बल दिया । उन्होने कहा कि औपनिवेशिक शासन के शोषण के कारण भारतीय गरीबी की ओर बढ रहे है । इसने उन्हे राजनीतिक दासता के स्तर पर ला कर खड़ा कर दिया है । इसने भारतीय संस्कृति की जड़ों को हिला दिया है तथा भारतीय आध्यात्मिकता का भी अपमान किया है । अब और इन्तजार करना और सरकारी की बुराईयों का मूक दर्शक बने रहना पाप होगा । अहिंसक सविनय अवज्ञा चलाते हुए गांधी को आशा थी कि सरकार को बुराई के रास्ते से हटाने में वे सफल होगें । उन्हे आशा थी कि सरकार उनकी अपील पर सकारात्मक प्रतिक्रिया करेगी । उन्होने सरकार को चेतावनी दी कि ऐसा न होने पर उनके पास नमक कानून तोडने के रूप में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं होगा । नमक कानून तोडने की कार्ययोजना व प्रस्तावित तिथि सरकार को प्रेषित कर दी गई ।

2.8.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति

गांधी जी की पहल पर सरकार ने सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की । बल्कि उन्होने तो खेद व्यक्त करते हुए दावा किया कि इससे कानून का उल्लंघन होगा व आम शांति भंग होगी ।

परिणामतः गांधी ने अपनी योजनानुसार आगे बढने का निश्चय किया कि अहमदाबाद का साबरमती आश्रम प्रारम्भ बिन्दु होगा जहां से वह 240 मील दूर दाण्डी समुद्र तट की और बढेगा । अपने चुनिंदा सत्याग्रहियों के साथ वे वहां नमक का उत्पादन करेंगे और इस प्रकार नमक कानून का उल्लंघन करेगें । चुने हुए सत्याग्रहियों को उन्होने भावी रणनीति के बारे में दिशा निर्देश दिये। लोगो को उन्होने समझाया कि किस प्रकार नमक कानून तोड़ा जा सकता है । इस कार्यवाही के साथ साथ वे शराब व विदेशी कपडों की दुकान के आगे धरना दे सकते हैं, कर जमा कराने से मना कर सकते है, अदालतों का बहिष्कार कर सकते है, मुकदमेबाजी से दूर रहे व अन्ततः सरकारी पदों से त्यागपत्र दे सकते है । उनका विशेष आग्रह सत्य और अहिंसा के रास्ते पर चलने का था । उन्होने लोगों को सावधान किया कि वे गुस्से मे आकर कुछ न करें । उन्होने संकेत दिया कि ऐसे उल्लंघन वाले कार्यो पर सरकार दमनात्मक कार्यवाही तो करेगी ही किन्तु लोग न तो डरें और न ही प्रतिकार करें । उनका तर्क था कि सत्य और अहिंसा मे जो शक्ति है उससे सरकार पशोपेश मे पड़ जायेगी और अन्ततः उसे अपने बुरे कार्य छोडने पड़ेंगे । उन्होने कहा कि सरकार द्वारा गिरफ्तारी किये जाने पर लोग कांग्रेस कार्यसमिति से दिशा निर्देश ले सकते है । चुने हुए सत्याग्रही स्वयंसेवकों को गांधी ने निर्देश देते हुए बताया

कि उन्हे सत्याग्रह प्रयाण के दौरान क्या करना है । उन्होने स्वास्थ्य एवं भोजन सम्बन्धी निर्देश दिये । उन्होने केवल उन स्वयंसेवकों को चुना जो शारीरिक श्रम व मानसिक सहनशक्ति में श्रेष्ठ है ।

इस दौरान कांग्रेस कार्यकारी समिति ने सभी कांग्रेसियों व लोगों से कहा कि सत्याग्रह संघर्ष में हर सम्भव सहयोग करें । साथ ही अहिंसा व्रत के पालन पर भी बल दिया गया । गांधी द्वारा नमक कानून तोडने के बाद कांग्रेस ने सदस्यों व जनता से कहा कि गांधी जी का अनुकरण करें । राष्ट्रीय, प्रान्तीय व स्थानीय स्तरों पर नेतृत्व की वैकल्पिक व्यवस्था की गई । पटेल को प्रयाण कर रहे सत्याग्रहियों के आगे चलने के लिये चुना गया । मिलने वाले लोगों को उन्होने आंदोलन के लक्ष्यों के सम्बन्ध मे शिक्षित किया । उन्होने उनसे शराब से दूर रहने, छुआछूत छोडने और रचनात्मक कार्य करने का निवेदन किया ।

12 मार्च 1930 को प्रात: लगभग 6:30 बजे गांधी ने रामधुन के साथ प्रसिद्व डांडी मार्च शुरू की। गांधी आगे आगे और सत्याग्रही उनके पीछे थे मार्ग में पड़ रहे गांवो के लोगों से गांधी ने बात की और सैंकडो-हजारो लोगों को स्वराज के लिये भारतीय आंदोलन में साहस और अहिंसा के साथ भाग लेने के लिये प्रेरित किया ।

5 अप्रेल 1930 को गांधी डांडी पहुँचे । अगले दिन 6 अप्रेल 1930 को प्रात: 6:30 बजे दाण्डी के समुद्रतट पर पहुँचे, एक मुट्ठी नमक उठाया और प्रतीकात्मक रूप से नमक कानून का उल्लंघन किया । कुछ देर बाद अन्य स्वयंसेवकों को निर्देश दिया गया कि गांधी का अनुसरण करें । फिर क्या था, संकेत मिलते ही देश भर में नमक कानून तोड़ा गया ।

शुरू में सरकार ने दमनात्मक नीति नहीं अपनाई और हस्तक्षेप नहीं किया । उन्हे आशा थी कि गांधी जी लोगों को संघटित करने में सफल नहीं होगें । नमक कानून का उल्लंघन करते ही उन्होने गांधी को गिरफ्तार नहीं किया । भारतीय सरकार ने अपने अधीनस्थ अधिकारियों को सलाह दी कि आम गिरफ्तारियों से बचें, न्यूनतम बल प्रयोग करें, यदि आवश्यक हो तो नेताओं की गिरफ्तारी प्राथमिकता से की जाये ताकि आंदोलन कमजोर पड़े । किन्तु सरकार ने जैसा सोचा था वैसा कुछ नहीं हुआ । अन्तत: उसने गिरफ्तारी और बल प्रयोग के पारम्परिक तरीके अपनाये । गांधी जी ने घोषणा की कि वे नमक कानून का उल्लंघन जारी रखेगे और घरसाना नमक उद्योग पर धावे का नेतृत्व करेगें । आदोलन के तेजी से बढते कदम, प्राधिकारियों, गवर्नरों, सैन्य अधिकारियों के दबाव के कारण अन्तत: वायसराय इरविन ने 4 मई 1930 का गांधी को गिरफ्तार करने का आदेश दिया । 4 व 5 मई 1930 के बीच के रात को 12:45 बजे हथियार बन्द पुलिसकर्मियों के साथ सूरत के ब्रिटिश जिला मजिस्ट्रेट ने गांधी को गिरफ्तार कर लिया व उन्हे बम्बई के येरावदा सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया ।

वैकल्पिक नेताओं ने घरसाना नमक उद्योग की ओर अहिंसक मार्च किया । इस बार सरकार नहीं चूकी व उसने बल प्रयोग कर गिरफ्तारियां की । समझौता वार्ता के लिये सरकार का एक प्रतिनिधि गांधी से जेल मे मिलने गया । समझौता अन्तत: 5 मार्च 1931 को गांधी इरविन समझौता के रूप में हुआ । अन्य बातो के अलावा इस समझौते में सविनय अवज्ञा आंदोलन स्थगित करने पर भी सहमति व्यक्त की ।

2.8.3 आंदोलन का महत्व

जहां तक सविनय अवज्ञा आंदोलन की उपलब्धियों का प्रश्न है- इसके अन्तर्गत शुरू किया गया नमक सत्याग्रह ने अपने तात्कालिक लक्ष्य काफी हद तक प्राप्त कर लिये । यद्यपि सरकार ने नमक कानून निरस्त नहीं किये किन्तु कानून की व्याख्या कुछ इस प्रकार की गई कि गरीब भारतीयों को राहत मिली । नमक उत्पादन योग्य क्षेत्रों के आस-पास रहने वाले लोगों को घरेलू उपयोग हेतु नमक इकट्ठा करने या उत्पादन करने की छूट दी गई । ऐसी व्यवस्था की गई कि गांव के गांव में नमक बेचा जा सकता है बाहर नहीं । सरकार ने कुछ अन्य रियायतें भी दी जैसे अहिंसक आदोलनकारियो को माफी, जब्त सम्पत्ति को उदारतापूर्वक लौटाना व विशेष नियन्त्रक अध्यादेशों को वापिस लेना । सरकार ने यह भी सहमति व्यक्त की कि भारत में संवैधानिक सुधारों पर होने वाली चर्चाओ में कांग्रेस के प्रतिनिधियों को भी आमन्त्रित किया जायेगा । सविनय अवज्ञा आंदोलन ने कई दिशाओं में प्रगतिशील कदम बढाये । साम्राज्यवाद विरोधी व राष्ट्रीय संघर्ष पहले की अपेक्षा बडे स्तर पर चलाये गये । प्रभावशाली नेतृत्व केवल राष्ट्रीय स्तर तक ही सीमित नहीं था, प्रान्तीय व स्थानीय स्तर पर भी अच्छी संख्या में प्रभावशाली नेता उपलब्ध थे । सरकार आगे बढ़कर आन्दोलनकारियों से वार्ता कर रही है- इससे आन्दोलनकारियों का मनोबल बड़ा । ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था । समाज के विभिन्न वर्गो के लोगों को इस अभियान के लिये संघटित किया गया- गरीब, निरक्षर, स्त्री-पुरूष, धार्मिक, अल्पसंख्यक, ग्रामीण, शहरी, उच्चवर्ग, निम्नवर्ग, छात्र, जनजातियां, व्यापारी आदि । भारत में ही नहीं अपितु विदेशो मे प्रेस रिपोर्टो के माध्यम से लोगों को आंदोलन के समाचार मिल रहे थे।

गांधी के नेतृत्व में प्रथम अभियान व बाद में घरसाना नमक अभियान पूर्ण रूप से सत्याग्रह संघर्ष के मूलभूत सिद्धान्तो के अनुसार चलाया गया । आंदोलन का तात्कालिक उद्देश्य नमक कानून के परिणामस्वरुप गरीब जनता पर आई विपदा से उन्हे मुक्ति दिलाना । ये कानून ब्रिटिश शासन के अन्याय के प्रतीक थे और सत्याग्रहियों का यह कर्त्तव्य था कि इन कानूनों की अवज्ञा करते दृढ़तापूर्वक सत्य और न्याय की मांग करे । सत्याग्रहियों ने अहिंसा व्रत का कड़ाई से पालन किया । सत्याग्रहियों की खास विशेषता थी- आत्मनिर्भरता । सविनय अवज्ञा के दौरान उन्हे स्वयं के लिये अथवा परिवार के लिये किसी भी प्रकार की भौतिक सहायता लेने से इन्कार करने को । जन समर्थन प्राप्त करने के लिये पर्चे बांटे गये, प्रेस रिपोर्टे छपवाई गई । शुरू से अन्त तक सरकार से बातचीत के माध्यम से सौहार्दपूर्ण समझौते तक पहुँचने के प्रयास किये गये । अभियान की विभिन्न योजनाओं के संदर्भ में सरकार को अवगत कराया जाता रहा।

सविनय अवज्ञा आंदोलन ने यह भी साबित किया कि सत्याग्रह सरकार के जुल्मों का प्रभावपूर्ण तरीके से सामना कर सकता है । इसने दुनिया को दिखा दिया कि राज्य की हिंसा व बुराई का उसी रूप में सामना करना आवश्यक नही है । हमारे पास अहिंसा के रास्ते का विकल्प उपलब्ध है और यह हिंसा व बुराई का सामना बेहतर ढंग से कर सकता है ।

2.8.4 सविनय अवज्ञा का पुनर्त्थान व अन्त

1931 के गांधी इरविन समझौते के अनुसार गांधी इंग्लैण्ड में आयोजनीय दूसरे गोल मेज सम्मेलन मे भाग लेने के लिये सहमत हो गए जिसमें भारत में भावी संवैधानिक संशोधनों पर विचार विमर्श किया जाना था । लंदन प्रस्थान करने से पूर्व उन्होने कहा कि गोल मेज सम्मेलन के कोई सार्थक परिणाम निकलने की सम्भावना उन्हे दिख नहीं रही है । उन्हे आभास था कि इग्लैंड के नेताओं की राजनैतिक मंशा भारतीयों के सवैधानिक संशोंधनो के बारे मे अपेक्षाओ के विपरीत है । गोल मेज सम्मेलन में वही हुआ जिसका गांधी को डर था और वह इग्लैण्ड से निराश ही लौटे ।

इस दौरान भारत में लार्ड इरविन के स्थान पर लार्ड वैलिंग्टन वायसराय बने । वैलिंग्टन के नेतृत्व में सरकार ने कांग्रेस, उसके नेताओं, राष्ट्रीय आकांक्षाओ व लोगों की गतिविधियों के प्रति किए जाने वाले कार्यवाही को पूरी ही उलट दिया । गांधी-इरविन समझौते का खुला उल्लंघन हुआ । सरकार ने हर तरफ हिंसा व आतंक का माहौल बना दिया ।

लगभग चार माह तक अनुपस्थित रहने के बाद गांधी इग्लैण्ड से भारत 28 दिसम्बर 1931 को पहुँचे । कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक 29 दिसम्बर 1931 को हुई । गांधी ने वैलिंग्टन से मिलने का निवेदन भेजा और सविनय अवज्ञा आंदोलन उस मुलाकात तक के लिये रथगित ही रखने का प्रस्ताव दिया । वायसराय ने मिलने से इन्कार कर दिया और गांधी को चेतावनी दी कि आंदोलन यदि पुन: शुरू किया जाता है तो गांधी व कांग्रेस को इसके परिणाम भुगतने होगें । 3 जनवरी 1932 को गांधी ने राष्ट्र का आव्हान किया और कहा कि लोग एक और लम्बे व कठिन संघर्ष के लिये तैयार रहें । सरकार ने गांधी को पहले ही 4 जनवरी 1932 को गिरफ्तार कर लिया । सविनय अवज्ञा के दौरान आकस्मिक स्थितियों से निपटने के लिये प्राधिकारियों को असीमित शक्तियाँ देने सम्बन्धी अध्यादेश जारी किये गये । यद्यपि तैयारी पूरी नहीं थी तथापि आंदोलन में लोगों की सहभागिता विशाल थी । शराब व विदेशी कपड़ो की दुकानों पर धरने दिये गये, विभिन्न राष्ट्रीय दिवस मनाये गये, प्रदर्शन किये गये सरकारी अध्यादेशों का उल्लंघन किया गया । बाद में उन्होने गिरफ्तारियां भी दी ।

भारतीयों से निपटने में सरकार ने कोई कसर नहीं छोड़ी । सविनय अवज्ञा को कुचलने के लिये कठोर और दमनकारी कार्यवाही की गई । कांग्रेस जैसे संगठनो को अवैध घोषित किया गया और उनकी जमा राशि जब्त कर ली गई । आंदोलन मे भाग लेने वालों पर हिंसात्मक कार्यवाही की गई । जेलों में उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया गया । अपराधी घोषित प्रतिभागियों से कर व जुर्माना वसूल करने के लिये उनकी सम्पत्ति या तो जब्त कर ली गई या सस्ते दामों में बेच दी गई । महिलाओं के साथ भी दुर्व्यवहार किया गया । प्रेस पर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये गये ।

सरकार की इस प्रकार की कार्यवाही ने पुन: शुरू किये गये सविनय अवज्ञा आंदोलन पर बेहद असर डाला । धीरे-धीरे लोगों की कम होती गई और उत्साह में भी कमी आती गई । कई स्थानो पर प्रतिभागियों ने अहिसंक संघर्ष के मूल सिद्धान्तो का पालन भी नहीं किया ।

अन्ततः 19 मई 1933 को गांधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन बारह सप्ताह के लिये स्थगित कर दिया । 14 जुलाई 1933 को उन्होने जनता सविनय अवज्ञा आंदोलनो को समाप्त करने का आव्हान किया और अलग-अलग चल रहे सत्याग्रहों का समर्थन किया । यह लगभग एक वर्ष तक चला और अन्ततः 7 अप्रेल 1934 को गांधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन को पूर्णतः बंद करने का निश्चय किया ।

2.9 वाइकोम सत्याग्रह

ब्रिटिश शासन में ट्रेवेनकूर राज्य का एक बड़ा गांव और भारत के केरल राज्य का एक भाग, वाइकोम हिन्दुओं के लिये एक प्रमुख धार्मिक स्थल है । भगवान शंकर के भक्त यहां बडी संख्या मे पहुँचते है । ब्रिटिश शासन के दौरान भगवान शंकर के मंदिर के आस-पास की सड़के सार्वजनिक थी । किन्तु मंदिर मे काम करने वाले और वहीं आस-पास रहने वाले रूढ़िवादी पुजारियों व ब्राहमणों ने उन सड़को पर अछूतो का आवागमन यह कहकर था बंद करवा दिया कि इससे मंदिर या वे स्वयं अपवित्र हो जाते है । कुछ प्रगतिशील व उत्साही सुधारक इन सड़कों को सभी जाति, धर्म और सम्प्रदायों के लिये सार्वजनिक करना चाहते थे । इसके लिये उन्होने गांधीवादी सत्याग्रह का रास्ता चुनने का निश्चय किया । सीरिया के एक इसाई जार्ज जोसफ ने इसकी शुरूआत की । प्रारम्भ में इसमें पचास स्वयंसेवक थे । धीरे-धीरे इनकी संख्या सैकडों फिर हजारों मे बढ़ गई । इन स्वयं सेवकों में निम्न व उच्च सभी जातियों के लोग थे ।

इस प्रकार वाइकोम सत्याग्रह को गांधी ने प्रत्यक्षतः शुरू नहीं किया । तथापि उनका आशीर्वाद व उनका दिशानिर्देश सत्याग्रहियों को मिलता रहा । गांधी ने 'यंग इण्डिया' में छुआछूत, धर्म और सत्याग्रह के बारे में खूब लिखा । सत्याग्रहियों ने यह आदोलन 1924-25 तक जारी रखा । अप्रेल 1925 से गांधी ने इस सत्याग्रह में प्रत्यक्षतः भाग लिया ।

2.9.1 वाइकोम सत्याग्रह के उद्धेश्य

वाइकोम सत्याग्रह का तात्कालिक लक्ष्य मंदिर के आस-पास की सड़के सभी के लिये खोलना था । लेकिन इस आदोलन का मूल तत्व यह था कि मानव को मूलभूत अधिकार दिलाना था जिससे छुत-अछूत का भेद न रहे और सभी को सम्मान से जीने का अवसर मिले । इस प्रकार इसका लक्ष्य हिन्दु धर्म में कतिपय मूलभूत सुधार करना था । ट्रेनकूवर राज्य व विधानसभा के कई सदस्य इन सुधारों का समर्थन करने के पक्ष मे नहीं थे । उन्होने इसका विरोध किया व सत्याग्रहियों के विरूद्ध पुलिस बल प्रयोग का समर्थन किया । इस प्रकार सभी इनके विरोधी हो गये ।

2.9.2 आंदोलन की प्रगति व कार्ययोजना

सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की गई । हथकरधा और विद्यालय भवन निमार्ण व पर्यावरण को स्वच्छ रखने जैसे रचनात्मक कार्य शुरू किये गये । रूढ़िवादी ब्राहमणों को समझाने के लिये बैठके हुई ताकि वे अपने भेदभावपूर्ण व्यवहार छोड़ सके ।

प्रारम्भ में ट्रेवेन्क्रूर के महाराजा के रीजेन्ट को अपीलें व याचिकायें प्रेषित की गई । साथ ही ब्राहमणों व मंदिर के पुजारियों से भी प्रार्थना की गई । जब वांछनीय परिणाम नही निकले तो प्रतिबन्धित सड़कों पर उच्च जाति के लोगों का सवर्ण जत्था व अछूतो का जुलूस निकाला गया । जब ब्राहमणों ने अभियान में भाग लेने वालों पर आक्रमण किये और उन्हे पीटा तो उन्होने कोई प्रतिरोध नहीं किया । जब नेताओ के एक समूह को गिरफ्तार कर लिया गया तो वैकल्पिक नेता तैयार हो गये और आंदोलन शांतिपूर्वक व अहिंसक रूप से चलता रहा । जब पुलिस ने मोर्चाबन्दी की और सत्याग्रहियों को सड़को व मंदिर में प्रवेश करने से रोका तो सत्याग्रहियों ने प्रार्थना और सूत कातना जैसे अहिंसक कार्य शुरू कर दिया । यह नित्यप्रति दिन चलता रहा । मानसून में जब सड़के पानी से भर जाती, पुलिस तो नावों में सवार हो जाती पर सत्याग्रही बारी-बारी से वहीं डटे रहे । पानी कंधो तक ऊपर आने के बावजूद उन्होने अपनी प्रार्थनायें जारी रखी । मोर्चेबन्दी को हटाना या उस पर चढने का तो उन्होने प्रयास ही नहीं किया ।

2.9.3 वाइकोम सत्याग्रह में गांधी का नेतृत्वओ

अप्रेल 1925 में ट्रेवनकूर राज्य पहुँचने पर गांधी ने सत्याग्रह में प्रत्यक्षत: भाग लिया । वह राज्य के प्राधिकारियों से मिले और उन्हे विरोध कर रहे सत्याग्रहियों का पक्ष समझाने का प्रयास किया । गांधी ने इस आंदोलन का शुरू से ही समर्थन किया था । उन्होने 'यंग इण्डिया' के विभिन्न अंको में वाइकोम सत्याग्रह से जुडे विभिन्न मामलों पर अत्यधिक संख्या मे लेख लिखे ।

उन्होने कहा कि वाइकोम सत्याग्रह यदि सत्य और अहिंसा के मार्ग पर टिका रहता है तो यह पूर्णत: औचित्यपूर्ण है तथा इसे पूर्ण जनसमर्थन मिलना चाहिये । उन्होने वाइकोम अभियान के संचालन पर सन्तोष व्यक्त किया और कहा कि भविष्य में इस मार्ग पर चलने वाले कार्यकर्ताओं के लिये यह एक आदर्श बन सकता है । उन्होने सत्याग्रहियों को सलाह दी कि वे अपना अभियान जारी रखे और साथ ही राज्य तथा लोगों का समर्थन पाने का प्रयास भी करते रहें । साथ ही उन्होने यह भी कहा कि वे स्वावलम्बी बनें । उन्होनें उनका मनोबल बढाते हुए कहा कि वे एक अच्छे कार्य के लिये विरोध कर रहे है, उन्हे अपने साधन और साध्य में भरोसा होना चाहिये, अन्त में जीत उन्ही की होगी ।

जातिवादी हिन्दुओ द्वारा छुआछूत व्यवहार की प्रथा की उन्होने घोर आलोचना की । उन्होने इस सत्याग्रह को स्वराज की लड़ाई से कम महत्वपूर्ण नही माना । यह युगो से चली आ रही कुप्रथा व पूर्वाग्रह के विरूद्ध लडाई है । रूढ़िवाद, अंधविश्वास झूठे रीति रिवाज ऐसी प्रथाओं का समर्थन करते है । यह धर्म के नाम पर अधर्म है, ज्ञान के नाम पर अज्ञानता है । छुआछूत पाप है और हिन्दु इस पाप के भागीदार बन रहे है । उन्हे स्वयं इस प्रथा को अपने जीवन से हटा देना चाहिये । उनके लिये शर्मनाक है ओर जब तक वे इससे छुटकारा नही पा लेते, उन्हे स्वयं को शुद्ध नहीं मानना चाहिये । इसके लिये कष्ट भी झेलना पड़े तो झेले और इस प्रकार अपने भाई बहनो के प्रति अपना कर्ज चुकाये ।

गांधी जी ने सत्याग्रह अभियान मूल सिद्धान्तों पर टिके रहने की आवश्यकता पर भी बल दिया । उन्होने हमेशा कहा कि वाइकोम अभियान के कार्यकर्त्ता हमेशा सत्य और अहिंसा के मार्ग पर डटे रहें । उन्होने कहा कि सत्याग्रहियों को यह प्रयास करना चाहिये कि वे अपने विरोधियों द्वारा किये जा रहे भेदभावपूर्ण व्यवहार त्याग देने के लिए बौद्धिक रूप से समझायें । उनके विरोध के कारण यदि विरोधी उन पर वार भी करें तो भी वे प्रतिकार ने करें । वाइकोम सत्याग्रही किसी भी प्रकार की सजा को चुपचाप सहे और अपने विरोधियों के प्रति कोई दुर्भावना न रखें । वाइकोम सत्याग्रह के सुधारमूलक लक्ष्य जोर जबरदस्ती से प्राप्त नही किये जा सकते । उन्होने कहा कि सत्याग्रही के लिये साधन की शुद्धता साध्य से अधिक महत्वपूर्ण है । अगर वे धैर्य बनाये रखते है और कष्ट सहने के लिये सदैव तत्पर रहते है तो उनकी सफलता निश्चित है । उन्होने सत्याग्रहियों को सलाह दी कि यदि वे ऐसा ही करेगें तो रूढिवादी ब्राहमण स्वेच्छा से भेदभावपूर्ण व्यवहार त्याग देंगे और' उनमें 'हृदय परिवर्तन' होगा । उन्होने सत्याग्रहियों से स्वावलम्बी बने रहने पर भी बल दिया और कहा कि उन्हे जन समर्थन के अतिरिक्त किसी और समर्थन की आवश्यकता नही है । सत्याग्रही अपने लक्ष्य और गतिविधियों के बारे मे अपने विरोधियों को भी भयमुक्त रखे और उनके प्रति प्रेम प्रदर्शित करें ।

गांधी जी का अनुमान सही था । सत्याग्रह सफल हुआ । जब गांधी जी ट्रेवनकूर राज्य गये और राज्य अधिकारियो से कहा कि वे मोर्चाबन्दी हटायें तो वे मान गये । लेकिन जब पुलिस ने मोर्चाबन्दी हटा दी तो भी सत्याग्रहियों ने कहा कि वे इसका अनुचित लाभ नहीं लेगें । जब तक मंदिर के आस-पास की सड़क के सार्वजनिक उपयोग के बारे में ब्राहमण सन्तुष्ट व तत्पर नहीं हो जाते तब तक वे इस सड़क पर प्रवेश नहीं करेंगे । 1925 की हेमन्त ऋतु में ब्राहमणों ने घोषणा की कि वे अछूतों की स्वीकार करने के लिये तैयार है । 1937 में ट्रेवनकूर के महाराजा ने एक शाही फरमान जारी कर राज्य के सभी मात्रा के दरवाजे सभी हिन्दू नागरिकों के लिये खोल दिये । मंदिर के दरवाजों के साथ-साथ केवल ट्रेवनकूर राज्य मे ही नही अपितु भारत के अन्य हिस्सो में भी कई अन्य सार्वजनिक संस्थाओ के दरवाजे भी सभी के लिए क्रमशत: खुल गये ।

2.9.4 सत्याग्रह का महत्व

इस प्रकार वाइकोम सत्याग्रह शिव मंदिर के आस-पास की सड़के सभी जाति बन्दुओं के लिये खुलवाने के अपने तात्कालिक लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुआ । इस अंदोलन ने अछूत कहलाने वाले भारतीयों द्वारा झेली जा रही अन्य कई समस्याओं को हल करने में प्रेरक का काम किया । इसने उच्च वर्ग के लोगों को कमजोर वर्ग के लोगो के प्रति अपनी नैतिक जिम्मेदारी का भी एहसास कराया । इसने अछूत कहलाने वाले भारतीयों को सम्मान व न्याय प्राप्त करने का रास्ता बताया । गांधी का यह मानना कि यह सत्याग्रह स्वराज के सत्याग्रह से कम महत्वपूर्ण नही है, इस बात का संकेत था कि ब्रिटिश राज के विरूद्ध चलाये जा रहे राजनीतिक स्वतन्त्रता आंदोलन के साथ-साथ भारत में विद्यमान सामाजिक आर्थिक बुराईयों से लड़ना भी उतना ही महत्वपूर्ण है । वाइकोम सत्याग्रह इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था कि यह इस बात का प्रतीक था कि धार्मिक अज्ञानता और मूढ़ता से लडना भी आवश्यक है । अन्त में

अपने मूल सिद्धान्तो पर चले इस सत्याग्रह ने यह भी दिखाया कि समाज में पनप रही विभिन्न तनावपूर्ण स्थितियों से लडने के लिये यह बेहद उपयोगी है ।

2.10 भारत छोडो आंदोलन

1942 का भारत छोड़ो आंदोलन भारत की स्वतन्त्रता के लिये गांधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा चलाया गया अंतिम जन आंदोलन था । अंग्रेजो को 'भारत छोड़ो' का आव्हान करते हुए उन्होने उनसे कहा कि भारत की स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित करते हुए वे इग्लैण्ड लौट जायें । भारत की स्वतन्त्रता राष्ट्रीय आंदोलन की तात्कालिक व न्यूनतम माँग है और गांधी के अनुसार इस मांग के साथ कोई समझौता या सौदेबाजी नही हो सकती । लोगों ने इस आंदोलन में साहस और उत्साह से भाग लिया । औपनिवेशिक आकांक्षाओ व विश्व युद्ध के परिणास्वरूप उपजी स्थिति के कारण सरकार ने इस आंदोलन को कुचलने के लिये अनेक जुल्म किये ।

2.10.1 आंदोलन के कारण

1930 का दशक समाप्ति की ओर था और भारतीयों मे गहरा असन्तोष था । भारत में संवैधानिक सुधारो के लिये गठित क्रिप्स मिशन कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं प्राप्त कर सका । इससे स्पष्ट था कि ब्रिटेन भारतीयों की आकांक्षाओ के अनुरूप कार्य करने के लिये तत्पर नहीं है । उसने भारत पर द्वितीय विश्व युद्ध में उसका साथ देने का दबाव भी डाला था । ब्रिटिश के इस प्रकार के अधिकार पूर्वक नियन्त्रण के व्यवहार के आगे झुकने के लिये कई राष्ट्रवादी नेता तैयार नहीं थे । वे चाहते थे कि भारत को स्वतन्त्रता प्रदान करने के संदर्भ में वे अपना इरादा स्पष्ट करें । लेकिन सरकार ने ऐसी कोई घोषणा नहीं की । इसके विपरीत उसने किसी भी प्रकार के विरोध को कुचलने की तैयारी की और द्वितीय विश्व युद्ध के कारण उपजी स्थितियों से निपटने की तैयारी की ।

ब्रिटेन द्वारा भारतीयों को सत्ता हस्तांतरण की अनिच्छा के साथ एक कारण और था जिससे आम जनता में असंतोष था । विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप आवश्यक वस्तुओ के दाम आसमान छू रहे थे । बंगाल व उड़ीसा में सरकार ने आक्रमणकारी जापानियों को रोकने के उद्धेश्य से मछुआरों की नावें अपने कब्जे में ले ली थी । इससे भी लोग नाराज हो गये । भारतीयों में सरकार के प्रति यह भरोसा भी नही था कि भारत पर जापानी आक्रमण की स्थिति मे सरकार उनकी जान-माल की सुरक्षा कर सकेगी । उन्हे लगता था कि ब्रिटेन शीघ्र ही साम्राज्यवादी राष्ट्र के रूप मे अपना स्तर खो देगा । अत: नेताओ के साथ-साथ जनता भी चाहती थी कि भारत औपनिवेशिक शासन से जल्दी से जल्दी मुक्त हो ।

2.10.2 आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गांधी की भूमिका

गांधी जी भारतीयों की मनोभावना समझ चुके थे । उन्होने अपने कुछ विश्वसनीय साथियों को देश भर का दौरा कर लोगों के मनोभाव को पढने के लिये भेजा । जब वे आश्वस्त हो गये कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये चलाये जाने वाले एक और आंदोलन के लिये भारतीय तैयार है, गांधी ने सरकार के विरूद्ध एक अहिंसक असहयोग आंदोलन की परिकल्पना की ।

गांधी की योजना के अनुसार यह एक खुला जन आंदोलन था जिससे सरकारी कामकाज ठप्प हो जाये । इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि उनकी योजना सत्ता हथियाना या ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फैकना हो । उन्होने दावा किया कि यह सम्बंधो के पुनर्निर्धारण का कार्यक्रम है जिसके अन्त में शान्तिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण होगा ।

आंदोलन का कार्यक्रम बनाने में गांधी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । उन्होने 12 सूत्रीय कार्यक्रम बनाया जिसमें अहिंसा व्रत के पालन पर बल दिया गया था । गांधी के कार्यक्रम का विवरण इस प्रकार है :-

1. देशभर में 24 घंटे की हड़ताल
2. गांवो में जनसभा करके आंदोलन चलाने के कांग्रेस के लक्ष्यो से लोगो को अवगत कराना
3. युद्ध के लिये ब्रिटेन द्वारा चलाये गये भर्ती अभियान के प्रति भारत का असहयोग व्यक्त करने के लिये विरोध मार्च करना
4. राजकीय सेवाओं से त्यागपत्र
5. नमक कानून का उल्लंघन
6. छात्रों द्वारा स्कूल व कॉलेज की पढ़ाई छोडना
7. विदेशी कपड़ो व शराब की दुकानो पर धरना देना
8. रेल सड़क यातायात मे अवरोध डालना
9. शहरी औद्योगिक मजदूरो को हडताल पर जाने के लिये प्रेरित करना
10. सैन्य बल कर्मियों को विद्रोह करने के लिये प्रेरित करना
11. कर जमा करने से मना करना
12. समानान्तर सरकार का गठन

उन्होने कहा कि इस कार्ययोजना में जो भी विषय अहिंसक आंदोलन के दायरे में आयेगें उन्हे शामिल किया जा सकता है ।

गांधी जी ने भारत छोडो आंदोलन की योजना बनाने में सक्रिय हिस्सा लिया । समाचार पत्र में अपने लेखों तथा कांग्रेस व अन्य संगठनो द्वारा उपलब्ध मंचो से दिये अपने भाषणो मे गांधी ने आंदोलन के पक्ष में जनमत तैयार करने का प्रयास किया । उन्होने कहा कि भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता का मजबूत दावा करना चाहिये और इससे कम किसी कीमत पर समझौता नहीं करना चाहिये । उन्होने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये लोगों को 'करो यो मरो' का नारा दिया । इस नारे का अर्थ था कि भारतीय साहस का परिचय देते हुए भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने के लिये बड़े से बड़े बलिदान के लिये तैयार रहना चाहिये । उन्होने कहा कि ब्रिटिश शासन से पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग करने का कांग्रेस व जनता को पूरा हक है । उन्हे आशा थी कि अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय भारतीयों का समर्थन करेगा । कांग्रेस के अन्दर उन्होने प्रमुख नेताओं से विचार विमर्श कर आंदोलन के संदर्भ में उनके विचार जानें । उनहोने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक दौरे कर लोगों को आंदोलन में भाग लेने के लिये प्रेरित किया । उन्हे पूरा भरोसा था कि भारत के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता का लक्ष्य औचित्यपूर्ण है । इस मामले में यदि कोई उनका विरोध भी करता है तो शीघ्र ही उसे अपनी गलती का एहसास होगा तथा शीघ्र ही दृढ़ता से साथ हो जाएगा ।

उन्होने प्रेस से भी आग्रह किया कि वह स्वतन्त्र व साहसपूर्वक अपना कर्त्तव्य निभायें । उन्होने स्थानीय शासको से भी आग्रह किया कि वे भी पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग का समर्थन करें । उन्होने छात्रों व शिक्षको से भी कहा कि वे अपने दिलों में स्वतन्त्रता की ज्योति जलाये रखें और साहसपूर्वक कांग्रेस का समर्थन करें तथा भारत की आजादी के लिये अपना केरियर भी त्यागना पड़े तो तैयार रहें । राज्य कर्मियों से भी उन्होने ऐसा ही आग्रह किया ।

14 जुलाई 1942 को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई । इसमें गांधी का जनसंघर्ष का सुझाव स्वीकार कर लिया गया । इसका अनुमोदन करने के लिये बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक प्रस्तावित की गई । 7 अगस्त 1942 को बम्बई में आयोजित बैठक में कई कांग्रेसी एकत्रित हुए । 8 अगस्त 1942 को मध्यरात्रि के कुछ देर बाद ही गांधी ने लोगो को सम्बोधित किया । ये लोग बम्बई के गोवालिया टैंक पर जमा हुए थे । अपने प्रभावपूर्ण भाषण में उन्होने कहा कि भारत के लिये पूर्ण स्वराज्य आंदोलन का न्यूनतम व तात्कालिक लक्ष्य है और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये वे 'करने या मरने' के लिये तैयार रहें । उन्होने कहा कि आंदोलन शुरू करने से पूर्व वाइसराय से कांग्रेस की मांगे मानने के लिये निवेदन किया जायेगा । इस दौरान उन्होने कांग्रेसियों व जनता को निर्देश दिया कि वे रचनात्मक कार्यो में लगें और स्वतन्त्र स्त्री-पुरूषों की तरफ व्यवहार करें ।

सम्भागियों के विसर्जित होने के कुछ घंटो बाद ही सरकार ने गांधी व कांग्रेस के कुछ प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया । गांधी और प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के समाचार ने चिंगारी का काम किया और गांधी व अन्य प्रमुख नेताओं के नेतृत्व के बिना ही 'भारत छोड़ो आंदोलन' शुरू हो गया । सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिये बल प्रयोग करने का निश्चय किया । जेल में पड़े गांधी को भी राष्ट्रीय नेताओं से मिलने की अनुमति नहीं दी गई । आंदोलन की प्रगति के समाचार भी उन तक नहीं पहुँच पाये । इस प्रकार आंदोलन के संचालन में गांधी कोई भूमिका अदा नहीं कर पाये । बल प्रयोग व दमन से सरकार ने आंदोलन में जनसहभागिता को कुछ ही समय में कम कर दिया ।

2.10.3 आंदोलन का महत्व

यद्यपि भारत छोड़ो आंदोलन गांधी के स्पष्ट लक्ष्य भारत के लिये 'स्वतन्त्रता से कम कुछ नही' को प्राप्त नहीं कर सका तथापि कई दृष्टि से यह महत्वपूर्ण था । भारत के लिये 'स्वतन्त्रता से कम कुछ नहीं' के लक्ष्य का अर्थ था कि अब भारतीयों की ब्रिटिश शासन से न्यूनतम मांग ही यह है कि भारत को औपनिवेशिक शासन से स्वतन्त्रता मिले । साथ ही यह भी कहा गया कि इस लक्ष्य को और अधिक स्थगित नहीं किया जा सकता । उत्साह व साहस के साथ जनसहभागिता भी उल्लेखनीय थी । थोडे समय के लिये ही सही, भारत के कुछ हिस्सो में समानान्तर सरकार की स्थापना भी इस आंदोलन की एक उल्लेखनीय विशेषता थी ।

2.11 सारांश

राष्ट्रीय परिदृश्य में गांधी अभी भी प्रमुख सितारे थे । जब कभी भी जन आंदोलन का विचार बनता अधिकांश राजनीतिज्ञ, कार्यकर्ता व जनता उन्हे ही नेता चुनने की मंशा व्यक्त

करते । गांधी ने आंदोलन की कार्य योजना बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । उनकी मान्यता थी कि सत्याग्रह के सिद्धान्तों के अनुरूप अहिंसक आंदोलन के माध्यम से राष्ट्रीय स्वतन्त्रता जैसे लक्ष्य भी प्राप्त किये जा सकते है । उन्हें अपनी इस मान्यता पर अभी भी भरोसा था । उनकी यह भी मान्यता थी की भारत को स्वतन्त्रता शीघ्र तथा किसी प्रकार का समझौता किये बिना प्राप्त हो जानी चाहिये । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आवश्यकता पडने पर अकेले भी जाने को तैयार थे । इससे लक्ष्य के प्रति उनका दृढ़ निश्चय और समर्पण भाव स्पष्ट होता है । दुर्भाग्य से वे भारत छोडो आदोलन में प्रत्यक्ष रूप से भूमिका नहीं निभा सके क्योंकि उन्हे जेल में डाल दिया गया व अनेक प्रतिबन्ध लगा दिये गये ।

2.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

- भट्टाचार्य, बुद्धदेव, एवोज्यूशन ऑफ द पोलिटिकल फिलासफी ऑफ गांधी, कलकत्ता बुक हाऊस, कलकत्ता 1969
- ब्राउन जूडिथ, गांधीज राईज टू पॉवर इण्डियन पोलिटिक्स 1915-1922, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1977
- ब्राउन जूडिथ, गांधी एंड सिविल डिसोबिडिएंस : द महात्मा इन इण्डियन पोलिटिक्स 1928-34 केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1972
- कुमार, बी. अरूण, गांधीयन प्रोटेस्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008

2.13 अभ्यास प्रश्न

1. असहयोग आंदोलन के कारणों, कार्यक्रम व महत्व पर प्रकाश डालिये ।
2. सविनय अवज्ञा आंदोलन के क्या कारण थे? इसमें गांधी की भूमिका व इस आंदोलन के महत्व पर प्रकाश डालिये ।
3. 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के कारणों पर प्रकाश डालिये । आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गांधी की क्या भूमिका थी?
4. वाइकोम सत्याग्रह के उद्धेश्यों व महत्व पर चर्चा करें ।
5. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में गांधी की भूमिका की चर्चा करें ।

इकाई - 3

चंपारण आन्दोलन और महात्मा गांधी

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 गांधी का चंपारण समस्या से परिचय

3.3 गांधी की चंपारण यात्रा

3.4 चंपारण समस्या पर गांधी की कार्य योजना

3.5 गांधी के प्रति चंपारण की रैयतों का विश्वास

3.6 गांधी जी की कार्य योजना

3.7 जांच समिति

3.7.1 समिति की अनुशंसाएँ

3.7.2 चंपारण कृषि कानून

3.8 सारांश

3.9 अभ्यास प्रश्न

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान पाएँगे :

- चम्पारण की समस्या की प्रकृति
- चंपारण समस्या के निवारण हेतु गांधी की कार्य योजना
- चंपारण समस्या के समाधान में गांधी का योगदान
- चंपारण समझौते की प्रकृति

3.1 प्रस्तावना

विदेश से भारत आगमन के उपरान्त गांधीजी ने भारतीयों की शोषण की स्थिति को देखने के पश्चात् उनकी मुक्ति के लिए अनेक सत्याग्रह आन्दोलन संचालित किया । इन आन्दोलनों में चंपारण किसान आन्दोलन भारत में उनका सर्वप्रथम आन्दोलन था । गांधीजी ने चंपारण के किसानों पर अंग्रेजों द्वारा लागू किए गए करों एवं उनके द्वारा किए जाने वाले शोषण का विरोध किया एवं उन्होंने सत्याग्रह आन्दोलन चलाया । इस आन्दोलन के फलस्वरूप एक स्वीकार्य समझौता हुआ जिसके कारण चंपारण के किसानों को राहत मिली । गांधी जी ने चम्पारण के कृशकों की समस्या का वर्णन करते हुए कहा कि इस जिले के जमींदारों ने अपनी जागीरों को अंग्रेज, जिन्हे नीले साहब के नाम से सम्बोधन किया जाता है, को ठेके पर जुतवाने अधिकार प्रदान किया उपनिवेशवादी उद्देश्य से प्रेरित इन साहबों ने गरीब भारतीय कृषकों का अनेक प्रकार से शोषण किया । 20 वीं शताब्दी के प्रारंभ में सिन्थेटिक नील के आगमन के

पश्चात् प्राकृतिक नील की खेती ऐसे साहबों के लिये अधिक फायदें मंद सिद्ध नही हुआ और इसलिए वे प्राकृतिक नील की खेती में अपनी रुचि समाप्त करने के लिये तत्पर थे । इन नई परिस्थितियों का फायदा भी उठाने का प्रयास इन नील साहबों ने किया । किसानों की भूमि पर से नील खेती के अपने नियंत्रण के अधिकार छोड़ने के लिये उनसे मुआवजा के तौर पर कर मांगा गया । ठेका पद्धति से जो धनराशि एकत्रित किया जा रहा था उसे बढ़ाने के लिये इन साहबों ने किराया मनमाने ढ़ग से बढ़ाने का भी प्रयास किया । इस प्रकार की कार्यवाही को कृषकों ने स्वयं की आजादी एवं अधिकार के खिलाफ माना और मुक्ति पाना चाहा । उन्होने चम्पारण के किसानों के साथ हो रहे जुल्मों की ओर तत्काल सरकार को ध्यान देने के लिये आग्रह किया और कहा कि सरकार के ऐसे प्रयास किसानों में ऐसा विश्वास उत्पन्न करने का कार्य करेगा जो उन्हे आभास दिलायेगा कि जमींदार उनके साथ मनमानी नही कर सकते और उन पर जुल्म ढाह नही सकते । उन्होने आश्वासन दिया कि इसके लिए जब भी सरकार उनकी उपस्थिति आवश्यक समझे वह सूचना पाते ही हाजिर हो जायेगे ।

चम्पारण आन्दोलन के संबंध में गांधीजी ने कहा कि भारत के किसान बहुत ही गरीब स्थिति में हैं । हजारों की तादाद में किसानों को भरपेट खाना भी नहीं मिल पाता हैं । दिन में एक वक्त का खाना ही नसीब होता हैं । जांच के दौरान अपने अनुभवों के बारे में गांधी जी ने बयान करते हुए लिखा है कि चम्पारण किसान के अत्यन्त विकट परिस्थिति में अपना जीवन व्यापन कर रहे है । जहां एक तरफ वे भारतीय जमींदारों तथा फैक्ट्री के मालिको से अनेक प्रकार से शोषित हो रहे है वहीं सरकार की तरफ से भी उन्हे उपेक्षा पूर्ण रवैया ही अनुभव हुआ है । संसाधनों से हीन ये गरीब किसान एवं मजदूर शोषण और अन्याय की ऐसी स्थिति का सशक्त विरोध करने में असमर्थ है । गांधी ने नील उत्पादकों तथा जमींदारों तथा फैक्ट्री मालिको से बात करके चम्पारण के गरीब भारतीयों के उपरोक्त समस्याओं का निराकरण करना चाहा, परन्तु उन्हे कोई सफलता प्राप्त नही हुई । उन्हे जब ये आभास हुआ कि इस समस्या को सरकार के हस्तक्षेप के बिना दूर नही किया जा सकता तो उन्होने सरकार से भी सहयोग की अपेक्षा की ।

3.2 गांधीजी का चम्पारण समस्या से परिचय

गांधीजी के दक्षिण अफ्रिका में किए कार्यो से प्रभावित होकर ही चम्पारण के राजकुमार शुक्ल ने गांधीजी को चम्पारण की स्थिति से परिचित करवाया और उन्हें कांग्रेस अधिवेशन के दौरान चम्पारण आकर वहां के दुःख-दर्द दूर करने को कहा, जिसे गांधीजी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया ।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 31 वाँ अधिवेशन दिसम्बर 1916 में लखनऊ में हुआ था, जिसमें देशभर के लगभग 2300 प्रतिनिधियों ने भाग लिया था, इसमें बिहार के राजनीतिक एवं किसान नेता राजकुमार शुक्ल ने भी भाग लिया । अधिवेशन में दो महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किये जाने वाले थे । प्रथम, पटना विश्वविद्यालय के विधेयक पर एवं द्वितीय, चम्पारण के नीलहे साहब एवं उनके किसानों से संबंध पर । राजकुमार शुक्ल, जिन्हें व्यक्तिगत तौर पर निलहे साहबों के अत्याचारों का अनुभव था, इस अधिवेशन में भाग लेने गये थे । अधिनियम में बाबू वृजकिशोर प्रसाद ने अपने विचारों में यूरोपीय कोठीवालों एवं नीलहे रैयतों के बीच तनावपूर्ण

संबंधों और कृषि समस्याओं के कारणों की जाँच तथा उन्हें दूर करने के उपाय करने के लिये अधिकारियों एवं गैर सरकारी व्यक्तियों की, एक संयुक्त समिति नियुक्त करने का अनुरोध किया । वहीं श्री शुक्ल ने गांधीजी से भी इस समस्या पर अपने विचार रखने को कहा, किन्तु गांधीजी ने यह कहकर मना कर दिया कि स्वयं ही स्थिति का निरीक्षण किए बिना, वे कुछ राय नहीं दे सकते ।

कांग्रेस ने जब यह प्रस्ताव, सर्वसम्मति से पारित कर दिया तो, बिहारी प्रतिनिधियों ने गांधीजी से चम्पारण आने का अनुरोध किया एवं गांधीजी ने भी आगामी मार्च या अप्रेल में उन्हें चम्पारण की यात्रा का वचन दिया ।

3.3 गांधीजी की चम्पारण यात्रा

गांधीजी ने एक पत्र से श्री शुक्ल को सूचित किया कि वे 7 मार्च को कलकत्ता पहुँचेंगे और जानना चाहा कि क्या वहाँ राजकुमार शुक्ल उनसे मिल सकेंगे, किन्तु डाकखाना की गड़बड़ी से राजकुमार शुक्ल को यह पत्र 7 मार्च तक नहीं मिला । तथापि श्री शुक्ल कलकत्ता गये, किन्तु वहां उनको मालूम हुआ कि गांधीजी दिल्ली चले गये है । तदोपरान्त श्री शुक्ल ने फिर गांधीजी को याद दिलाई । तत्पश्चात गांधीजी ने 16 मार्च को अपने पत्र में यथाशीघ्र चम्पारण पहुँचने का आश्वासन दिया । फिर 7 अप्रेल 1917 को गांधीजी ने राजकुमार शुक्ल को कलकत्ता श्री भूपेन्द्रनाथ बसु के घर आने को लिखा । इस बैठक में बिहार के वे प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं थे, जो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में भी थे । यहाँ यह कहना भी अनुपयुक्त नहीं होगा कि, इसके पीछे गांधीजी की यह सोच अवश्य रही होगी, कि कहीं सरकार से तंग आकर चम्पारण के कुछ प्रभावशाली लोग राष्ट्रीय कांग्रेस का सहारा लेकर अपना मतलब तो सिद्ध नहीं कर रहे, इसीलिए उन्होंने श्री राजकुमार शुक्ल को अकेले ही कलकत्ता में चम्पारण की समस्या को समझने के लिये बुलाया । राजकुमार शुक्ल के साथ गांधीजी 9 अप्रेल 1917 को प्रस्थान कर पटना पहुँच गये, वहाँ उन्हें पटना स्थित राजेन्द्र बाबू के आवास पर ठहरा दिया गया किन्तु उन दिनो राजेन्द्र बाबू स्वयं पुरी गये हुए थे । राजकुमार शुक्ल ने उन्हें वही ठहरा दिया किन्तु गांधीजी को वहाँ रहना जयादा रास नहीं आया।

जैसे ही मजहरूलहक को गांधी के पटना आने की बात मालूम हुई, वे उन्हें अपने यहाँ ले गये (मजहरूलहक गांधीजी को लंदन से ही जानते थे । 1915 में बम्बई कांग्रेस के अवसर पर दोनों की भेंट हुई थी) । हक साहब से गांधीजी ने पहली गाड़ी से चम्पारण जाने की व्यवस्था करने को कहा । उसी दिन गांधीजी ने राजकुमार शुक्ल के साथ मुजफ्फरपुर के लिये गाड़ी पकड़ी और वहां रात 10.00 बजे पहुँच गये । वहाँ पर गांधीजी से मिलने स्थानीय वकील भी आये । शीघ्र ही दरभंगा से ब्रजकिशोर बाबू तथा पुरी से राजेन्द्र प्रसाद भी मुजफ्फरपुर आ गये और सभी लोगों की गांधीजी से चम्पारण की समस्या पर विस्तार से चर्चा हुई । शुरू में गांधीजी को लग रहा था कि चम्पारण के कृषकों की स्थिति की जाँच तथा नीलहे साहबों से उनकी शिकायत का अध्ययन कर दो-तीन दिन में ही इस समस्या का निस्तारण हो जायेगा

किन्तु मुजफ्फरपुर में अपने दोस्त वकीलों की बातों से उनको लगा कि इस समस्या में तो दो वर्ष भी लग सकते हैं ।

3.4 चम्पारण समस्या पर गांधीजी की कार्ययोजना

गांधीजी ने यहा से अपनी कार्ययोजना का प्रारम्भ कुछ इस प्रकार किया । सबसे पहले उन्होंने अपने लिए कुछ लिपिक एवं द्विभाषियो की मांग रखी तथा यहाँ तक कहा कि इस कार्य में जेल भी जाना पड़ सकता है । इसलिए लोग जहाँ तक उचित समझें वहीं तक उनका साथ दें । यह बात गांधीजी की कार्य करने की विशेष शैली का परिचय था ।

गांधीजी को वहाँ की स्थानीय हिन्दी भाषा को समझने में कठिनाई होती थी एवं कैफि व उर्दू कागजात वे पढ़ नहीं पाते थे । इसलिए उन्होंने द्विभाषीये की मांग रखी । उनका यह कहना भी था कि इस कार्य के लिये उनके पास पैसा नहीं है इसलिए यह कार्य सेवाभाव के आधार पर ही संभव है ।

गांधीजी ने अपनी कार्ययोजना को मूर्त रूप देते हुए सर्वप्रथम 11 अप्रेल 1917 को प्लान्टर्स एसोसियेशन के सचिव को अपने चम्पारण आने का कारण बताया किन्तु विल्सन(सचिव) ने जवाब दिया कि वह संघ की ओर से उनकी कोई मदद नहीं कर सकते । अलबत्ता व्यक्तिगत जहाँ तक संभव हो मदद का भरोसा दिलाया । गांधीजी ने फिर एक पत्र तिरहूत के प्रमंडल आयुक्त एल.एफ. मॉर्सहेड को अपने आने व अपने उद्देश्य के बारे में एक पत्र 12 अप्रेल 1917 को लिखा कि नील की खेती से संबंधित काम करने वाले भारतीयों की अवस्था के बारे में उन्होने बहुत कुछ सुना है, इसकी वास्तविक स्थिति की जानकारी स्वयं ही प्राप्त करने के लिए वह वहाँ आये है उन्होने लिखा कि वह अपना काम स्थानीय प्रशासन की जानकारी में और संभव हो तो उसके सहयोग से करना चाहते हैं । यदि मार्सहेड उन्हें मिलने का कोई मौका देने की कृपा करें तो वे स्वयं को कृतज्ञ मानेंगे । उन्होने इच्छा प्रकट की कि वह अपनी जाँच का उद्देश्य उनके सामने रख सके और यह जान सके कि उन्हे अपने कार्य के सम्पादन में स्थानीय प्रशासन से कुछ सहायता मिल सकती है, या नहीं ।

उक्त पत्र में गांधीजी ने यह स्पष्ट कर दिया था कि वे इस समस्या के तह में जाकर ही रहेंगे चाहे स्थानीय प्रशासन उनका सहयोग करें या न करें और उनका आन्दोलन पूर्णतया पारदर्शी रहेगा । इसके साथ ही गांधीजी ने व 3 अप्रेल 1917 को भी मार्सहेड को इसी तरह का एक और पत्र लिख भेजा।

तदोपरान्त जे०एम० विल्सन ने गांधीजी को सूचित किया कि उन्हें ''प्लान्टरो एवं उनकी रैयतों के बीच टांग नहीं अड़ाना चाहिए । गांधीजी ने विनम्रतापूर्वक जवाब दिया कि वे अपने आपको बाहर का आदमी नहीं समझते और यदि रैयत चाहती हैं तो उनकी स्थिति की जाँच करने का उनको पूरा अधिकार है । 13 अप्रेल को ही जब गांधीजी आयुक्त से मिलने गये तो उनसे पूछा गया कि उनको किसने तिरूहत बुलाया है और वापस जाने को कहा । गांधीजी ने जवाब में कहा कि वह बिहार के लोगों के आमन्त्रण पर वहाँ आये है और चम्पारण की सरजमीन पर जाकर अध्ययन करने के लिए आये है ।

अब गांधीजी को चम्पारण की रैयतों पर होने वाली अत्याचारों की सत्यता पर विश्वास और गहराता चला गया था और उन्हें इसका यह अहसास हो चला था कि वहाँ प्रशासन भी उन्हें रैयतों पर होने वाले अन्यायों से राहत नहीं दिलवा सकता और सरकार उनके कार्यों में भी अड़चन लगाने में कोई कसर नहीं छोड़ेगी । गांधीजी ने चम्पारण की गंभीर स्थिति को समझा ।

तदोपरान्त 15 अप्रेल 1917 को ही गांधीजी बापू धरणीधर एवं रामनौजी दोनों ही द्विभाषिये, को साथ लेकर मुजफ्फरपुर से मोतिहारी के लिए रवाना हो गये । मोतिहारी एक ऐसा स्थान था, जहाँ इस समस्या से सबसे अधिक ग्रस्त लोग थे । मोतिहारी में उपस्थित ग्रामीणों को अगले दिन 16 अप्रेल को अपना बयान गांधीजी को बताने के लिए बुलाया गया और गांधीजी अपने साथ गये दोनों द्विभाषियो की सहायता से ग्रामीण के बयान लिपिबद्ध करवाते रहे एवं जसौली पट्टी नामक स्थान पर एक रैयत के साथ एक निलहे द्वारा किए गए अत्याचार को स्वयं अपनी आँखों से देखने के लिए गांधीजी भरी धूप व धूल में चल दिये । गांधीजी जब उस निवासी से बात कर रहे थे उसी समय एक दरोगा ने गांधीजी को सूचना दी कि कलेक्टर साहब ने उन्हें बुलाया है । गांधीजी ने अपने सहकर्मी से जसौली पट्टी जाने को कहा, और वहाँ का काम पूरा करने को कहा एवं स्वयं दरोगा के साथ रवाना हो गये लेकिन रास्ते में ही गांधीजी की एक आरक्षी उपाधीक्षक ने गांधीजी को अपने टमटम पर बैठाया और कुछ दूरी पर उन्हें चम्पारण के जिला कलेक्टर डबल्यू.बी.आईकार्क की अधिसूचना दी, जिसका आशय गांधीजी को तुरन्त चम्पारण छोड़ने का था ।

यहाँ यह बताना भी आवश्यक है कि गांधीजी अपने कार्य को प्रशासन से चोरी छिपे करने वाले इन्सान नहीं थे । इसलिए उन्होंने मुजफ्फरपुर से ही 13 अप्रेल 1917 को एक पत्र तिरहुत डिविजन के कमिश्नर श्री एल. एफ. मार्सहेड को उनके वहाँ आने का कारण लिख दिया था एवं लिखा था कि वे वहाँ अपने मित्रों के बुलाने पर आये हैं । गांधीजी के इस पत्र से जो बात निकलकर आती है वह यह है कि गांधी किसी समस्या को जब तक स्वयं नहीं समझ लेते कि वास्तव में वहाँ कोई समस्या है या नहीं वह अपना दृष्टिकोण उसके बारे उन्होंने उक्त पत्र में उसे मामला करार दिया साथ ही अन्त, में लिखा कि वे वहाँ एक सम्मानपूर्ण समझौता कराने आये है । स्पष्ट है, कि वे अपने निर्णय को सार्वभौमिकता वाला या दोनों पक्षों को सर्वमान्य हो ऐसा रास्ता उस समस्या के समाधान के तौर पर निकालना चाहते थे ।

किन्तु गांधीजी की इस मानसिकता को भला वहाँ विराजमान अंग्रेज अधिकारी नहीं समझ सकें एवं उन्हें जिला कलेक्टर का चम्पारण छोड़ने का आदेश थमा दिया गया । गांधीजी इससे बिल्कुल विचलित नहीं हुए और उन्होंने 16 अप्रेल 1917 को मोतिहारी से ही अपना प्रत्युत्तर जिला मजिस्ट्रेट को भिजवा दिया जिसमें उन्होंने लिखा कि उनका उद्देश्य कोई आन्दोलन खड़ा करनें का नहीं अपितु उनकी विशुद्ध और एक मात्र इच्छा जानकारी प्राप्त करने का वास्तविक प्रयत्न करना है । गांधीजी के इस पत्र से हम यह जान सकते हैं कि गांधीजी तब तक प्रशासन से किसी तरह का कोई झगड़ा मोल लेना नहीं चाहते थे जब तक कि वे चम्पारण क्षेत्र की जनता का समर्थन पूरी तरह से प्राप्त न कर लें । अन्यथा, उन्हें यह अवश्य पता था कि आन्दोलन प्रारम्भिक अवस्था में ही दम तोड़ सकता था ।

गांधीजी के साथ मोतिहारी में जो कुछ हुआ था या हो रहा था, उसकी सूचना गांधीजी ने तार द्वारा मदनमोहन मालवीय, एच. एस. पोलक, राजेन्द्र प्रसाद और अन्य प्रमुख लोगों को दे दी थी । उस रात गांधीजी रात भर चिट्ठियाँ लिखते रहे एवं बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद को आवश्यक आदेश देते रहे । गांधीजी को यह आभास हो चुका था कि उनका चम्पारण में रहना अंग्रेज अधिकारियों के आँखों के लिए किरकिरी पैदा कर रही है । इसीलिए उनके जेल जाने की स्थिति में चम्पारण आन्दोलन को कैसे आगे बढ़ाया जाये, इसके लिंए गांधीजी ने एक योजना बना दी जिसमें निम्नलिखित बातें कही गई

1. कार्यकर्तागण नियमित रूप से गाँवों में जाये और जिन लोगों से पूछताछ की जाये, उन सबकी गवाहियाँ लिख ली जाये ।
2. जहाँ गवाही देने वाले लोग अपने बयानों पर दस्तखत या अंगूठा-निशानी देने के लिए राजी हो वहाँ उनके दस्तखत या अंगूठा निशानी ले ली जाये ।
3. जहां लोग दस्तखत करने से इन्कार कर दें, वहाँ भी उनकी गवाहियाँ ले ली जाये । दस्तखत देने से इन्कार का कारण लिख दिया जाये ।
4. जिन वकीलों का काश्तकारों के मुकदमों से थोड़ा सा भी वास्ता था उनसे गवाही देने की प्रार्थना की जाये । इसी तरह के कुछ अन्य निर्देश भी गांधीजी ने लिख दिये थे ।

3.5 गांधी के प्रति चम्पारण की रैयतों का विश्वास

17 अप्रेल का दिन एक अद्भुत दिन था जिसने यह दर्शा दिया था कि वहाँ के किसानों में गांधीजी के प्रति एक जबरदस्त विश्वास उमड़ पड़ा था, जो अपनी समस्या को बयान के रूप में गांधीजी के साथियों को लिपिबद्ध करवा रहे थे । गांधीजी में भी वहाँ की समस्या को समाप्त करने के लिए उस जन-समूह को देख आत्मविश्वास में निश्चित ही वृद्धि हुई होगी ।

17 अप्रेल को दिन भर रैयतों के बयान दर्ज करने का कार्य चलता रहा । इस दिन गांधीजी मोतिहारी के समीप के गाँव जाना चाहते थे जिसके बारे में उन्होंने एक पत्र द्वारा सरकारी अधिकारियों को भी अवगत करा दिया था एवं उसमें उन्होंने साफ लिखा था कि वे बिना अधिकारियों को अवगत कराये कुछ नहीं करना चाहते हैं ।

17 अप्रेल को ही गांधीजी को 18 अप्रेल को 12 बजे दिन में मोतीहारी के अनुमंडलाधिकारी के समक्ष उपस्थित होने का सम्मन मिला । फलत: गांधीजी ने अपनी यात्रा रद्द कर दी एवं अपने सहकर्मियों के साथ उनके जेल जाने के पश्चात की स्थिति पर चर्चा की, जिस पर धरनी बाबू ने गांधीजी को अपनी ओर से आश्वस्त किया कि उनके जेल जाने की स्थिति में वे उनकी जगह काम जारी रखेंगे ।

18 अप्रेल 1917 इतिहास का वो दिन था जिस दिन गांधीजी चम्पारण के दीन एवं दुखी लोगों के लिये जेल जाना स्वीकार कर रहे थे । यह एक अति महत्वपूर्ण दिन था किन्तु अदालत में गांधीजी के द्वारा दिये गये बयान जिसमें उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि उन्होंने धारा 144 के विरूद्ध जो कार्य किया है वह कार्य अपने लिये नहीं अपितु मानव जाति एवं राष्ट्र की सेवा करने की मंशा से किया हैं एवं उनका प्रयास सरकारी आदेश की अवहेलना करने का बिल्कुल नहीं है । गांधी ने कहा कि मामलें को समझे बिना उनकी (रैयतों) किसी प्रकार की

सहायता करना उनके लिए संभव नहीं था । इसी कारण इस प्रश्न का अध्ययन, यदि संभव हो तो सरकार एवं बागान मालिकों की सहायता लेकर, करने के लिये वहाँ के लोगों के आग्रह पर वे वहाँ आये हैं एवं यह कार्य वे अपनी मर्जी से नहीं, अपितु अपनी अन्तरात्मा के आदेश पर कर रहे हैं । इसलिए अपनी मर्जी से उस जगह को छोड़कर जाना उनके लिए संभव नहीं है ।

इस प्रकार गांधीजी ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया । मजिस्ट्रेट ने अदालत को 21 अप्रेल तक स्थगित रखा और गांधीजी को पाबंद किया कि वे इस बीच सुपरिन्टेडेन्ट व जिला मजिस्ट्रेट से मिले और गाँवों में घूमना बन्द करें । इस आदेष को गांधीजी ने स्वीकार कर लिया।

गांधीजी के द्वारा अदालत में दिये बयान से जिसमें उन्होंने अपराध स्वीकार कर जेल जाने में कोई आपत्ति प्रकट नहीं की सरकारी वकील, मजिस्ट्रेट और दूसरे अधिकारी को किंकर्तव्यविमूढ़ कर दिया । वे नहीं समझ पा रहे थे कि उन्हें क्या करना चाहिये । सरकारी वकील की राय थी कि मुकदमा मुल्तवी किया जाऐ, किन्तु गांधीजी ने हस्तक्षेप करते हुए क्योंकि वे चम्पारण छोड़ने के आदेश का उल्लघंन करने का अपराध स्वीकार करना चाहते थे, " मुक्द्मा मुल्तवी नहीं करने का आग्रह किया । गांधीजी ने इस बीच अपने मित्रों को पत्र लिखना जारी रखा था जिसमें उन्होंने चम्पारण की समस्या को जिस प्रकार समझा था, उसका वर्णन उन्होंने अपने पत्रों में किया । अप्रेल 1917 को गांधीजी अदालत में उपस्थित हुए एवं उनके यह कहने पर कि उनके पास कोई जमानती नहीं है, मजिस्ट्रेट ने उन्हें अपनी जमानत पर रिहा कर दिया । इसे गांधीजी को चम्पारण में पहली जीत के रूप में देखा जा सकता है, किन्तु जब तक सरकारी आदेश प्राप्त नहीं हो जाते तब तक गांधीजी ने समाचार पत्रों से कोई आन्दोलन नहीं करने का अनुरोध किया ।

3.6 गांधीजी की कार्य योजना

21 अप्रेल 1917 को गांधीजी के अदालत में उपस्थित होने एवं उनके यह कहने पर कि उनके पास कोई जमानती नहीं है, मजिस्ट्रेट द्वारा उन्हें अपनी जमानत पर रिहा कर देने की घटना को गांधीजी को चम्पारण में पहली जीत के रूप में देखा जा सकता है । किन्तु चम्पारण समस्या का हल अभी काफी दूर था । जब तक सरकारी सहयोग प्राप्त नहीं होता तब तक इसका कारगार निदान सम्भव नही था ।

तत्पश्चात् गांधीजी ने 21 अप्रेल को ही बाँकीपुर, मोतीहारी से समाचारपत्रों में एक वक्तव्य जारी किया, जिसने सरकार को उसके द्वारा किए जाने वाले मदद के लिए धन्यवाद दिया गया । साथ ही गांधीजी ने अपने वक्तव्य के अन्त में समाचारपत्रों को एक सन्देश भी दिया जिसमें समाचार पत्रों द्वारा कोई सार्वजनिक आन्दोलन खड़ा न करने का आग्रह किया गया क्योंकि गांधीजी को लगा कि इससे चम्पारण विशेष की समस्या राष्ट्रीय स्तर पर उद्दत होकर उभर सकती थी और जिससे राष्ट्रीय स्तर के स्वतंत्रता आन्दोलन को तो बल मिल सकता था किन्तु उससे चम्पारण के किसानों का शीघ्र भला होना संभव नहीं था ।

22 अप्रेल को गांधीजी ने मोतीहारी से बेतियां के लिए प्रस्थान किया । वे तृतीय श्रेणी के डिब्बे में यात्रा कर रहे थे । रास्ते में हर स्टेशन पर लोग उनका अभिवादन करते । बेतिया

शाम 5 बजे पहुँचे तो बड़ी संख्या में लोगों ने स्टेशन पर उन पर फूल बरसाये । जाहिर था कि गांधीजी की प्रतिष्ठा चम्पारण के हर क्षेत्र में फैल चुकीं थी । तत्पश्चात् गांधीजी अपने उक्त वर्णित साथियों में से किसी ना किसी के साथ आसपास के गाँव जाने लगे । अप्रेल को वे बाबू ब्रजकिशोर को लेकर लौकरिया गाँव गये, वहाँ की रैयतों ने अपने दुखदर्द गांधीजी को खुलकर सुनाये । 26 अप्रेल को वे कूरिया कोठी के अन्तर्गत ग्राम छपरा गये । इस इलाके के रैयतों के घर के चारों ओर नील उपजाए जाने एवं उनकी घोर दरिद्रता देख गांधीजी का हृदय पिघल गया । 27 अप्रेल को गांधीजी बेलवा कोठी के अन्तर्गत कुछ गाँव देखने गये ।

इस प्रकार गांधीजी ने कई गाँवों का दौरा किया और वहाँ की समस्याओं, जो कि लगभग एक जैसी ही हुआ करती थी, लिपिबद्ध कर संबंधित पक्षकार से उनके बयान पर दस्तख्त या अंगूठा निशानदेही के तौर पर ले लिया करते थे । साथ ही गांधीजी द्वारा बहुत से प्लान्टरों के पक्षों को भी सुनते एवं उनके बयान लिखवा लिया करते थे, ताकि समस्या का सार्वभौमिक हल निकालना संभव हो सके । इसमें कुछ प्लान्टरों ने अपने पक्ष में बयान देने के लिये रैयतों में से ही कुछ को लालच या प्रलोभन देकर अपने पक्ष में बयान देने को उकसाने का कार्य भी किया और उन्होंने गांधीजी की जाँच को बन्द करवाने की मुहिम छेड़ी, जिसमें उनके पक्ष में अधिकारियों ने अपनी रिपोर्ट जाँच को बन्द करने के लिए लिखा ।

इसी तरह की एक रिपोर्ट बिहार प्लान्टर्स संघ के सचिव, एम.ई. कोक्स ने तिरहूत प्रमंडल के आयुक्त, एल.एफ. मोर्सेड को 28 अप्रेल को एक पत्र में लिखा । जिसका अभिप्राय: यह था कि, "गांधीजी का यह कार्य रैयतों एवं कृषि श्रमिकों (खेत मजदूरों) को प्लान्टरों तथा जमींदारों के विरूद्ध उत्तेजित करना है और यह आन्दोलन का रूप ले रहा है ।

इसके अलावा कोक्स ने अपने पक्ष में यह भी लिखा कि ओल्हा कोठी का एक घर जलाया जा चुका है । बोकराहा कोठी के मैनेजर के कार्यालय में आग लगा दी गई है । मेनाटानों के दरोगा के ग्राम खम्भिया में आग लगी है । टीकरी या पकरी कोठी के इलाके में ग्राम मझरिया के लोगों ने मैनेजर के प्यादे को पीटा है । गांधीजी का इन सब में प्रत्यक्ष हाथ नहीं है, किन्तु उनकी उपस्थिति में लोगों ने यह सब किया है । साथ ही उसने अपनी बात में वजन देने के लिए लिखा, कि हिन्दुस्तान में अर्द्धशताब्दी से ऐसा नहीं हुआ है, इसलिए इस समस्या से निकलने का एक मात्र रास्ता गांधीजी की जाँच कार्य तुरन्त बन्द करवाकर एक आयोग की नियुक्ति कर दी जावे ।

तत्पश्चात् कलकत्ता के यूरोपीय डीफेंस एसोसियेशन ने अपनी मुजफ्फरपुर शाखा के कहने पर भारत सरकार को गांधीजी का जाँच कार्य बन्द कराने के हेतु एक प्रार्थना पत्र दिया । इस स्थिति में बिहार सरकार के सचिव ने 6 मई 1917 को गांधीजी के पास एक तार भेजकर उनसे श्री विलियम मौड़ (वाइसराय के एक्जक्यूटिव कौंसिल का उपाध्यक्ष तत्पश्चात् गांधीजी अपने उक्त लिखित साथियों में से किसी ना किसी के साथ आसपास के गाँव जाने लगे । अप्रेल को वे बाबू ब्रजकिशोर को लेकर लौकरिया गाँव गये, वहाँ की रैयतों ने अपने दुखदर्द गांधीजी को खुलकर सुनाये । 26 अप्रेल को वे कूरिया कोठी के अन्तर्गत ग्राम छपरा गये । इस इलाके के

रैयतों के घर के चारों ओर नील उपजाए जाने एवं उनकी घोर दरिद्रता देख गांधीजी का हृदय पिघल गया । 27 अप्रेल को गांधीजी बेलवा कोठी के अन्तर्गत कुछ गाँव देखने गये ।

10 मई को गांधीजी ने मौड से मुलाकात की एवं मौड ने गांधीजी से उनके सहकर्मी वकीलों को जाँच से अलग रखने की बात कही, जिसे गांधीजी ने यह कहते हुए अस्वीकार कर दी कि वे अपना जाँच कार्य सरकारी नियमों की अनदेखी करते हुए नहीं करेंगे । साथ ही गांधीजी ने अपनी जाँच कार्य की एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने की इच्छा प्रकट की । उन्होंने श्री मौड को यह अवश्य कहा कि जाँच कार्य में कुछ परिवर्तन किया जाना संभव है, किन्तु इसे बन्द किया जाना संभव नहीं है ।

तत्पश्चात् गांधीजी ने चम्पारण के किसानों की हालत संबंधी अपनी जाँच रिपोर्ट / प्रतिवेदन 13 मई को बिहार-उड़ीसा के मुख्य सचिव को भिजवाई जिसमे उन्होंने कहा कि मौड द्वारा चाहा गया आश्वासन कि जो वकील मित्र गांधी को सहायता पहुँचा रहे हैं उन्हें इस काम से हटा लिया जाये संभव नही है । गांधी ने कहा कि उन्हें छोड़ देना स्वयं के कामों को छोड़ देने के बराबर होगा । तर्क देते हुए उन्होंने कहा कि सज्जनोचित व्यवहार का तकाजा है कि वे उनकी सहायता का त्याग तब तक न करेंगे जब तक यह सिद्ध न हो जाये कि उन्होंने कोई अनुचित कार्य किया हैं । उन्होंने कहा कि उन्हे ऐसी कोई आशंका नहीं है कि उनकी अथवा उनके मित्रों की उपस्थिति में कोई "खतरनाक स्थिति" पैदा हो सकती है । खतरा अगर कहीं है, तो वह उन कारणों में हैं, गोरे जमींदारों और किसानों के बीच आज के तनावपूर्ण संबंधों के लिए जिम्मेदार हैं । अगर यह कारण दूर कर दिये जाते हैं तो जहाँ तक किसानों का सवाल हैं चम्पारण में किसी खतरनाक स्थिति के पैदा होने का डर रखने का कोई कारण नहीं है ।

उन्होंने कहा कि चम्पारन जिले मे किसान अनेक प्रकार से पीडित एवं षोशित किए जा रहे हैं । तिन-काठियाँ की पद्धति ने किसानों को सबसे ज्यादा तकलीफ पहुंचायी है । उसका स्वरूप समय के साथ बदलता रहा है । आरम्भ नील से हुआ था, किन्तु धीरे-धीरे उसने सभी फसलों को अपनी लपेट में ले लिया है । वे किसान की जमीन से संबद्ध, ऐसी बाध्यता है, जिसके कारण किसानों को जमींदार की मर्जी के अनुसार अपने जमीन के 3/20 हिस्से पर कोई खास फसल उगानी पड़ती है और उसके एवज में उसे एक निर्दिष्ट मुआवजा दिया जाता है । गांधी ने कहा कि इस प्रथा का कोई कानूनी औचित्य नहीं है और यद्यपि किसानों ने इसका सदा विरोध किया है उन्हें बल प्रयोग के आगे झुकना पड़ा हैं । गांधी ने कहा कि किसानों को अपनी सेवाओं के लिए पर्याप्त मुआवजा भी नहीं मिलाता है । कृत्रिम नील के आने के बाद जमींदारों ने नील ने अपना नुकसान किसानों के सर थोपने की तरकीब ढूंढ निकाली । नील की खेती कराने का अपना अधिकार छोड़ने की एवज में पट्टेदार किसानों से तावान वसूल किया, जो प्रति बीघा रूपये 100 तक था जिसकी वसूली जबरदस्ती की जाती है । जहाँ किसान नकद पैसा नहीं दे सके, वहाँ उन्होंने रकम किश्तों में चुकाने के लिए हैड-नोट या रहनामा लिख कर 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज देने को मजबूर किया जाता है । गांधी ने 'शरहबेशी' यानी नील की खेती का हक छोड़ने की एवज में लगान में की गई बढ़ोतरी की भी घोर आलोचना की । गांधी ने कहा कि तिन-कठिया पद्धति के तहत किसान जमींदारों की बताई हुई फसलें उगाने के लिए

अपनी सर्वोत्तम जमीन देने के लिए बाध्य हुए हैं और कई बार तो इसके लिए उन्हें अपने घर के ठीक सामने की जमीन देना पड़ा है तथा इसके लिए उन्हें अपने समय और शक्ति का सर्वोत्तम अंश भी देना पड़ा है । परिणामस्वरुप उन्हे अपनी फसल उगाने के लिए बहुत ही कम समय मिल पाता है । गांधी ने कहा कि किसानों के साथ फेक्ट्रियों मे किराये पर गाड़िया देने के लिए भी जबरदस्ती साटे किया जाता है और इस काम के लिए किसानों को जो पैसा खर्च करना पड़ता है वह भी उससे पूरा वसूल नहीं होता । किसानों से जबरदस्ती काम लिया जाता हैं और उन्हें पर्याप्त मजदूरी भी नहीं दी जाती । अल्पवयस्क लड़कों तक से उनकी इच्छा के विरूद्ध काम कराया जाता हैं । फेक्ट्रियों के मालिक किसानों के हल उठवा लेती हैं और उन्हें अपनी जमीन जोतने के लिए लगातार कई दिनों तक इस्तमाल करते हैं और उसे अपने पास रखते हैं, जबकि किसानों को भी अपनी जमीन जोतने के लिए उनकी जरूरत होती है । फेक्ट्रियों के मालिक उन्हें इसका बहुत ही कम पैसा देते हैं ।

फैक्ट्रियों मे काम करने वाले मजदूरों की दयनीय स्थिति के बारे मे गांधी ने कहा कि वहां पर नौकरी करने वालों को बहुत ही कम वेतन मिलता है और यह नौकर मजदूरों की मजदूरी से दस्तूरी वसूल करते हैं जो अक्सर उनकी दैनिक मजदूरी का पाँचवा हिस्सा होती हैं । वे गाड़ियों और हलों के किराये में से भी हिस्सा वसूल करते हैं । विरोध करने वाले किसानों पर गैर-कानूनी व भारी-भरकम जुर्माना लगाए जाते हैं ।

किसानों को झुकाने के लिए जमींदार द्वारा जो अन्य नये उपाय काम में लिए जाते हैं, उनका हवाला भी गांधी ने दिया है । इनमे किसानों के गाय-बैल आदि पकड़वाकर कांजी हौज में डाल देना, उनके घरों पर चपरासी बिठा देना, उनके नाई, धोबी, बढ़ई और लुहार बन्द कर देना, गाँव के कुंए बन्द कर देना, उनके घरों के सामने या पिछवाड़े की जमीन और रास्ते जोतकर कुओं और चरागाहों पर उनका जाना मुश्किल कर देना, उनके खिलाफ दिवानी मुकदमें चलाना या चलवाना, उनके खिलाफ फौजदारी की शिकायतें करना, उन पर शारीरिक बल का प्रयोग करना और उन्हें बन्द कर रखना, इत्यादि का उल्लेख गांधी ने किया है । जमींदारों ने किसानों को अपनी मर्जी मुताबिक चलाने के लिए उन पर कई प्रकार के जुल्म किए हैं। वे सड़कों का जो किराया देते हैं, उसका आधा आना प्रति रूपया किसान भी देते हैं, किन्तु उन्हें सड़क का उपयोग शायद ही करने दिया जाता हैं । उनकी गाड़ियों और बैलों को, जिन्हें सड़कों की शायद सबसे ज्यादा जरूरत है, उनका उपयोग किंचित ही करने दिया जाता है । गांधी ने कहा कि चम्पारण मे किसानों की जितनी खराब स्थिति है वैसी स्थिति भारत मे कहीं और नही है । वे जमींदारों की शक्ति, अधिकार और सामर्थ्य की स्थिति से आतंकित हैं । गांधी ने सरकार से आग्रह किया कि चम्पारण के किसानों और मजदूरों के साथ किये जाने वाले जुल्म को दूर करने में सार्थक प्रयास करे । उन्होंने यह आश्वासन दिया कि चम्पारण में उनकी मौजूदगी किसानों और मजदूरों की इन समस्याओं को दूर करने हेतु किये जाने वाले प्रयास से प्रेरित है । उनका कहना था कि सरकार उनके इस प्रयास में मदद करें ।

3.7 जाँच समिति

4 जून 1917 को लेफ्टिनेंट गर्वनर और एक्जिक्यूटिव कौंसिल के सदस्यों के साथ बैठक के उपरान्त भारत सरकार की अनुमति से एक जाँच समिति का गठन किया गया, जिसका सदस्य बनने के लिये गांधीजी तब तैयार हुए जब जाँच के संबंध में उन्हें अपने सहयोगियों से परामर्श करने के लिए स्वतन्त्र होने के बात कही गई । समिति के अध्यक्ष एफ.जी. स्लाई, कमिश्नर, मध्यप्रदेश को बनाया गया । अन्य सदस्य के रुप मे एल.सी. ऐडमी, डी.जे. रीड, श्री जी.रैनी और गांधी को रखा गया । गांधीजी को उक्त समिति का सदस्य बनाने पर ऐंग्लो-इण्डियन अखबारों यथा 22 जून 1917 को प्रकाशित स्टेट्समेन में जे.डबल्यू.जेक्सन ने आलोचना की ।

जाँच समिति के निम्नलिखित कार्य निर्धारित थे :

1. चम्पारन जिले के जमींदारों और किसानों के संबंधों की जाँच करना, इसमें नील की खेती
   और नील तैयार करने से संबंधित समस्त विवाद आ जाता है ।
2. इन विषयों में प्राप्त प्रमाणों की जाँच करना और स्थानीय रूप से और अन्यथा, जैसा समिति उचित समझे, आगे जाँच करके अन्य प्रमाणों को इकट्ठा करना और
3. अपने निष्कर्षो से सरकार को अवगत कराना और साथ ही जिन अनुचित प्रथाओं एवं शिकायतों का उसे पता चले, उनको दूर करने के उपाय सुझाना ।

साथ ही सपरिषद लेफ्टिनेंट गर्वनर चाहते थे कि जाँच समिति तथ्यों का पता लगाने के लिए जो कार्यविधि ठीक समझे उसे अपनाने के लिये स्वतन्त्र रहे । साथ ही यह भी आशा की गई थी कि उक्त समिति लगभग तीन माह में अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत करेगी जिसकी पहली बैठक 15 जुलाई 1917 के आस-पास होगी । तत्पश्चात जाँच समिति ने अपनी कार्यप्रणाली प्रारम्भ की । जाँच समिति ने प्रान्त के अखबारों में एक सूचना छपवाई थी और वह मोतिहारी में कलेक्टर की कचहरी और बेतिया की तहसील में भी चस्पा की गई थी । इसमें कहा गया था कि जिन व्यक्तियों, संघों और सार्वजनिक संस्थाओं को लिखित गवाही देनी हो, वे अपनी गवाहियाँ समिति के मन्त्री को भेज दें । उसमें यह भी कहा गया था कि बेतिया, मोतिहारी और अन्य केन्द्रों में, जहाँ बैठकें करना आवश्यक समझा जाये, 15 जुलाई से प्रारम्भ होगी ।

समिति की प्रारम्भिक बैठक अपनी कार्यविधि और जाँच का क्षेत्र निश्चित करने के लिए 11 जुलाई को राँची में हुई और उसकी खुली बैठकें 17 जुलाई को बेतिया में आरम्भ हुई थी । बेतिया और मोतिहारी में 8 बैठकें हुई जिनमें 19 व्यक्तियों की गवाहियाँ दर्ज की गई, इनमें से 4 सरकारी अधिकारी (बन्दोबस्त अधिकारी, बेतिया का सब-डिविजन अधिकारी, चम्पारण जिले का कलेक्टर, और बेतिया राज का मैनेजर) किसानों के तीन प्रतिनिधि बिहार बागान मालिक संघ का प्रतिनिधि, और 12 संस्थाओं के मैनेजर थे । 8 संस्थाओं में स्थायी जाँच भी की, जिसमें मैनेजरों से विस्तृत पूछताछ की गई । संबंधित नील की कोठियों के रजिस्टर और

हिसाब किताब देखें गये । उन किसानों से पूछताछ की गई, जिन्होंने लिखित वक्तव्य दिये थे और किसानों के बड़े-बड़े समूदायों से जो समिति के सदस्यों से मिलने के लिए इकट्ठे हुए थे बहुत सी बातें पूछी गई । स्थानीय सरकार ने अपने सरकारी कागजात उपलब्ध करके कुछ सहायता की और संस्थानों के मैनेजरों ने समिति को चाही गई जानकारी दी एवं अपने कागजात एवं रजिस्टर जाँचने की सुविधाऐं दी । समिति द्वारा उनकी सहायता के लिए कृतज्ञता ज्ञापित की गई ।

3.7.1 समिति की अनुशंसाऐं

3 अक्टूबर 1917 को समिति ने सर्वसम्मति से एक रिपोर्ट पर अन्तिम सहमति दे दी और अगले दिन बिहार सरकार के समक्ष उसे प्रस्तुत कर दिया गया । सरकार ने प्राय: सभी अनुशंसाऐं स्वीकार कर ली । 18 अक्टूबर 1917 को इस आशय की अधिसूचना प्रकाशित कर दी गई । लेफ्टिनेंट गर्वनर ने समिति के सभी सदस्यों को सभी पक्षों को स्वीकारणीय समझौता की शर्ते अभिस्तावित करने तथा उसके हेतु उन्होंने जो परिश्रम किया था, उसके लिए धन्यवाद ज्ञापित किया था । अनुशंसाऐं मुख्यत: इस प्रकार थी :

1. तीनकठिया प्रथा नील या कोई भी अन्य फसल उपजाने के हेतु पूर्णतया समाप्त कर दी जानी चाहिए ।
2. यदि नील उपजाने के लिए किसी तरह की बंदोबस्ती की आवश्यकता हो तो वह निम्नलिखित शर्तों पर की जाए :-
   (क) बन्दोबस्ती स्वेच्छा से हो ।
   (ख) उसकी अवधि तीन वर्ष से अधिक की नहीं हो ।
   (ग) किस खेत में नील उपजाया जाएगा, इसका निर्णय रैयत के हाथों में होना चाहिए।
   (घ) नील के पौधों की विक्रय-दर रैयत अपनी इच्छानुसार तय करें ।
   (ङ) नील के पौधों का मूल्य वजन के अनुसार भुगतान किया जाए । यदि रैयत सहमत हो तो पौधों को तराजू पर तौलने के बदले कनकूत किया जा सकता है
3. मोतिहारी और पिपरा संस्थानों में परिवर्द्वित मालगुजारी दरें 26 प्रतिशत कम कर दी जाएं और तुरकोलिया कोठी में 20 प्रतिशत ।
   (क) जलहा और सीरनी कोठियों में मोतिहारी और पिपरा की तरह ही कमी की जाए ।
   (ख) जिन रैयतों के कागजों पर तीनकठिया लगान का उल्लेख हो, उन्हें उपर्युक्त अनुपात में बढ़ी हुई मालगुजारी देनी होगी ।
   (ग) बेतिया राज की घाट कोठी ने नील लगान का दावा नहीं किया है । इस कोठी के रैयतों ने इस शर्त पर नील उपजाने का सट्टा किया है कि उनकी मालगुजारी दरों में वृद्धि नहीं की जाएगी । अत: कोठी ने बन्दोबस्ती पदाधिकारियो के समक्ष वृद्धि के लिए आवेदन नहीं किया । उस इलाके के रैयत अब नील की खेती छोड़ना चाहते हैं । अत: उस कोठी को मालगुजारी बढ़ाने का अवसर मिलना चाहिए ।

4. जिन रैयतों ने नकदी या हैंडनोट के द्वारा तावान की चुकती की है, उन्हें कोठियों से उसका

   1/4 वापस मिल जाएगा । ऐसी बस्तियों में, जो कोठी को मोकररी के रूप में दी गई है, तावान की सम्पूर्ण रकम रैयतों को लौटा दी जाएगी । बेतिया कोर्ट ऑफ वार्डस उनसे 7 वर्षो तक अपनी जमाबन्दी की वृद्धि नहीं करेगी ।

5. अबवाब की वसूली सर्वथा गैरकानूनी है । भविष्य में उनके खलिहान में लिखितमालगुजारी

   सरह से अधिक जमींदारों को भुगतान नहीं करना है ।

6. रैयत के वारिसों के नाम दर्ज कराने के लिए किसी तरह की फीस की वसूली गैरकानूनी है ।

   अन्य मामलों में ऐसी फीस एक निश्चित दर से ली जानी चाहिए । बोर्ड ऑफ रेवेन्यू से कहा जाएगा कि बेतिया राज में वारिस का नाम चढ़ाने के लिए ऐसी कोई फीस की दर निश्चित करें और मोकररीदारों को उसी दर के अनुसार फीस वसूली का अधिकार होगा ।

7. बेतिया राज में चरसा महाल समाप्त कर दिया जाना चाहिए, किन्तु जब तक रामनगर राज में इस मामले में पूरी तहकीकात नहीं कर ली जाती, तब तक अन्तिम आदेश नहीं दिए

   जाऐं ।

8. किरासन तेल बेचने के लिए लाइसेंस जारी करना गैरकानूनी है और उसे एकदम समाप्त कर देना चाहिए ।

9. बेतिया राज में रैयत मालिक को उपयुक्त दाम देकर सैरात में आधा हिस्सा खरीद सकता हैं किन्तु अगर किसी इलाके में इसकी आशंका हो कि बड़ी संख्या में पेड़ काट दिए जाएँगें तो बेतिया राज के मैनेजर को अधिकार होगा कि वह इस संबंध में रैयतों को दरखास्तों की

   संख्या वह परिसीमित कर सकता है ।

10. जमींदारों, मोकररीदारों, ठेकेदारों को अधिसूचित कर दिया जाना चाहिए कि अपने इलाके में मवेशियों के लिए पर्याप्त परती और चारागाह वे छोड़ दें ।

11. इनके लिए रैयतों पर जुर्माना करना और उसकी वसूली करना गैरकानूनी है । इसकी जानकारी रैयतों को अच्छी तरह दिया जाना चाहिए और जमींदारों, मोकरीरदारो और ठेकेदारों को इसकी वसूली करने से रोक दिया जाना चाहिए ।

12. गाड़ी के सट्टा की अवधि 5 वर्ष से ज्यादा की न हो और इस संबंध में स्वेच्छा से लोग सट्टा

    करें ।

13. मजदूरी स्वेच्छा पर आधारित होगी (किसी से जबरन मजदूरी नहीं कराई जायेगी) ।

14. मालगुजारी की प्रत्येक किस्त का भुगतान करने पर उपयुक्त किस्ते देने के संबंध में समिति की अनुशंसा के संदर्भ में सरकार यदि संभव हो तो एक फारम निश्चित कर दे ।

15. जिला पार्षदों से कहा जाए कि प्रायोगिक तौर पर ढाठों का प्रबन्ध वह स्वयं करें । उसे कोठी

या दूसरे ठेकेदारों के हाथ में नहीं सौंपे ।

राँची से गांधीजी चम्पारण लौटे और वहाँ 12 अक्टूबर तक रहे । इस बीच रैयत उनके समक्ष आते रहते थे और वे समिति की अनुशंसाओं की मुख्य बातें उन्हें समझाते । इस दरमियान बिहार के छात्रों ने गांधीजी को बिहार छात्र सम्मेलन के 15 अक्टूबर को भागलपुर में होने वाले अधिवेशन का अध्यक्ष मनोनीत किया था । अत: बम्बई जाने के पहले गांधीजी भागलपुर गए । चम्पारण का काम मुजफ्फरपुर के एक वकील बाबू जनकधारी प्रसाद के हाथों में देकर भागलपुर गए । जनकधारी बाबू इस काम के लिए मोतिहारी में ही रहने लगे थे ।

जाँच समिति की अनुशंसाऐं चम्पारण जिला में शीघ्र ही सरकार की ओर से एक अधिसूचना द्वारा जारी करके प्रचारित कर दी गई । इसके लिए 'चम्पारण का उद्धार' एक पुस्तिका भी प्रकाशित की गई । जिला के कोने-कोने में रैयतों को भारी राहत मिली । एक ऐसी व्यवस्था से मुक्त होने की आशा का उनमें संचार हुआ, जो उनके जीवनरस का ही शोषण कर लेती थी तथा अभिशप्त जिन्दगी बिताने को उन्हें बाध्य करती थी ।

3.7.2 चम्पारण कृषि कानून

प्लान्टरों द्वारा समिति की रिपोर्ट पर असंतोष जारी किया गया व सरकार की अधिसूचना पर भी इंगलिशमैन और स्टेट्समैन जैसे अखबारों के जरिये प्रश्नचिन्ह लगाये किन्तु सरकार ठस से मस नहीं हुई । हालांकि जाँच समिति के सदस्य पी. कैनेडी एवं श्री जे.बी. जेम्सन (दोनों की प्लान्टर्स की तरफ से समिति के सदस्य थे) ने जाँच समिति की रिपोर्ट पर असंतोष प्रकट किया किन्तु 29 नवम्बर 1917 में चम्पारण कृषि विधेयक प्रस्तुत किया गया जिस पर काफी चर्चा होने के पश्चात 4 मार्च 1917 को विधेयक चम्पारण कृषि कानून के नाम से अभिज्ञात हुआ । "प्लान्टरों के कानूनी सलाहकार श्री पी. कैनेडी (जाँच समिति का एक सदस्य) और श्री जे. बी. जेम्सन (श्री डी.जे.रीड) ने त्याग पत्र देने के बाद इसे प्लान्टरों के प्रतिनिधि के रूप में विधान परिषद का सदस्य मनोनीत किया गया था । डी.जे रीड ने जाँच समिति की अनुशंषाओं के विरूद्ध प्लान्टरों की कठोर आलोचना के फलस्वरूप परिषद से पद त्याग कर दिया था क्योंकि वह भी जाँच समिति का एक सदस्य था । अन्तत: चम्पारण कृषि कानून के अस्तित्व में आ जाने से चम्पारण के किसान शोषित जीवन से मुक्त हुए ।

3.8 सारांश

निष्कर्ष को रूप में हम देखें तो पायेंगे कि गांधीजी के द्वारा चम्पारण के किसानों की इस वृहद समस्या से मुक्ति दिलवाने में उनके जिस व्यक्तित्व की झलक दिखाई देती है उसके बारे में राजेन्द्र बाबू के यह शब्द स्मरण आते है, जो उन्होंने गांधीजी के बारे में उनके जाँच समिति के सदस्य के नाते किये कार्य पर कहे थे, हमने गांधीजी को पहली बार एक वार्ताकार एवं शान्तिदूत के रूप में देखा । सैद्धान्तिक प्रश्नों पर वे टस से मस नहीं होते थे, किन्तु विस्तार की बातों में प्लान्टरों की बात काफी हद तक मान लिया करते थे । इस प्रकार यह

बात बिल्कुल स्पष्ट रूप से उभर कर आती है कि वे अपनी बात उस हद तक मनवाने में सफल रहते थे जिस हद तक कि वार्ता के दौरान कोई कटुता उत्पन्न नहीं हो ।

गांधीजी के व्यक्तित्व के बारे में लिखना, कोई छोटी-मोटी बात नहीं है । बहुत से विद्वानों द्वारा उनके व्यक्तित्व, दृष्टिकोण, सिद्धान्त, कार्य-कलाप के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है किन्तु यदि यह कहा जाये कि चम्पारण के किसानों के लिए वे किसी अवतार से कम नहीं थे, तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी । इस आन्दोलन के सफल इतिहास में एक ऐसे अंग्रेज अधिकारी मार्डोक को नहीं भुलाया जाना चाहिए, जिसने सही नीति का अनुसरण करते हुए सरकार द्वारा गठित जाँच समिति की रिपोर्ट को रैयतों के पक्ष में चम्पारण कृषि कानून के नाम से पारित करवाने में अपना विशेष योगदान दिया तथा अपने ही बिरादरी के लोगों, चाहे वे अंग्रेजी अखबार, जो कि निहले साहबों के पक्ष में फैसला चाहते थे, हो या जाँच समिति के अंग्रेज सदस्य, सबकी बातों को दरकिनार करते हुए एक निष्पक्ष शासक की भूमिका प्रस्तुत कर एक सही नीतिकार की भूमिका निभाई ।

3.9 अभ्यास प्रश्न

1. चंपारण की समस्या से आप क्या समझते हैं ?
2. चंपारण समस्या पर गांधी की कार्य योजना का वर्णन कीजिए?
3. चंपारण समस्याओं में गांधी की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए?
4. चंपारण समझौते की प्रमुख अनुशंसाएँ क्या-क्या थी?

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. 'सम्पूर्ण गांधी वाड्गमय', खण्ड 91, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, 1998
2. डेविड हार्डीमन, 'पीजेन्ट नेशनालिटिज ऑफ गुजरात' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1981
3. कालिकिंकर दत्त, 'बिहार में स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास', बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना ।

इकाई - 4

खेड़ा सत्याग्रह एवं गांधी

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 खेड़ा आन्दोलन

4.3 खेड़ा के किसानों को न्याय दिलाने में गांधीजी के प्रयास

4.3.1 खेड़ा सत्याग्रह

4.3.2 खेड़ा सत्याग्रह में समाचार-पत्रों की भूमिका

4.3.3 पारीख जाँच रिपोर्ट

4.3.4 खेड़ा की स्थिति से अंग्रेज पदाधिकारियों को अवगत करवाना

4.4 आन्दोलन की समाप्ति

4.5 खेड़ा सत्याग्रह के अन्त पर गांधी के विचार

4.6 सारांश

4.7 अभ्यास प्रश्न

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप जान पाएँगे:

- खेड़ा किसान आन्दोलन की प्रकृति।
- खेड़ा सत्याग्रह की कार्ययोजना
- खेड़ा के किसानों को न्याय दिलाने में गांधीजी की भूमिका
- खेड़ा आन्दोलन के बारे में गांधीजी के विचार

4.1 प्रस्तावना

गुजरात जो कि ब्रिटिश शासन के अधीन बम्बई सरकार के अन्तर्गत आता था, वहाँ सरकार सीधे ही अपने द्वारा नियुक्त अधिकारियों के जरिये किसानों से हर वर्ष कर लाया करती थी । वृहत्तर बम्बई प्रान्त में फसल रूपये में बारह आने हो, तो उसे सामान्य माना जाता था ।

'कर' से तात्पर्य एक ऐसे अनिवार्य भुगतान से है, जो सरकार को सार्वजनिक हितों से संबंधित खर्चों की पूर्ति के लिए चुकाया जाता है और उस भुगतान के बदले करदाता को कोई भी हित या लाभ मिले, यह आवश्यक नहीं है । प्रो. डाल्टन के शब्दों में देखें तो आर्थिक दृष्टि से सबसे आदर्श कर प्रणाली वह है, जिसके कम से कम बुरे आर्थिक प्रभाव हो तथा अधिक से अधिक अच्छे आर्थिक प्रभाव हो । कर का अर्थ एवं परिभाषा से यह तथ्य स्पष्ट उभर कर आता है कि कर से प्राप्त आय का उपयोग सार्वजनिक हित के लिए किया जाना चाहिए एवं उसकी

मात्रा इतनी ही होनी चाहिये, जिससे कि उसके कोई दुष्परिणाम नहीं आने लगे । खेड़ा आन्दोलन में कर की मात्रा में कोई वृद्धि नहीं की गई थी, फिर खेड़ा का किसान आन्दोलन के लिए क्यों विवश हुआ, उसका क्या औचित्य था?

4.2 खेड़ा आन्दोलन

खेड़ा आन्दोलन को समझने के लिये यह ध्यान में रखना जरूरी है कि भारत में ब्रिटिश शासन में कई वर्षों की अवधि के लिये लगान नियत करने की प्रणाली जान-बूझकर अपनाई गई थी । समय-समय पर लगान नियत करने के पीछे सिद्धान्त यह था कि उसे इस प्रकार निश्चित किया जाए कि सामान्य रूप से उतने परिवर्तन की गुंजाइश, मौसम के परिवर्तनों का जितना अनुमानित लगान निर्धारक अधिकारी लगा सकते है, रख ली जाए किन्तु चाहे फसल बुरी हो या अच्छी, सिद्धान्तत: लगान हर साल चुकता होना चाहिये । इसलिये भारत सरकार ने यह स्वीकार करते हुए भी कि व्यवहार के समय लगान वसूली में हेरफेर की गुंजाइश होना जरूरी है, यह भी कहा कि इस प्रस्ताव में जिस प्रणाली का अनुमोदन किया गया है, उसमें लगान वसूली करते समय किसी प्रकार की ढील-ढाल या असावधानी नहीं होना चाहिए । वह यह भी नहीं चाहती कि लगान को मुल्तवी और माफ करने की प्रस्तावित प्रणाली राजस्व प्रशासन का नित्य अंग ही बन जाये । वास्तव में इसे किसानों को छूट के रूप में मान्यता दी गई थी, ना कि अधिकार के रूप में । यह छूट केवल अपवादस्वरूप ऐसे कठिन संकटों के लिये थी, जिनमें बन्दोबस्त के अनुसार किये गये समझौते में ढिलाई करना सरल और जरूरी लगे । यह भी कहा गया कि किसान से यह उम्मीद करना कि वह बुरी और अच्छी फसलों के साधारण उतार-चढ़ाव को बरदाश्त कर लेगा, ठीक और उचित ही है तथा बम्बई प्रान्त की सरकार ने कलेक्टरों को यह अधिकार दिया कि जब स्थानीय जाँच पड़ताल से उसे निश्चय हो जाये कि किसी इलाके में वर्षा के अभाव या किसी अन्य कारण से फसल पूरी तरह या अशंत खराब हो गई हो और इसीलिये वहाँ लगान वसूली मुल्तवी करना जरूरी हो तो वह वैयक्तिक परिस्थितियों पर विचार किये बिना सब किसानों का लगान मुल्तवी कर सकता है । किन्तु उस समय सरकार ने आँख मूँदकर इस फार्मूले का पालन करना ठीक नहीं माना, लेकिन यह राय व्यक्त की कि राहत देने के बारे में सामान्य मार्गदर्शन के लिये गणित के आधार पर कोई प्रमाणित तालिका बनाई जानी चाहिये ।

सन् 1907 से पहले सरकार फसल खराब होने पर भी काश्तकार को लगान में बिल्कुल छूट नहीं देती थी और ना ही उसे स्थगित करती थी । अकाल से संबंधित 1909 के आयोग के बाद ही सरकार ने लगान स्थगित रखने और छूट देने के नियम निर्धारित किये । इतना न्याय भी लोगों द्वारा आन्दोलन किये जाने पर ही मिल सका था ।

श्री गोकुलदास कहानदास पारेख, सदस्य, बम्बई विधान परिषद में बम्बई सरकार के एक सरकारी रिपोर्ट के उत्तर में अपनी एक टिप्पणी में खेड़ा के किसानों की दुर्दशा के बारे में जानकारी देते हुए निम्नलिखित बातें उजागर की-

पंचमहल (ब्रिटिशकालीन गुजरात का एक जिला) के अतिरिक्त सब जिलों में, लगान के आँकड़े अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच गये हैं अर्थात सरकार प्रतिवर्ष की औसत उपज का बीस प्रतिशत ले लेती है ।

इसी टिप्पणी में श्री पारेख ने यह भी दर्शाया है, कि सन् 1899 ई. में जब अकाल पड़ा था, तब भड़ौच और सूरत जिलों में अधिकारियों द्वारा किये गये अत्याचारों के विरूद्ध बहुत शिकायतें की गई थीं । बम्बई विधान मण्डल के सदस्यों ने विधानसभा में भी यह सवाल उठाया था । सरकार ने शिकायतों को गलत बताया । अन्त में शिकायत करने वाले एक सज्जन ने इन जिलों का दौरा किया, उन्होंने निजी तौर पर इन शिकायतों की जाँच की तथा गवाहियाँ इक्कठी करके उन्हें प्रकाशित किया । इससे सरकार को जाँच करवाने के लिये विवश होना पड़ा । श्री मैकानिकी (एक अंग्रेज अधिकारी) को जाँच करने के लिये नियुक्त किया गया और उन्हें बहुत सी शिकायतें उचित मालूम हुई । अन्ततः सरकार को 1907 में लगान माफ और स्थगित करने के संबंध में नियम बनाने पड़े, किन्तु श्री पारेख ने अपनी इसी टिप्पणी में यह बताया है कि खेड़ा में 1911 से लेकर 1916 तक इस जिले के किसान कम या ज्यादा नुकसान उठाते रहे, और लगान अदा ना करने पर सरकारी अधिकारी, लोगों के ढोर-डंगर बेचने आदि दमनकारी उपायों का सहारा लेते रहे है । खेड़ा जिले में 1911 से की जनगणना के हिसाब से कुल 7,16,932 में से 4,37,750 किसान परिवार से यानि लगभग 81 प्रतिशत लोग कृषि पर आधारित जीवन जी रहे थे ।

किन्तु सन् 1917 वह वर्ष था, जब खेड़ा जिले के किसान अब तक के सबसे बुरे दौर से गुजर रहे थे, जिसके निम्न कारण रहे -

क) सन् 1917 में देर से हुई भारी वर्षा (अतिवृष्टि) के कारण बाजरे की फसल नष्ट हो गई । कुछ अन्य फसलों को भी नुकसान हुआ । इन मुख्य फसलों के अलावा गौण फसलों को भी नुकसान हुआ, और कहीं-कहीं धान को भी चुहों से हानि पहुँची थी ।

ख) साथ ही वहां के किसानों की प्लेग जैसे भयंकर रोग से भी उसी वर्ष काफी जानमाल की हानि हुई थी ।

परिणामस्वरूप वहाँ के किसान लगान देने की स्थिति में बिल्कुल नहीं थे, लेकिन दूसरी ओर चावल की फसल और बाद में बोई जाने वाली दूसरी फसलें असाधारण रूप से अच्छी हुई थी ।

यहाँ यह बात बताना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने 19०7 में लगान स्थगित या माफ करने के बारे में, जो बम्बई प्रान्त के नियम स्वीकृत किये थे, उसके मूलभूत सिद्धान्त निम्न थे:-

क) बड़े संकटों में एक-दूसरे से लगे क्षेत्रों को एक मानकर कार्रवाही की जाये ।

ख) निपटारे के लिये अलग-अलग क्षेत्र की हालातों की जाँच पड़ताल न की जाये ।

ग) राहत देने के लिये हमेशा पहले लगान मुल्तवी किया जावे, माफ न किया जाये और लगान सूनिम्नलिखित अनुपात से मुल्तवी की जाये :-

यदि फसल सामान्य फसल की एक-तिहाई से ज्यादा या आधी से कम हुई हो तो आधा लगान मुल्तवी किया जावे ।

यदि फसल सामान्य फसल की तिहाई से ज्यादा और आधी से कम हुई हो तो आधा लगान मुल्तवी किया जावे और दूसरी हालात में लगान वसूली मुल्तवी न की जावे ।

उक्त लगान वसूली के लिए सामान्य फसल से तात्पर्य वृहत्तर बम्बई प्रान्त में फसल रूपये में बारह आने हो तो उसे सामान्य माना जाता था ।

उक्त नियमों के अनुसार कलेक्टर ने (जो हिन्दुस्तानी था) स्थानीय जांच-पड़ताल के बाद खेड़ा जिले के तीन ताल्लुकों के 104 गांव में विभिन्न मात्रा में लगान की वसूली स्थगित की, जितने लगान की वसूली स्थगित की गई, वह उन ताल्लुकों के लगान का 20 प्रतिशत और पूरे जिले का 7.4 प्रतिशत था ।

उक्त लगान वसूली स्थगित का प्रतिशत देखने पर ज्ञात होता है कि यह छूट ऊँट के मुँह में जीरे के समान थी और इसमें भी लगान वसूली स्थगित के सरकार के औपचारिक आदेश के पूर्व भी बम्बई के दो वकीलों के नेतृत्व में एक शिष्ट मण्डल ने 15 दिसम्बर 1917 को कलेक्टर से मुलाकात की थी । शिष्टमण्डल ने उनसे यह कहते हुए कि सभी फसले प्राय: पूरी तरह खराब हो गई हैं, माँग की कि (1) अधिकांश मामलों में लगान तत्काल माफ कर दिया जावे, (2) बाकी मामलों में पूरी लगान की वसूली स्थगित कर दी जावे । इस पर कलेक्टर ने बताया कि उनकी पहली मांग तो नियम विरूद्ध है, लेकिन वचन दिया कि वसूली स्थगित करने के मामले में विचार किया जावेगा । इसी के परिणामस्वरूप उन्होंने उपयुक्त आदेश निकाले थे ।

तदोपरान्त यह मामला गुजरात सभा ने अपने हाथ में ले लिया, जिनका कि प्रधान कार्यालय अहमदाबाद में था, जो कि खेड़ा जिले के बिल्कुल बाहर था । उन्होंने स्थानीय अधिकारियों की उपेक्षा करके प्रार्थनाऐं और तार सीधे स्थानीय सरकार को भेजे और फसल की स्वतन्त्र जाँच करने की मांग की । जब बम्बई सरकार से कोई प्रत्युत्तर प्राप्त नहीं हुआ, तो उन्होंने खेड़ा जिले के किसानों को एक गश्ती पत्र भेजा जिसमें कहा गया था कि बम्बई सरकार से कोई जवाब नहीं मिला । इसलिए जिन किसानों की फसल पूरी की पूरी मारी गई हैं या जिनकी फसल सामान्य फसल से तिहाई से ज्यादा नहीं हुई हैं वे लगान अदा न करें । इस पर स्थानीय सरकार ने 16 जनवरी 1918 को अपनी पहली प्रेस विज्ञप्ति जारी की और उसमें तथ्य सामने रखते हुए लगान अदा करने के विधिवत् आदेश को मानकर लगान चुकाने से इन्कार करने के किसी भी प्रयत्न के विरूद्ध किसानों को चेतावनी दी गई ।

इससे साफ यह पता चलता है कि खेड़ा जिलो के किसानों को गुजरात सभा के अपूर्ण एवं त्रुटीपूर्ण प्रयासों का कोई लाभ नहीं मिल सका था ।

4.3 खेड़ा के किसानों को न्याय दिलाने में गांधीजी के प्रयास

जनवरी तक खेड़ा जिले का किसान पहले प्राकृतिक आपदा और फिर सरकार की बेपरवाह लाठी की मार को झेलता रहा । ऐसे में उन्हें अपने गुजरात राज्य के उस सपूत का साथ मिलने जा रहा था जिसने ना सिर्फ दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की दुर्दशा दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । बल्कि भारत के बिहार प्रान्त के चम्पारण जिले में सीधा अंग्रेज

निलहे साहबों से अपनी कलम व कागज के जोर पर वहाँ की रैयतों को मुक्त करवाकर अपना लोहा मनवा चुके थे । वह शख्स कोई और नहीं, स्वयं मोहन दास करमचंद गांधी थे, जो कि गुजरात में अहमदाबाद के पास कोचरबा नामक स्थान पर मई 1915 में एक आश्रम बनाकर अपना स्थायी आवास बना चुके थे । ऐसे में जबकि गुजरात प्रान्त के ही एक जिले के किसान अपने को ठगा हुआ महसूस कर रहे थे फरवरी 1918 में गांधीजी का उनके कष्टों में साथ आना स्वाभाविक था । गांधीजी ने खेड़ा के किसानों की माँग को फरवरी 1918 को अपने हाथ में ले लिया ।

खेड़ा जिला के किसानों की दुर्दशा दूर करने के लिए गांधीजी ने 5 फरवरी 1918 को बम्बई प्रान्त के गर्वनर के निजी सचिव को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने खेड़ा जिले के किसानों पर लगान के लिए स्थानीय अधिकारियों द्वारा अनुचित दबाव डाले जाने का जिक्र किया । उन्होंने एक पाँच सदस्यीय स्वतंत्र जाँच समिति बनाने का भी सुझाव दिया, जिसमें उन्होंने श्री पारेख एवं पटेल के नाम सुझाये, जिनके बारे में उनका तर्क था कि ये लोग इस समस्या के बारे में पहले भी दिलचस्पी लेते रहे हैं, इसलिए कोई भी व्यक्ति उनकी जाँच का विरोध नहीं करेगा । समिति के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने डॉ० हेरल्ड मैन का नाम सुझाया ।

गांधीजी का जाँच समिति बनाने का उद्देश्य यह था कि उस वर्ष जितनी फसल हुई हो, और साधारण वर्ष में जितनी फसल होती हो, किसानों से यह पूछकर विश्वसनीय तथ्य प्राप्त किए जा सकते है । उनका यह भी विचार था कि किसी गाँव की औसत फसल का निर्धारण करने के लिए रबी का ही नहीं, कपास की फसल को भी नहीं गिनना चाहिए ।

इसके साथ ही गांधीजी ने एक पत्र उत्तरी क्षेत्र के कमिश्नर श्री एफ.जी. प्रैट को भी लिखा, जिसमें उन्होंने लिखा कि उन्हे कपड़गंज ताल्लुक के मामलातदार के हस्ताक्षर से जारी किये गये कुछ नोटिस दिखाये गये है, जिनमें लिखा गया है कि यदि अधिसूचित लोग 11 फरवरी या उससे पूर्व नोटिस में बताई गई बकाया राशि का भुगतान नहीं कर देते, तो सरकार नोटिस में उल्लेखित जमीनों के प्लॉट जब्त कर लेगी । गांधी ने कहा कि इनमें से अधिकाँश इज्जतदार लोग हैं और जिसे वह अपना अधिकार समझते हैं, उसी के लिए लड़ रहे हैं ।

इस पत्र में जो बात निकलकर आती है वह स्पष्ट है कि सरकार लगान के बदले जो जमीन जब्त करने के बारे में सोच रही थी वो बकाया लगान से निश्चित रूप से बहुत अधिक कीमत की थी एवं किसान हर वर्ष बराबर लगान देते आ रहे थे । उस वर्ष वास्तव में उनकी फसल नष्ट हो गई थी ऐसे में उनकी कोई आमदनी नहीं हुई थी । साथ ही बीज आदि का नुकसान भी किसानों ने झेला था । ऐसे में लगान का कोई आधार नही बनता था । साथ ही गांधीजी ने जिस प्रकार नोटिसों में किसानों को दुष्ट व अवारा लिखकर सम्बोधित किया गया था उस पर भी अपनी नाराजगी प्रकट की ।

इसी बीच गांधीजी को सरकार द्वारा उनके द्वारा सुझाई गई स्वतन्त्र जाँच आयोग नियुक्त करने से इन्कार करने का पता चला ।

अत: गांधीजी ने फसल नष्ट होने के बारे में स्वयं जाँच करने का निर्णय लिया जिनका खुलासा उनके द्वारा श्री प्रैट को किया गया । 16 फरवरी 1918 के पत्र में उन्होंने श्री प्रैट को

बताया कि खेड़ा के एक बड़े भू-भाग में फसल खराब होने की खबर की जांच व्यक्तिगत रूप से तसल्ली किए बिना वे गुजरात से बाहर नहीं जाऐंगे ।

गांधीजी 16 फरवरी 1918 को एक बजे की गाड़ी से अपने सहयोगी दल के साथ नडियाद रवाना हो गये । गांधीजी को गुजरात सभा का अध्यक्ष भी बनाया गया था । इस बात का जिक्र भी उन्होंने इस पत्र में किया था । एक बात और जो गांधीजी के इस पत्र से निकलकर आती है वह यह है कि गांधीजी जब खेड़ा के शिष्ट मण्डल के साथ 5 फरवरी 1918 को बम्बई के गर्वनर से मिले थे तो गर्वनर ने उन्हें कहा था कि वे फसल खराब होने के बारे में जो लोगों का ख्याल है, उसे स्वयं (गांधीजी) जाँच करके देख ले और उसे दूर कर दे । बात स्पष्ट है कि अब तक जो लोग इस आन्दोलन में किसानों का साथ दे रहे थे वे फसल खराब होने के कोई स्पष्ट या मान्य प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर पाये थे । इसी पत्र में गांधीजी ने लिखा कि जब तक प्रस्तुत किए गए प्रमाण ऐसे पुष्ट नहीं है तब तक राजस्व नियमों के अनुसार मालगुजारी की वसूली रोक दी जाये।

गांधीजी अपनी जाँच के तरीके या उससे निकलने वाले परिणाम को किसी तरह से गोपनीय रखने के पक्षधर नहीं थे । इसलिए उन्होंने इसी पत्र में प्रैट को लिखा कि उनकी जाँच के समय यदि कोई सरकारी प्रतिनिधि भी उपस्थित रहे तो उसमें उन्हें कोई आपत्ति नहीं है । इस बात की पुष्टि गांधीजी द्वारा खेड़ा जिले के कलेक्टर श्री घोषाल को 17 फरवरी 1918 के लिखे पत्र से भी होती है जिसमें उन्होंने कलेक्टर को अपने द्वारा उनके जिले में जाँच पड़ताल करने के फैसले से अवगत कराया ।

वडयाल गाँव में लगान नही चुकाने पर तीन नोटिस निकाले जा चुके थे जिसमें सम्पति के जब्त करने की बात लिखी गई थी और वसूली के लिये 2 भैसें भी पकड़ ली गई थी जिनकी नीलामी की तारीक भी निश्चित की गयी थी । संयोगवश गांधीजी 17 फरवरी को ही उस गाँव में पहुँच गये और उन्होंने उसी दिन श्री घोषाल को बिक्री स्थगित करने के बारे में पत्र लिखा तथा यह भी लिखा कि जिन लोगों की सम्पति लगान के बदले जब्त करने की बात कही गई है वह सम्पति लगान की तुलना में कहीं ज्यादा है । साथ ही उन्होंने वडयाल की फसल के मूल्यांकन के जो ठोस प्रमाण इकट्ठे किये थे उनको श्री घोषाल के पास उपलब्ध आँकडों से मिलान कर देखने की बात लिखी ।

21 फरवरी को गांधीजी स्वयं खेड़ा जिला के जिलाधीश श्री घोषाल से मिले । 22 फरवरी को गांधीजी नडियाल ताल्लुक के दो गाँवों नैका और नवगाँव में गये और इन दोनों गाँवों के किसानों की दयनीय हालत देखकर गांधीजी ने श्री घोषाल को उसी दिन एक पत्र लिखा जिसमें उन्होनें वहाँ के किसानों को लगान में पूरी छूट दिये जाने की वकालात की । अपने मूल्यांकन में उन्होंने इन दोनों गाँवों के बारे में जो तथ्य रखे वे इस प्रकार थे:

क) उन्होंने बताया कि इन गाँवों में एक के बाद एक लगातार तीन मौसम की फसलें खराब रही हैं जिनका कारण वहाँ की जमीन पर नहर का खारा पानी चढ़ जाना है । यह बात उन्होंने नेका गाँव से अधिक नवगाँव के बारे में सही बताया ।

ख) फसल बरबाद होने का मूल्यांकन उन्होंने रूपये में चार आने से भी कम होना बताया (ज्ञातव्य रहे कि ब्रितानिया सरकार के राज में रूपये में बारह आने हुई फसल को सामान्य फसल माना जाता था ।)

साथ ही उन्होंने श्री घोषाल को उन गाँवों में लगान अदा न करने के एवज में सरकार की ओर से दिये गये 15 नोटिसों को वापस लेने का अनुरोध किया ।

इस प्रकार श्री गांधीजी ने दसकोई ताल्लुक सहित लगभग सभी तालुकों की जाँच कर एक अन्य पत्र सत्याग्रह आश्रम साबरमती से 26 फरवरी 1918 को भी घोषाल को लिखा, जिसके साथ उन्होंने अब तक के जाँच के दौरान गाँवों के नामों की सूची तथा अपने कार्यकर्त्ताओं के साथ तैयार फसल के अनुमान की जानकारी श्री घोषाल के पास भिजवा दी।

साथ ही उन्होंने अपने द्वारा की गई जाँच में उन तथ्यों को एक बार फिर उजागर किया, जिससे लगान स्थगित के कारण बनते थे:

क) खेड़ा जिले में प्लेग फैलने से बहुत से परिवार में आजीविका कमाने वाला मर चुका था और लोग प्लेग के डर से काफी खर्च उठाकर छप्परों में रह रहे हैं, जिससे उन पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ बढ़ गया था ।

ख) साथ ही कई गाँवों में किसान सरकार के डर से इतने सहमे हुए थे कि उन्होंने लगान देने के लिए अपने मवेशी और सम्पत्ति तक बेच दी और सैकड़ों ग्रामीण लगान की पहली किश्त भी दे चुके थे ।

गांधीजी ने यह भी लिखा कि कुछ मामलों में सरकार ने आधे लगान की वसूली स्थगित की है पर उन्होंने लगान वसूली पूरी तरह स्थगित करने का आग्रह किया । साथ ही गांधीजी ने अपनी बात की पुष्टि में एक और तथ्य प्रस्तुउजागर किया कि क्योंकि चूहों के कारण गाँव में अनाज की उपलब्धता बहुत कम हैं ऐसे में ग्रामीण लोग फलों के वृक्षों पर आधारित रहते हैं । इसलिए सरकार जो महुआ एक्ट के तहत महुआ के पेड़ काटने में लगी है, उसे न काटे और इसी पत्र में गाँधीजी ने एक बार फिर एक संयुक्त जाँच समिति बनाने का सुझाव दिया तथा अपने आपको भी अगर सरकार चाहे तो उपलब्ध रहने की बात लिखी ।

गांधीजी के उक्त पत्र के संदर्भ में श्री घोषाल ने अवगत कराया कि महुआ के पेड़ों को काटने का मामला विधान परिषद के सामने विचार के लिये रखा जायेगा तथा साथ ही फिर से सरकारी जाँच की बात भी स्वीकार की ।

इसी बीच गांधीजी ने बड़थाल गाँव के संबंध में एक पत्र 6 मार्च 1918 को फिर से श्री घोषाल से कहां निर्धारित किए गए कर के संबंध में कुछ प्रश्न पूछे ।

गांधीजी के पत्र में पूछे गये प्रश्न के संबंध में श्री घोषाल ने उत्तर दिया था कि सरकार द्वारा खेतों के हिसाब से नहीं बल्कि सारे गाँव के लिए आनावारी का हिसाब किया जाता हैं । सरकार का उद्देश्य गाँव की पूरी पैदावार जानकर उसे उस क्षेत्र से, जिसमें वह पैदा की गई, विभाजित करना है । साथ ही श्री घोषाल ने गांधीजी द्वारा आनावारी के संबंध में दिए गए तर्क को इस हिसाब से खारिज कर दिया।

श्री घोषाल के उक्त उत्तर से साफ झलकता है कि प्रशासन गांधीजी की किसी बात को पूरी गंभीरता से न लेता हुआ, सिर्फ अपनी बात पर अडिग था । साथ ही प्रशासन ने कुछ गाँव

में लगान अदा न करने पर चौथाई वसूली के लिए नोटिस जारी कर दिये थे । चौथाई से तात्पर्य था जो किसान लगान नही चुकाते थे उनसे लगान का चौथाई भाग जुर्माने के तौर पर ली जाने वाली वसुली ।

प्रशासन के इस रवैये से दुःखी होकर गांधीजी ने 9 मार्च 1918 को एक और पत्र श्री घोषाल को लिखा जिसमें उन्होंने चौथाई वसूल वाले नोटिसों को तुरन्त रोकने के बारे में लिखा तथा इस संबंध में एक तार भी उन्होंने बम्बई सचिवालय को भेजा । इससे साफ स्पष्ट है कि गांधीजी खेड़ा के किसानों की दुर्दशा को दूर करने के लिए बेहद प्रयासरत थे ।

साथ ही गांधीजी ने अपने इसी पत्र में उनके द्वारा 6 मार्च को श्री घोषाल को लिखे पत्र में आनावारी ठहराने की जिस दोषपूर्ण नीति का विरोध किया था और जिसके जवाब में श्री घोषाल ने उनका तर्क निरस्त किया था, उसका जवाब भी विस्तार से अपने इस पत्र में दिया ।

गांधी ने लिखा कि बडथाल के दोहरी फसल वाले क्षेत्र को अलग करने के उनके सवाल के जवाब में घोषाल ने जो पत्र लिखा है उसके लिए वह आभारी हैं । उन्होने लिखा कि एक खेत में जहाँ खरीफ और रबी की फसलें बोई जाती हैं वही आनावारी का निर्धारण इस तथ्य पर आधारित होना चाहिए कि यदि एक खेत में खरीफ और रबी दोनों की फसलें रूपये में सोलह आनें हुई हो तो उस खेत की अथवा किसी गाँव के उसी तरह खेतों की फसल सिर्फ सोलह आने होगी । दोहरी फसल वाले क्षेत्र को अलग करने की बात तभी सही कही जा सकती है जब यह माना जाए कि यदि किसी खेत में खरीफ की फसल सोलह आने हुई हैं तो कर निर्धारण के लिए वह उस हद तक सोलह आने से अधिक मानी जायेगी जिस हद तक उसमें रबी की फसल भी हुई है ।

गांधी ने स्वीकार किया कि खेतों के अनुसार आनावारी निकालने में खेतों के अनुसार गणना केवल नमूनों के रूप में किया जा सकता है । इस आधार पर गांधी का यह सुझाव था कि रबी की फसल पर विचार न किया जाये क्योंकि यह कोई सामान्य फसल नहीं था । यदि हर 100 में से 90 खेत में सिर्फ खरीफ की फसल बोई जाती है, तथा रबी की फसल नहीं बोई जाती और यदि रबी की फसल जहाँ बोई गई हो, वहाँ सोलह आने होती है, साथ ही यदि आनावारी के लिए रबी की फसल बहुत थोड़ी मात्रा में हुई हो तो 100 खेतों की यह आनावारी गलत होगी । मुख्य फसल निःसन्देह खरीफ की फसल है । गांधी ने कहा कि उनकी राय मे लगान वसूली निर्धारित करने के लिए रबी की फसल को ध्यान में रखकर किसानों पर आनावारी थोपी जाती है तो उनके साथ न्याय नहीं किया जाता । गांधी ने कहा कि उन्होने अपने साथी कार्यकर्ताओं के सहयोग से करीब 350 ग्रामों का अवलोकन किया और इस नतीजे पर पहुँचे कि किसान अपना लगान खरीफ की फसल से अदा करते हैं न की रबी की फसल से । गांधी ने कहा कि कोई भी जानकार प्रेक्षक एक खेत से दूसरे खेत में जाते हुए यह बात नजर अन्दाज नहीं कर सकता है कि रबी की फसल एक बड़े विशाल रेगिस्तान में हरित भूमि की तरह है । उन्होने यह भी कहा कि कोई किसान सभी खेतों में रबी की फसल नहीं लगा सकता । सन् 1914-15 का मौसम और फसलों की रिपोर्ट बताती है कि रबी की फसल पूरी फसल का केवल 12वां भाग था और सन् 1915-16 में 20वां भाग । गांधी ने सुझाव दिया कि मसाले, सब्जी व अन्य फसलें, जिन्हें कुछ ही काश्तकार बोते हैं, उनकी गणना नहीं की जानी चाहिए । जब

तक काश्तकार आमतौर पर कपास की फसल नहीं लगाते, तब तक कपास को भी उसी श्रेणी में रखना चाहिए । यदि गाँव का एक बड़ा जमींदार खास किस्म की फसलें उगाने के बड़े प्रयोग में सफल हुआ है तो पूरे गाँव की आनावारी बढ़ा दी जाये यह स्पष्टत: अनुचित होगा । इस गणना में घास की पट्टी को शामिल करने के खिलाफ भी गांधी ने अपना विरोध जाहिर करना चाहा । उन्होने कहा कि उनको यह बताया गया है कि यह घास आम तौर पर बेची नहीं जाती और लोगों को अपने मवेशियों को एक ओर से दूसरी ओर लाने ले जाने की जरूरत के मुताबिक किनारे छोड़ने पड़ते हैं । यदि आनावारी निकालने का उद्देश्य यानि औसत काश्तकार को यदि उसकी फसल की पैदावार नहीं हुई हैं, राहत प्रदान करना है तो यह बात बराबर ध्यान में रखा जाये ।

गांधी ने यह भी कहा की वे अपने इस सुझाव पर कायम है कि रबी की फसल जिसमें अन्य खरीफ फसलें भी शामिल हैं, उनके संबंध में काश्तकारों ने जो आँकड़े दिये हैं, उनकी यर्थाथता की जाँच के लिए आसानी से इस्तमाल किया जा सकता हैं । गांधी ने बताया कि उन्होने बड़थाल के लोगों को सुझाव दिया है कि उन्हें इस वक्त खड़ी फसलों को स्वतन्त्र गवाही की उपस्थिति में ठीक से तुलवाये बगैर खलिहानों से नहीं उठने देना चाहिए । गांधी ने बताया कि उन्होने निवेदन किया इस तरीके से बड़थाल की फसलों की जाँच करना कलक्टर घोषाल के लिए उचित होगा । इसके साथ ही गांधीजी के द्वारा करीब 350 गाँवों की जाँच पड़ताल की जा चुकी थी, जिसमें उनके द्वारा निकाले गए चार आने या उससे कम आनादारी का निष्कर्ष अन्य दो स्वतंत्र समितियों द्वारा निकाले निष्कर्ष से भी मेल खाती थी । इसी आधार पर गांधीजी इन सभी गाँवों में लगान मुल्तवी रखने के पक्के पक्षधर थे।

हालाँकि गांधीजी के कहने पर खेड़ा जिला के कलेक्टर ने जिन गाँवों की जाँच पड़ताल की गांधीजी ने उन्हीं गाँवों के आस-पास की फसलों की भी फिर से जाँच करवाई थी । इसमें गांधीजी को भी बुलाया गया था और वे एक बार फिर सम्मिलित हुए थे ।

किन्तु जैसा कि गांधीजी के घोषाल को लिखे 9 मार्च 1918 के पत्र से पता चलता है कि कलेक्टर की जाँच की रिपोर्ट मूलत: मामलातदार के आँकड़ों पर आधारित होने के कारण यह रिपोर्ट किसानों को उचित न्याय नहीं दिला सकने वाली एक त्रुटिपूर्ण रिपोर्ट थी किन्तु सरकार अपनी ही रिपोर्ट को सही दर्शा रही थी । हालाँकि इसमें कई गाँवों में आधा लगान अवश्य मुल्तवी करने की बात कही गई थी किन्तु गरीब किसानों को इससे कुछ खास राहत मिलने की संभावना नहीं थी ।

इस बीच गांधीजी ने श्री घोषाल से भेंट की तो उन्हें बताया गया कि जिन किसानों ने रबी की फसल भी बोई है उनका लगान मुल्तवी करना संभव नहीं है । इस पर आपत्ति करते हुए गांधीजी ने लिखा कि उन्होने रबी की फसल का निरीक्षण किया है । जो हरियाली भरे भूखण्ड आँखों से बड़े लुभावने लगते हैं वास्तव में पास से देखने पर पता चलता है कि उस फसल में बीमारी लग चुकी हैं और पैदावार कम होने के संकेत है । इस प्रकार गांधीजी ने लिखा कि खेत में मूंडेरों पर जो फसल दिखाई देती है दरअसल वह मवेशियों के चारे के रूप में काम आती है । अत: उसे रबी की फसल के रूप में न देखा जाये ।

जब घोषाल द्वारा गांधीजी के 9 मार्च को लिखे पत्र में कोई आश्वासन मिलने की संभावना नजर नही आयी, तो उन्होंने खेड़ा आन्दोलन के प्रारम्भ करने के पूर्व एक पत्र बम्बई के गर्वनर क्रिस को 10 मार्च 1918 को प्रेषित किया जिसमें उन्होंने उन्हीं सब बातों का जिक्र किया जो कि उन्होंने अपनी रिपोर्ट के साथ श्री घोषाल को लिखे पत्र में किया था । इस पत्र के अन्त में गांधीजी ने अपने इन शब्दों के साथ पत्र को समाप्त किया कि यदि फिर भी उनका अनुरोध ठुकरा दिया जाता है, तो उनके पास सिवाय इसके अन्य कोई चारा न रह जायेगा कि वे काश्तकार को सलाह दे कि वे बकाया लगान देने से इन्कार कर दें और अपनी सम्पत्ति की बिक्री अथवा जब्ती होने वे तथा अपने इस कदम के समर्थन मे अपील जारी करें । गाँधीजी ने, विनम्र राय दी कि यह बेहतर होगा कि लोग शालीनतापूर्वक सम्मानजनक ढंग से सरकारी आदेशों की अवज्ञा करे और अपनी अमज्ञा जा परिणाम जानते हुए खुश होकर भुगतें ।

गांधीजी ने गर्वनर को लिखे इस पत्र मे मांगें न माने जाने पर उनके नेतृत्व में किया जाने वाले आन्दोलन की एक हल्की सी रूपरेखा को भी उद्दत कर दिया था । लेकिन इसके साथ ही गांधीजी ने जाँच करने से पूर्व जो वचन दिया था, पहले स्थिति के बारे में स्वयं विनम्रतापूर्वक गर्वनर क्रिस को बताने की, उसका पालन भी किया ।

इसके करीब 10 दिनों तक भी जब गांधीजी को कोई प्रतिउत्तर प्राप्त नहीं हुआ तो उन्होंने 20 मार्च 1918 को उत्तरी क्षेत्र के कमिश्नर श्री एफ. जी. प्रैट को एक और पत्र लिखा जिसमें उन्हें आन्दोलन को तब तक स्थगित करने का आश्वासन दिया जब तक कि सरकार दूसरी किश्त की वसूली सारे जिले के लिये आम तौर पर स्थगित ना कर दें ।

यहाँ यह भी बताना उचित होगा कि गांधीजी ने तब तक समाचार पत्रों को भी खेड़ा समस्या से दूर रखा हुआ था तथा अपने दोस्तों को भी इसके लिए मना कर रखा था । 20 मार्च 1918 को गांधीजी को पूर्व के सरकारी आदेशों में किसी प्रकार के हेर-फेर करने का कोई आधार न होने की सूचना दे दी गई । दूसरे दिन गुजरात सभा में गांधीजी की अध्यक्षता में एक प्रस्ताव पारित करा कि सत्याग्रह का सहारा लिया जाये ।

4.3.1 खेड़ा सत्याग्रह

आखिर वो दिन आ ही गया जिस दिन गांधीजी ने, खेड़ा की जनता को राहत दिलाने के लिए, खेड़ा सत्याग्रह की घोषणा करने को विवश थे । गांधीजी ने 22 मार्च 1918 को नडियाद की एक आम-सभा में इस खेड़ा सत्याग्रह के आरम्भ करने की घोषणा की ।

उन्होंने किसानों को सम्बोधित करते हुए सलाह दी कि यदि उनको पक्का विश्वास है कि फसल सामान्य फसल के मुकाबले एक तिहाई से कम हुई है तो उन्हें लगान देने से इन्कार करके सत्याग्रह करने का प्रयास करे और सरकार जिस तरह चाहे उससे लगान वसूल करने दे । सभा में इस आशय की एक प्रतिज्ञा पर छोटे-बड़े कोई 200 किसानों ने हस्ताक्षर किये । यह अभियान मार्च से अप्रेल तक जारी रखा गया और लोगों ने यह शपथ ली कि वे उस वर्ष का लगान पूरा या आधा भी नहीं देंगे और इसके बदले में जो भी संकट उठाने पड़े, उठायेंगे । यदि इसके बदले उन्हे अपनी जमीन भी छोड़नी पड़े या जो भी हो, वे सब कुछ सहने को तैयार रहेंगे

। उनमें ऐसे भी लोग थे, जो लगान दे सकते थे पर ऐसा नही कर रहे थे क्योंकि ऐसी स्थिति मे गरीब किसान अपने जानवर और जमीन को बेचकर लगान चुकाने के लिए विवश किए जायेंगे । इसलिये ऐसे लोगों ने अपना कर्त्तव्य माना कि जो लगान चुका भी सकते हों, नही चुकता करेंगे । सत्याग्रह का अर्थ समझाते हुए गांधीजी ने उन्हें सविनय अवज्ञा करने को कहा ।

इधर गांधीजी अपने तरीके से सत्याग्रह की सफलता में लग चुके थे । जिस आन्दोलन को उन्होंने तथा उनके कहने पर ही उनके मित्रों ने समाचार पत्रों से बचाये रखा था, अब स्वयं गांधीजी ने समाचार पत्रों के जरिये खेड़ा के फसलों की दुर्दशा के बारे में ऐलान करना प्रारम्भ कर दिया । इसी तरह की एक खबर डाईरेक्टर जनरल इन्टेलीजेन्स की माह अप्रेल की वीकली रिपोर्ट में समाचार पत्र में गांधीजी द्वारा भेजी गई अपील को स्थान दिया गया । इस अपील में गांधीजी ने बताया कि खेड़ा जिले में खराब फसल हुई है, जो कि चार आने से भी कम है । सरकारी नियम यह है कि ऐसे में राजस्व प्राप्ति को स्थगित रखा जाए । बार-बार सरकार से रैयतों की तरफ से इसे स्थगित करने हेतु अपील की जाती रही हैं । लोगों की तरफ से गुजरात सभा के माननीय सदस्य जी. के. पारेख तथा वी.जे.पटेल देवधर, अमृतलाल ठक्कर और जोशी ने भारतीय समाज सेवक की हैसियत से जाँच कर पाया कि खरीफ की फसल नहीं के बराबर हुई है । गांधी ने भी कुछ उत्तरदायी एवं आदर योग्य कार्यकर्त्ताओं के साथ करीब 400 गाँव की जाँच पड़ताल की और वहीं स्थिति पाई । अधिकतर गाँवों में चार आने से भी कम फसल हुई थी और उन्होंने यह भी देखा कि अधिकतर रैयतों के पास पैसें नहीं थे, और बहुत से खलिहान खाली पड़े थे । बहुत से गरीब किसान जिले के बाहर से अनाज बेचकर उसकी जगह मक्का ला रहे थे और उसी से गुजारा चला रहे थे । मैंने यह भी देखा कि कुछ स्थानों पर लोग स्थानीय अधिकारियों के डर से ही लगान अदा कर चुके थे और यहुत सी जगह लोग अपने पेड़ इत्यादि बेचकर लगान चुका रहे थे ।

गांधीजी द्वारा समाचार पत्रों में भेजी गई उक्त टिप्पणी से साफ झलकता है कि लोगों ने लगान देना पूरी तरह बन्द नहीं किया था, चाहे उसके लिए उन्हे अपनी सम्पति का कुछ भाग ही क्यों न बेचना पड़े ।

गांधीजी ने इसी टिप्पणी में आगे लिखा कि लोग अपनी जरूरी चीजों के बढ़ते बोझ से पीड़ित थे और प्लेग के भय से छप्परों में रह रहे थे ।

गांधीजी ने आगे लिखा कि यह सब बातें कलेक्टर और कमिश्नर को अवगत करा दी गई है। उन्होंने कुछ जगह रियायत भी की, लेकिन वे पर्याप्त नही है ।

गांधीजी ने अपनी इसी टिप्पणी में आगे बताया कि इन परिस्थितियों में केवल लोगों को एक ही चीज की सलाह दी गई है कि यदि उन्हें लगता है कि वे अपनी सच्चाई को साबित कर सकते हैं तो वे सरकार को लगान देने से मना कर दें, लेकिन सरकार उनसे उनकी सम्पति बेचकर लगान वसूल करने में लगी है । लोगों को यह सलाह दी गई है कि वे अपना सबकुछ खोकर भी राजस्व का भुगतान न करें, चाहे उसके लिए उन्हें कोई भी जुल्म सहना पड़े । यदि लोग इस तरह चलते हैं, जैसा कि उन्हें बताया गया है, तो सरकार को इससे सबक लेकर एक आदर्श समझौते के लिए बाध्य किया जा सकता है ।

गांधीजी ने आन्दोलन के लिए अपना मुख्यालय हिन्दू अनाथाश्रम नाडियाद को बनाया, जहाँ गुजरात सभा के कर्मठ नेता जी. वी. नोवलकर ने गांधीजी को लम्बे समय तक आन्दोलन को आयोजित करने में एवं समाचार पत्रों में टिप्पणी व रिपोर्ट आदि भेजने में मदद की । इसके अलावा पूरे गुजरात एवं बाम्बे सिटी से भी कई नेता उनकी सहायता करने स्वतंत्रता से आते-जाते रहते थे ।

4.3.2 खेड़ा सत्याग्रह में समाचार-पत्रों की भूमिका

गांधीजी द्वारा समाचारों के जरिये पूरे भारतवर्ष में यह बात फैलाई जा रही थी कि सत्याग्रह करने में लोगों को कितना सहना पड़ सकता है, किन्तु यदि वे इसमें सफल होते हैं तो निश्चित रूप से सरकार को झुकने के लिए विवश किया जा सकता है । समाचार पत्रों को भेजी एक अन्य टिप्पणी में गांधीजी ने यह भी लिखा कि बहुत से समृद्ध सज्जन लोगों की सहायता करने के लिए तत्पर है, और यदि किसी को उनके घर से बेघर किया जाता है, तो वह उसके खाने व रहने के लिए घर का बन्दोबस्त भी करने के लिए तैयार है ।

गांधीजी की यह बात लिखने का सीधा सा अर्थ यह था कि भारत में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो अपने देशवासियों के दुख-दर्द में साथ देने को तैयार रहते हैं । अर्थात सरकार से सत्याग्रह करने पर डरने की आवश्यकता नहीं है । साथ ही गांधीजी ने लिखा कि ऐसे काश्तकार जो निर्धारित राजस्व नहीं दे रहे हैं उनसे एक फार्म जमानत के तौर पर सरकार द्वारा हस्ताक्षरित करवाया जा रहा है । ऐसे में गांधी ने लोगों को सलाह दी कि वे ऐसे हस्ताक्षर करने से पहले सोच लें । एक बार हस्ताक्षर करने के बाद दुबारा पलट नहीं सकेंगे ।

गांधीजी को लगा था कि सरकार की तरफ से फार्म हस्ताक्षर करने के लिए उन काश्तकारों को दिया जा रहा है, जो लगान देने के पक्षधर नहीं थे । गांधीजी का यह मानना था कि ऐसे फार्म पर किसानों से हस्ताक्षर करवाकर सरकार उनसे यह मनवा लेना चाहती है कि लगान देने के लिए पर्याप्त फसल हुई है ।

लेकिन गांधीजी को उस फार्म के बारे में श्री घोषाल, जिला कलेक्टर खेड़ा, ने अवगत कराया कि फार्म रियायत देने के लिए आवेदन पत्र था, जिसके जरिये किसान बकाया लगान स्थगित करने के लिये आवेदन कर सकता है और उस पर हस्ताक्षर करना अनिवार्य नहीं है ।

4.3.3 पारेख जाँच रिपोर्ट

समाचार पत्रों के अनुसार 4 अप्रेल 1918 तक 1200 किसानों ने राजस्व नहीं देने पर अपने हस्ताक्षर कर दिये थे । इधर गांधीजी अपने बम्बई स्थित मित्रों को सहायता के लिये पत्र लिख रहे थे । श्री जी. के. पारेख, बम्बई प्रधान परिषद के सदस्य, ने खेड़ा के संबंध में जो स्वतन्त्र जाँच की थी, उनकी रिपोर्ट को गांधीजी ने अपनी जाँच में सही ठहराया था । कमिश्नर ऑफ पॉलिस, बोम्बे ने 1 अप्रेल 1918 को अपनी रिपोर्ट के हवाले से बताया कि खेड़ा में जो बेकार का आन्दोलन खड़ा हुआ है, उसने वही के शिक्षित व विचारशील व्यक्ति जागृत हो गये हैं और वे खेड़ा के प्रशासन से नाराज होकर यह कह रहे हैं कि युद्ध के समय ही ऐसे नियम बनाने चाहिए । यह सरकार की विश्यसनीयता पर आघात है । इस तरह के आन्दोलन से लोगों की

नजर में कानून की विश्वसनीयता कम हो जायेगी । रिपोर्ट में यह भी लिखा गया कि भारत, दक्षिण अफ्रीका नहीं है जहाँ इस तरह के आन्दोलन को सही ठहराया जाए और असफल हो जाए । जिस तरह की परिस्थितियाँ भारत मे है ऐसे में इस आन्दोलन को शीघ्र हटाना आयश्यक है, अन्यथा इसके दूसरे जिलो में फैलने का डर और इससे सरकार अजीब स्थिति में आ सकती है । उसने बॉम्बे क्रॉकिल नामक समाचार पत्र का हवाला देते हुए बताया कि समाचार पत्र में भी इस तरह की हलचल को आपत्तिजनक और आश्चर्य कर देने वाला बताया है ।

बॉम्बे कमिश्नर ऑफ पोलिस के द्वारा अपनी रिपोर्ट में जिस तरह से अपने उद्गार व्यक्त किए, उससे साफ झलकता है कि बम्बई सरकार इस आन्दोलन को हलके तरीके से नहीं ले रही थी एवं गांधीजी द्वारा चलाये जा रहा खेड़ा आन्दोलन निश्चित रूप से अपनी सही दिशा की ओर जा रहा था।

4.3.4 खेड़ा की स्थिति में अंग्रेज पदाधिकारियों को अवगत करवाना

गांधीजी द्वारा अपने आन्दोलन में कुछ अंग्रेज पदाधिकारियों, जैसे स्टेनली रीड एवं सर जेक्स हुबले, जो कि सीधे तोर पर राजस्व विभाग से संबंधित भी ना होकर कार्यकारिणी परिषद के सदस्य थे लिखकर खेड़ा के किसानों का साथ देने एवं खेड़ा के स्थानीय प्रशासन द्वारा वहाँ की जा रही ज्यादतियों के बारे में लिख कर खबर कर रहे थे ।

इधर खेड़ा के किसानों पर जुल्म बढ़ता जा रहा था । जैसा कि गांधीजी ने खेड़ा के जिला कलेक्टर श्री घोषाल को अपने पत्र दिनांक 5 अप्रेल से अवगत कराया, उन्होंने लिखा कि ग्राम अगरपुरा, ओद और नासर में मवेशियों की कुर्की की गई हैं । ऐसे स्थान से दूधारू भैंसें उठा ली गई हैं तथा अधिकारी उनके घरों में रसोई घर में बिना जूते उतारे घुस गये । यह खेड़ा पर स्थानीय प्रशासन द्वारा लगान वसूली का अनुचित तरीका था ।

इधर डाइरेक्टर जनरल इन्टेलीजेन्स की रिपोर्ट में कहा जा रहा था कि गांधीजी द्वारा जो प्रांत के महत्वपूर्ण अखबारों को, खेड़ा समस्या के बारे में लेख भेज रहे है । रिपोर्ट में यह भी लिखा कि खेड़ा की घटना प्रांत की कोई बड़ी घटना नहीं है यह उन राजनैतिज्ञों के द्वारा उत्पन्न ऐसी घटनाऐं हैं जिससें यह सिद्ध हो सके कि सरकार लोगों की दुश्मन है ।

डाईरेक्टर जनरल की यह रिपोर्ट सिद्ध करती है कि सरकार किस प्रकार इस आन्दोलन को ले रही है । हालाँकि आगे उसने यह भी स्वीकार किया कि कुछ भारतीय समाचार पत्र यह मानकर चल रहे हैं कि गांधीजी जिस प्रकार चन्दाख एवं अहमदाबाद के मिल मजदूर की समस्या को सुलझाकर सरकार व उनकी (गांधीजी) शक्ति लोगों को बता चुके थे, अगर उसी प्रकार वे खेड़ा में सफल रहते है तो वह उनको (किसानों को) और अधिक भयानक और धर्मान्ध बना सकते हैं ।

डायरेक्टर जनरल ऑफ इन्टेलीजेन्स की उक्त टिप्पणी, जो कि समाचार पत्रों में प्रकाशित खबरों पर केन्द्रित थी, निश्चित रूप से उसे विचलित करने वाली थी । तभी अन्त में गांधीजी के सफल होने की दशा में, उसने अपनी रिपोर्ट में उन्हें (किसानों को) भयानक और धर्मान्ध जैसे शब्दों से सम्बोधित किया । आखिर सरकार ने बिना देर किए वहाँ खेड़ा के जिला मजिस्ट्रेट से अपनी स्थिति स्पष्ट करने को कहा, जिस पर 6 अप्रेल 1918 को खेड़ा के जिला

मजिस्ट्रेट ने वहाँ की स्थिति के बारे में अपनी रिपोर्ट बॉम्बे के स्पेशल डिपार्टमेन्ट को भेजी, जिसका सार यह था कि खेड़ा की स्थिति इतनी खराब नहीं है, जितना कि उसको प्रचारित किया जा रहा है । लगान का कार्य जारी है । उसने यह भी लिखा कि इस मामले में समझौता करना चाहते हैं । वे चाहते थे कि सरकार ने जिन लोगों पर लगान चुकता न करने पर एक चौथाई जुर्माने के आदेश किए है, उसे वापस ले लिया जाये, ऐसे लोग वाकई लगान अदा करने की स्थिति में नही हैं । उनकी सरकार जाँच कर लगान स्थगित करें । उसने यह भी लिखा कि लोग सम्पत्ति के कुर्की के डर से लगान चुका रहे हैं । अगर सरकार इसमें कुछ नरमी दिखाएगी तो यह उनकी हार मानी जाऐगी ।

जिला मजिस्ट्रेट ने अपनी रिपोर्ट में उन दो ताल्लुकों, काकाना और कपड़गंज, का उल्लेख भी किया जहाँ किसान गांधीजी के लगान न देने के प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने के बावजूद लगान दे रहे थे । इसके आगे जिला मजिस्ट्रेट ने लिखा कि गांधीजी ने उसे यह भी आश्वासन दिया कि जो लोग स्वेच्छा से लगान दे रहे है उन्हें लगान देने मे गांधी के कार्यकर्ता केस नहीं अटकायेंगे । उसने यह भी बताया कि गांधीजी इस बात से भी सहमत हैं कि कृषक अगर जरूरी समझें तो अपनी फसल का कुछ हिस्सा सरकारी बकाया के एवज में देंगे एवं उन्होंने इस बात पर भी सहमति प्रकट की हैं कि जो लोग लगान चुका नहीं रहे हैं, उनका माल-असबाब वहीं का वहीं का वहीं पूरी कीमत चुका कर खरीद लेंगे एवं लगान चुकाने के बाद शेष राशि यदि बचती है, तो काश्तकारों को दे दी जायेगी । जिला मजिस्ट्रेट ने अपनी इस रिपोर्ट में यह भी सन्देह प्रकट किया है कि अगर जनता ऐसा नहीं चाहेगी तो गांधीजी अपने पूर्व के रास्ते पर वापिस जा सकते है ।

जिला मजिस्ट्रेट की उक्त रिपोर्ट से ऐसा प्रतीत होता है कि जिला मजिस्ट्रेट के मत में खेड़ा आन्दोलन एक बेकार का अड़ंगा मात्र था और गांधीजी इस आन्दोलन से पीछे हट गये थे क्योंकि लोगों ने उनकी बात को ना मानते हुए लगान चुकाने का कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था । किन्तु यदि वास्तव में ऐसा होता, तो 7 अप्रेल 1918 को उत्तरी क्षेत्र के कमिश्नर एफ. जी. प्रैट गांधीजी को खेड़ा मामले पर बातचीत करने के लिये नहीं बुलाते । गांधीजी ने कमिश्नर प्रैट के उत्तर में उन्हें 9 अप्रेल को पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने लिखा कि वे, 11 अप्रेल, 9 बजे उनसे मिलने के लिए उपस्थित होना चाहते है । यह तथ्य इस बात को उजागर करता है कि कलेक्टर व कमिश्नर के बीच निश्चित रूप से कुछ विरोधाभास अवश्य था जिसका पता इस बात से भी लगता है कि कमिश्नर ने अपने 7 अप्रेल के ही पत्र में गांधीजी को यह भी लिखा था कि वह यह अपेक्षा नहीं करते कि सुलह वार्ता के लिए आने से पहले गांधी अपने हथियार डाल देंगे । 12 अप्रेल को कमिश्नर ने घोषित किया कि कम से कम 60 प्रतिशत लोगों ने लगान पहले ही चुका दिया है ।

प्रैट के साथ गांधीजी की जो बातचीत हुई उसके अनुसार प्रैट ने गांधीजी को साफ कर दिया था कि लगान को स्थगित रखना संभव नहीं है लेकिन चौथाई (जुर्माना) की कार्यवाही को बन्द किया जा सकता है यदि किसान लगान की पूरी किश्त अदा कर दें । साथ ही कमिश्नर ने गांधीजी को यह भी बताया कि किसान उनके मना करने के बाद भी लगान अदा कर रहे हैं । इसका उत्तर गांधीजी ने अपने कमिश्नर को लिखे 15 अप्रेल के पत्र से इस प्रकार दिया कि

खेड़ा की जनता उनके आदेशों की पालना आँखें मूँदकर नहीं करती । उन्हें ऐसा करने भी नहीं दिया जाता ।

यह कहना कि गांधीजी के इस आन्दोलन का असर नहीं के बराबर था, ठीक नहीं होगा, क्योंकि बम्बई प्रांत के वायसराय इस आदेश, जो कि कमिश्नर ने 24 अप्रेल को कलेक्टर को दिये, जिसमें बताया था कि राष्ट्रीय संकट की इस घड़ी में (प्रथम विश्व युद्ध के चलते जर्मनी का आक्रमण अपनी चरम सीमा पर था) घरेलू मतभेद खत्म करने और राजनैतिक प्रचार बन्द करने के जो जो प्रयत्न संभव होवे, सब किए जाने चाहिए । उनके लिखे पत्र ने इस परिस्थिति में सरकार पर यह दबाव अवश्य बना कि वह ऐसी रियायतें, जिनमें राज्य के आवश्यक अधिकार भंग न होते हो, लोगों को दें । कमिश्नर ने अपने पूर्व के सब आदेशों को निरस्त करते हुए यह निर्देश दिये ।

1) बम्बई भूमि-लगान कानून के अनुच्छेद 150(ख) के अन्तर्गत जमीन कुर्क करके बकाया लगान वसूल करना बन्द किया जाये ।
2) यदि किसान पूरा लगान दे देता है, तो उससे 'चौथाई'' जुर्माना लेने के लिए जोर न दिया
   जाये ।
3) सभी हालात में यदि हो सकें तो चुकता न करने वाले की चल सम्पत्ति कुर्क करके लगान
   वसूल किया जाये ।
4) यदि जमीन कुर्क की जा चुकी है और किसान ने बकाया चुका दिया हो तो चालू राजस्व वर्ष
   में वह जमीन उसे किसी भी समय लौटा दी जानी चाहिए ।
5) उसने यह भी कहा कि जो लोग वास्तव में लगान चुकाने की स्थिति में नहीं है, उन पर
   लगान चुकाने के लिए दबाव न डाला जाए, बल्कि बकाया को अगले वर्ष के हिसाब में शामिल कर दिया जाये ।

अगले दिन (25 अप्रेल) को बम्बई सरकार की दूसरी प्रेस विज्ञप्ति जारी हुई, उसमें कहा गया था कि लगान का अधिकाँश भाग चुकाया जा चुका है, जो बचा हैं, वह ऐसे लोगों पर बकाया है जो लगान तो दे सकते हैं लेकिन उन्हें लगान न देने के लिए बरगलाया जा रहा है तथा इन हालात में बम्बई सरकार गांधीजी की स्वतन्त्र जाँच कराने की प्रार्थना को स्वीकार नहीं कर सकती। उसने इस बात पर जोर दिया कि कर को स्थगित, मुल्तवी और माफी की माँग अधिकार के रूप में नहीं दी जा सकती । यह तो राहत देने के लिए रियायत के तौर पर किया जाता है । उसने यह भी घोषणा की कि उसके सारे तखमीनें और आकड़ें, जिन पर लगान वसूली का निर्णय आधारित है, निरीक्षण के लिये खुले हैं । कलेक्टर ने उक्त आदेश यथासमय मामलातदारों को भेज दिये थे, लेकिन लगता है, कि जो लगान नहीं दे सकते थे उन पर दबाव डालना बन्द करने में मामलातदारों को कुछ हिचक हुई, जिसका परिणाम यह हुआ कि कलेक्टर

ने 22 मई 1918 को उन्हें वहीं आदेश भेजा, लेकिन तब तक कुल लगान का 93 प्रतिशत वसूल हो चुका था ।

इधर खेड़ा के जिला कलेक्टर जे. घोषाल को गांधीजी द्वारा यह वचन दे दिया गया था कि लिम्बासी के जिन लोगों ने लगान नहीं दिया है, वे सभी बकाया रकम चुकाने के लिए पर्याप्त गेहूँ अथवा अन्य फसलें प्रदान करेंगे । फसल कुर्की के आदेश वापस ले लिए गए थे । मगर कपास व अन्य फसल पैदा करने वाले काश्तकार लगान अदा करने से इन्कार कर रहे थे । नडियाद के मामलातदार ने श्री गांधीजी से भेंट करने के बाद 3 जून को उत्तरखेड़ा गाँव के लोगों को सूचित करने के लिए गाँव के कार्यकर्ताओं को यह आदेश भेजा कि जो दे सकते हैं, वे लोग तत्काल लगान अदा कर दें । लेकिन उन लोगों पर, जो दरअसल गरीब है और जिनकी गरीबी साबित हो चुकी है, लगान की वसूली के लिए दबाव नहीं डाला जाये और उनका लगान अगले साल के लिए मुल्तवी कर दिया जाये ।

4.4 आन्दोलन की समाप्ति

तब गांधीजी ने लोगों को लगान अदा करने का अनुरोध किया । इसके बाद आन्दोलन खत्म हो गया । हालाँकि गांधीजी और खेड़ा के जिला कलेक्टर अप्रेल 1918 के अन्त में श्री जे. घोषाल की जगह श्री केर को बना दिया गया था, से गांधीजी का अन्य शेष रहे मामलों में पत्र व्यवहार होता रहा, जो कि विशेष तौर पर "चुकाई" जुर्मानें, जिन लोगों पर किया था, के बारे में था एवं इस सवाल के बारे में कि जिन लोगों को इस वर्ष लगान चुकता करने के लिए अंतत: गरीब करार दिया गया हैं, उनका लगान "मुल्तवी" माना जायेगा या "अनाधिकृत बकाया" । इस प्रश्न पर कलेक्टर का ख्याल था कि इस बारे में सचमुच गलतफहमी हुई है और उनकी सिफारिश पर सरकार अनमने होकर बकाया लगान को मुल्तवी मान लिया । जुलाई के अन्त तक कुल लगान 98.5 प्रतिशत सरकारी आकड़ों के हिसाब से वसूल हो चुका था ।

अब सवाल यह उठता है कि क्या यह आन्दोलन सिर्फ बकाया रहे 1.5 प्रतिशत लगान जिन लोगों से लेना शेष रह गया था, सिर्फ उन्हीं के लिए लड़ा गया । इसका कारण यह था कि गांधीजी द्वारा यह आन्दोलन फरवरी 1918 में शुरू किया गया था और गांधीजी ने मई के आरम्भ में यह स्वीकार किया कि "लगान रियायत के रूप में मुल्तवी किया जाता है, कानून द्वारा प्रदत्त अधिकार के रूप में नहीं" । लेकिन उन्होंने स्पष्ट रूप से यह नहीं माना कि दोनों में यह मूलभूत अन्तर इस कारण नहीं है कि सरकार निरंकुशतापूर्वक लोगों को अधिकार देने से इंकार करती है, बल्कि इसका कारण यह सीधी सादी बात है कि निश्चित लगान की तत्कालीन प्रणाली के अन्तर्गत किसान एक अवधि के लिए किए गए बन्दोबस्त को मानकर कुछ वर्षों तक बुरी फसल होने पर भी उतना ही लगान देने का वादा करता है, जितना वह अच्छी फसल होने पर देता है । इस प्रकार आन्दोलन का समर्थन इस आधार पर किया जा सकता है कि प्रशासनिक आदेशों के बारे में जहाँ कहीं स्थानीय अधिकारियों और किसानों में तीव्र मतभेद होते है वहाँ मतभेदों के मुद्दे पर एक निष्पक्ष जाँच समिति बनाकर ऐसे मुद्दे उसे सौंपे जाने चाहिए ।

4.5 खेड़ा सत्याग्रह के अन्त पर गांधीजी के विचार

महात्मा गांधी ने यह अवश्य माना कि इस आन्दोलन से गुजरात के किसानों को राजनैतिक शिक्षा मिली है और पाटीदारों में नई चेतना का विकास हुआ हैं । साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि सत्याग्रह का शुद्ध अन्त तभी माना जाता है, जब जनता में आरम्भ की अपेक्षा अन्त में अधिक तेज और शक्ति पाई जाये । लेकिन फिर भी उन्होंने इस आन्दोलन में कुछ अच्छाई अवश्य नजर आई । उन्होंने माना कि भविष्य में राज्य की ओर से होने वाले कष्टों के निवारण का मार्ग जनता के हाथ लग गया था । उसके उत्साह के लिए इतना ज्ञान पर्याप्त था ।

4.6 सारांश

इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रारम्भ में कम से कम गांधीजी के हस्तक्षेप से पहले आन्दोलन कोई बहुत अधिकप्रभावोत्पादक नहीं था । इसके अलावा घरेलू मतभेद समाप्त करने के लिए वायसराय महोदय की अपील निकलने तक स्थानीय सरकार तथा उसके स्थानीय अधिकारियों ने तब तक अपनाये गये अपने कड़े रूख में किसी तरह की नरमी नहीं दिखाई । जिस सीमा तक नरमी दिखाई गई, मुख्यत: इतनी ही नरमी दिखाई गई कि लगान वसूली के लिए स्वीकार्य कठोर तरीकों की जगह नरम तरीके अपनाए गए । यह किसी भी तरह श्री गांधीजी की माँगों के सामने झुकना नहीं था जब कमिश्नर ने यह निर्देश दिए कि उन किसानों पर, जो वास्तव में लगान चुकाने की स्थिति में नहीं हैं, कोई दबाव न डाला जाये । सामान्य संकट के समय लगान स्थगित करने के किसी खास नियम के अन्तर्गत नहीं आता, तथापि यह बम्बई अहाते में की जाने वाली लगान वसूली की परम्परा के अनुसार था, बाद में बकाये को इस "अनाधिकृत बकाया" से 'मुल्तवी लगान" में तब्दील करना, केवल एक साधारण छूट थी, फिर भी आन्दोलन जिस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कृत संकल्प था, यह छूट उसका एक छोटा सा अंश मात्र था । आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य यह था कि या तो फसल के नुकसान का अनुमान लगाने के लिए निष्पक्ष जाँच करायी जाये, या सरकार किसानों द्वारा लगाये गये अनुमान को ठीक मान ले और उसके आधार पर लगान स्थगित किया जाये । इनमें से कोई भी माँग स्वीकार नहीं की गई, यहाँ तक कि उपयुक्त छूट जिन खास मामलों में दी गई उनके बारे में भी यह निर्णय सरकारी अधिकारियों ने ही किया कि कौन किसान कितने गरीब हैं, कि लगान चुकता नहीं कर सकते या कौन ऐसे हैं कि कर दे सकते हैं और इसका पता लगाने के लिए कदम उठाने से पहले ही कि कौन चुकता करने योग्य हैं, कौन नहीं, श्री गांधी अपना आन्दोलन समाप्त करने के लिए राजी हो गये और उन्होंने कानून मानने से इन्कार करने वाले अल्पसँख्यकों से लगान जमा करवाने में सक्रिय भाग लिया । यह सच है कि, श्री गांधीजी पहले गलतफहमी के शिकार हो गये थे, क्योंकि 3 जून को उत्तरसंडा की सभा में आन्दोलन खत्म करने की घोषणा करते हुए उन्होंने किसानों से कहा कि "सरकार ने यह फैसला उन पर छोड़ दिया हैं कि कौन किसान लगान न दे", लेकिन यह व्यक्तव्य अधिकृत नहीं था और 1 जुलाई 1918 को कमिश्नर ने निश्चित रूप से यह घोषणा की कि "जिन लोगों को यह रियायत

मिलेगी, वह अत्यन्त गरीब किसान होंगे और वह कलक्टर और उनके मातहत अधिकारियों दारा निर्दिष्ट व्यक्ति होंगे, किसी बाहरी व्यक्ति या संस्था द्वारा निर्दिष्ट नहीं ।

अन्त में खेड़ा के संबंध में स्वयं गांधीजी द्वारा जो संदेश खेड़ा के लोगों को उन्होंने 6 जून 1918 को दिया, जिसमें स्वयं उन्होंने खेड़ा के समझौते को एक अशोभनीय समझौता करार दिया, निश्चित रूप से उनके निराशाजनक भाव को प्रकट करता है । कारण स्पष्ट है, इससे पूर्व के जितने भी आन्दोलनों से गांधी जुड़े, चाहे वे दक्षिण अफ्रीका से संबद्ध रहे हो या बिहार का चम्पारण आन्दोलन, सभी में गांधीजी का अहिंसात्मक झण्डे का जोर अवश्य दिखाई दिया हैं, किन्तु खेड़ा के आन्दोलन ने इस झण्डे का रंग कुछ सीमा तक अवश्य फिका कर दिया था ।

अब प्रश्न यह भी पैदा होता है कि आखिर इस आन्दोलन में ऐसी कौनसी कमी रही जिसने ब्रिटिश प्रशासन को इस आन्दोलन को समाप्त करने में सहायता की । वो यह कि खेड़ा के लोगों में आपसी विश्वास एवं दृढ़ इच्छा शक्ति की कमी थी, जो गांधीजी उनमें उत्पत्र नहीं कर सके किन्तु इस आन्दोलन ने वही के लोगों को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने का एक तरीका अवश्य स्थापित कर दिया था । साथ ही जन-जागृति का रास्ता भी बता दिया ।

4.7 अभ्यास प्रश्न

1. खेड़ा किसान आन्दोलन से आप क्या समझते हैं?
2. खेड़ा सत्याग्रह में समाचार-पत्रों की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए?
3. खेड़ा किसान आन्दोलन में गांधीजी की भूमिका की समीक्षा कीजिए?

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डेविड हार्डिमन 'पीजेन्ट नेशनालिटिज ऑफ गुजरात', ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, 1981
2. अबानी लहीरी, 'द पीजेन्ट एण्ड इण्डियास फ्रिडम मूवमेंट' वी.वी गिरी, नेशनल लेबर इन्स्टीट्यूट, नोएडा, 2001
3. 'वीकली रिपोर्ट ऑफ डाइरेक्टर जनरल' इन्टेलीजेन्स होम डिपार्टमेन्ट (पॉलिटीकल) मई, 1917,राष्ट्रीय अभिलेखागार, भारत सरकार, नई दिल्ली ।

इकाई - 5

बारदोली सत्याग्रह और महात्मा गांधी

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 बारदोली किसान आन्दोलन

5.2.1 बारदोली किसान आन्दोलन 1922 का स्थगन

5.2.2 बारदोली किसान आन्दोलन का पुर्नउद्भव

5.3 1928 में प्रारम्भ हुए बारदोली आन्दोलन की पृष्ठभूमि

5.3.1 सत्याग्रह का मूर्तरूप

5.3.2 बारदोली सत्याग्रह की तीव्रता

5.3.3 बारदोली दिवस

5.4 आन्दोलन के दौरान गांधीजी के विचार

5.5 बारदोली में गांधीजी का आगमन

5.6 बारदोली समझौता

5.7 सारांश

5.8 अभ्यास प्रश्न

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप जान पाऐगे :

- बारदोली किसान आन्दोलन की प्रकृति ।
- बारदोली सत्याग्रह की कार्य योजना ।
- बारदोली के किसानों को न्याय दिलाने में गांधीजी की भूमिका ।
- बारदोली आन्दोलन के बारे में गांधीजी के विचार

5.1 प्रस्तावना

गुजरात के सूरत जिले में स्थित बारदोली ताल्लुक में सरकार द्वारा राजस्व की बढ़ोतरी के विरूद्ध किसान आन्दोलन हुआ था । गांधीजी द्वारा चलाये जा रहे ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध सविनय अवज्ञा आन्दोलन की लड़ी में एक और कड़ी के तौर पर चलाया गया था । सरकार के विरूद्ध आन्दोलन चलाने के लिए किसी न किसी कारण की आवश्यकता होती है और बारदोली में वो कारण बन चुका था ।

5.2 बारदोली किसान आन्दोलन (1992)

सन् 1922 में गांधीजी व्यक्तिगत रूप से बारदोली गये और वहाँ उन्होंने किसानों से सरकार को राजस्व नहीं देने को कहा । बारदोली में स्थित किसान पाटीदार खाते-पीते लोग थे जिनमें अधिकतर वे लोग थे जो कि विदेशों में रह रहे थे किन्तु बारदोली की उपजाऊ भूमि को देखते हुए उसमें बढ़िया किस्म के कपास उपजाकर अपनी सम्पति में अधिकाधिक वृद्धि की पुष्टि से विदेश में अपनी सम्पत्ति विक्रय कर यहाँ आकर बस गये थे । पाटीदारों की इसी सोच के कारण गांधीजी को वहाँ सविनय अवइत आन्दोलन की सफलता पर एक सन्देह था कि वे (पाटीदार) उनके सिद्धान्त प्रेम, सत्य और अंहिसा पर विश्वास और अमल करेंगे अथवा नही । उनको यह भी जानकारी थी कि खेड़ा में भी पाटीदारों ने जब सरकार को राजस्व नहीं चुकाया था तब सरकार द्वारा उनकी सम्पत्ति को जब्त कर नीलाम किया तो वहाँ के पाटीदारों ने गांधीजी के अंहिसात्मक सिद्धान्त का पालन न करते हुए उन्होंने अपना आपा खो दिया था । ऐसे में जबकि बारदोली के पाटीदार पहले से ही समृद्ध हैं तो क्या वे गांधीजी के सुझाये मार्ग पर चलेंगे? गांधीजी इस बात को भी भली-भाँति जानते थे कि लगभग पूरे गुजरात में ग्रामीण जनसंख्या दो भागों में विभक्त थी जिनमें से गौरवर्ण लोग, जो कि उच्च जाति से थे, जिनमें पाटीदार, बनिया और ब्राहमण थे और दूसरे वर्ग में कालीपराज (काली त्वचा) जिसमें अन्य जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग आदि के लोग थे । वास्तव में गांधीजी इस बात के लिए चिन्तित थे कि एक बड़े स्तर के राजनीतिक हलचल के लिए उजला लुक (साफ सुथरे लोग) और कालीपराज (श्याम वर्ण) लोगों के बीच इस सामाजिक रूकावट या खाई को कैसे पाटा जाए ।

बारदोली में प्रथम सविनय अवज्ञा आन्दोलन के दौरान गांधीजी ने कुछ सभाओं को सम्बोधित किया । गांधीजी ने कहा कि पाटीदार युवक मण्डल के लोग इस रचनात्मक कार्य के लिये जोश के साथ आगे आऐ । इसके साथ ही पूरे बारदोली ताल्लुक में बैठकें आयोजित हुई और सरकार को राजस्व न देने से संबंधित चेतावनी प्रेषित कर दी गई लेकिन इससे पहले कि आन्दोलन अपना कार्य करता गोरखपुर जिले के चोरी-चोरा स्थान पर हुए खून-खराबे से आहत गांधीजी ने इस आन्दोलन को स्थगित कर दिया।

5.2.1 बारदोली किसान आन्दोलन (1922) का स्थगन

बारदोली सत्याग्रह रोकने का उक्त कारण के अतिरिक्त अन्य कारण भी थे । इसके लिए 12 फरवरी,1922 को कांग्रेस कार्यसमिति द्वारा लिए गए 3 प्रस्ताव ऐसे थे जिनके अध्ययन से ये कारण भी स्पष्ट होते हैं। इन्हे निम्न रुप में अभियक्त किया जा सकता है:

देश अभी पर्याप्त रूप से अहिंसक नहीं हुआ था । इसीलिए कांग्रेस कार्यसमिति ने फैसला किया कि व्यापक सविनय अवज्ञा आन्दोलन फिलहाल स्थगित कर दिया जाये और हर तरह की आक्रामक कार्यवाहियाँ बन्द कर दिया जाये ।

कार्यकर्ताओं और संगठनों को सलाह दी गई कि वे किसानों को सूचित कर दें कि जमींदारों को लगान न देना कांग्रेस के प्रस्तावों और देश के हितों के खिलाफ है ।

जमींदारों को इस बात का आश्वासन दिया गया कि कांग्रेस के आन्दोलन का उद्देश्य भी रूप में उनके कानूनी अधिकारों पर चोट पहुँचाना नहीं है और जहाँ किसानों को किसी तरह की शिकायत है वहाँ कार्यसमिति यही चाहती है कि आपसी सलाह-मशविरे से और समझौता वार्ता से मामले को निपटा लिया जाऐ ।

उक्त तीनों प्रस्ताव बारदोली आन्दोलन को स्थगित करने के साथ ही लिए गए थे । इससे बारदोली आन्दोलन स्थगित का एक कारण यह भी बनता है कि बारदोली आन्दोलन में जहाँ किसान सरकार को कर अदा नहीं करना चाहते थे वहीं उसका असर जमींदार से किसानों द्वारा लिए ऋण न और किसान उन स्थानों पर भी कर देने से इन्कार न कर दे, इसीलिए कांग्रेस ने जमींदारों के साथ घनिष्ठ संबंधों के चलते बारदोली आन्दोलन को स्थगित करना ही ठीक समझा ।

बारदोली किसान आन्दोलन राष्ट्रव्यापी असहयोग आन्दोलन का अभिन्न अंग बन गया था । असहयोग आन्दोलन राष्ट्रव्यापी था किन्तु इसका सर्वाधिक प्रभाव संयुक्त प्रांत, बम्बई प्रांत, पंजाब, दिल्ली इत्यादि क्षेत्रों में था । सरकारी दमनचक्र भी इन्हीं क्षेत्रों में अधिक था । 1922 के आरम्भ में कांग्रेस एवं गांधीजी इस आन्दोलन को चलाने में असमर्थ दिखाई दिये । इसका एक कारण और था । पेरिस के शाँति सम्मेलन के साथ ही तुर्की के खलीफा का पतन हो चुका था । अत: असहयोग आन्दोलन के साथ सम्मिलित खिलाफत आन्दोलन कमजोर पड़ गया।

इसके साथ ही यहाँ यह बताना भी उपयुक्त होगा कि 10 मार्च, 1922 को गांधी द्वारा "यंग इण्डिया" में लिखे उनके तीन लेखों के कारण गांधीजी पर राजद्रोह का मुकद्मा चला और उन्हें 6 वर्ष कैद की सजा दी गई । हालाँकि रोगग्रस्त होने के कारण उन्हें 5 फरवरी, 1924 को रिहा कर दिया गया । इस दौरान बारदोली किसान आन्दोलन के बारे में गांधीजी कोई विचार या कार्ययोजना को मूर्तरूप नहीं दे सके । अंतत: बारदोली किसान आन्दोलन में एक लम्बा ठहराव आ गया ।

5.2.1 बारदोली किसान आन्दोलन का (1922) का स्थगन

बारदोली आन्दोलन स्थगित होने से सरकार के हौसले बढ़ गये और उसने दो अलग-अलग समितियों को गठित कर लगान में वृद्धि का प्रस्ताव पारित कर दिया । परिणामस्वरूप समिति की अनुशंषाऐं लागू होते ही बारदोली में एक बार पुन: विरोध के स्वर प्रकट हुए ।

अत: सन् 1928 में बारदोली सत्याग्रह एक बार फिर मुखर हुआ, जिसका नेतृत्व श्री बल्लभभाई पटेल ने किया । उसका मार्गदर्शन अप्रत्यक्ष रूप से गांधीजी ही कर रहे थे ।

बारदोली सत्याग्रह का मुख्य मुद्दा, बम्बई सरकार द्वारा बढाया गया कर निर्धारण रहा, जो कि 22 प्रतिशत कर दिया था जिसको किसान पूर्व निर्धारित दर पर ही देना चाहते थे । अत: उन्होंने राजस्व नहीं देने का फैसला किया ।

फरवरी 1928 की खुफिया पुलिस की गोपनीय रिपोर्ट में यह बताया गाया कि, सूरत जिले के बारदोली तालुका के गाँवों में 1922 के शुरू में जिस नाटक की कोशिश 'जनता की

अवज्ञा आन्दोलन' गांधीजी ने प्रारम्भ किया था, वहाँ बल्लभभाई पटेल किसानों के नेता के रूप में दिखाई दिये, जो कि किसानों से बढ़े हुए भूमि कर का भुगतान नहीं कराना चाहते थे । उसने 4 तारीख को बारदोली स्वराज आश्रम में एक औपचारिक सभा की और पूरे बारदोली तालुक की सभा 12 तारीख को बुलाई । उनके भाषण में उन्होंने किसानों को आव्हान किया कि वे कर नहीं देने की लड़ाई प्रारम्भ करें । इसके साथ ही इसी रिपोर्ट में समाचार पत्रों से प्राप्त सूचना के आधार पर यह बताया गया कि सभा में एक निर्णय पारित किया कि अगर सरकार अपने बढ़ाये हुए भूमि कर का फैसला वापिस ले लेती है और अपने पुराने कर निर्धारण को ही लागू कर देती है तो किसान राजस्व देने को तैयार हैं । रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि इस आन्दोलन में राजनीतिज्ञों का साथ नहीं लिया जायेगा ।

उक्त रिपोर्ट से स्पष्ट होता है कि इस आन्दोलन की हलचल फरवरी, 1928 में हो गई थी, लेकिन बारदोली आन्दोलन को समझने के लिए उसकी पृष्ठभूमि को जानना उचित होगा ।

5.3 1928 में प्रारम्भ हुए बारदोली आन्दोलन की पृष्ठभूमि

बम्बई की विधान परिषद ने मार्च 1924 में संयुक्त संसदीय समिति की सलाह मानते हुए कि "भूमिकर के निर्धारण में संशोधन करने की प्रक्रिया अधिनियम द्वारा विनिमय के और करीब लाई जानी चाहिए" भारी बहुमत से इस आशय से पारित किया गया कि भूमि-कर का संशोधन विधान द्वारा विनियमित करने के प्रश्न पर गौर करने के लिए, 'एक समिति नियुक्त की जाए और जब तक उक्त कानून अमल में नहीं लाया जाता तब तक नये सिरे से कोई तखमीना न बनाया जाये और संशोधित समझौता भी लागू न किया जाये' ।

जबकि वास्तव में हुआ यह कि सरकार ने प्रस्ताव का पहला भाग भूमिकर तखमीना समिति नियुक्त करके कार्यान्वित कर दिया परन्तु दूसरे हिस्से की उपेक्षा कर दी गई और प्रस्ताव का विरोध करते हुए एक के बाद एक ताल्लुक का फिर से जल्द निरूपण किया जाने लगा । इसी बीच भूमि कर की समिति की बैठक हो चुकी थी और उसने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित कर दी थी । बम्बई विधानसभा परिषद ने मार्च 1927 में भारी बहुमत से एक और प्रस्ताव पारित किया जिसमें सपरिषद गर्वनर से सिफारिश की गई थी कि भूमि-कर तखमीना समिति की रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए जरूरी कानून बनाकर मार्च 1924 के प्रस्ताव को तत्काल अमल में लाया जाये और जब तक ऐसा कानून न बने, सम्बद्ध भूमि-कर अधिकारियों को आदेश जारी किए जाये कि 15 मार्च 1924 के बाद बढ़े हुए कर की उगाही न करें । भूमि-कर तखमीना समिति द्वारा सुझाया गया कानून विधान परिषद के सामने था लेकिन अन्ततोगत्वा कानून बन जाने पर उसका उद्देश्य ही विफल हो गया । इस उद्देश्य से लगभग जानबूझकर संशोधन की व्यवस्था की गई । बारदोली ऐसे कई ताल्लुकों में से एक था, जहाँ इन प्रस्तावों के अनुसार करों में कोई संशोधन नहीं होना चाहिए था, और करों के कोई नई दर लागू नहीं किये जाने चाहिए थे । इस मामले के गुण-दोष पर ध्यान न दिया जाये तो भी यह आपत्ति बारदोली में भूमि-कर संशोधन व्यवस्था पर सैद्धान्तिक मूल आपत्ति थी ।

बारदोली की नई भूमि कर संशोधन व्यवस्था श्री जयकर द्वारा तैयार की गई जिन्होंने नवम्बर 1925 में अपनी सिफारिशें पेश कर दी थी । उन्होंने 30 प्रतिशत बढ़ोतरी की सिफारिश की थी । बन्दोबस्त आयुक्त श्री एन्डरसन उस आधार से असहमत थे जिस पर श्री जयकर ने अपनी अनुशंषा प्रस्तुत की थी और उन्होंने एक नया आधार अपनाकर 29 प्रतिशत बढ़ोतरी की अनुशंसा की । सरकार दोनों ही व्यक्तियों की अनुशंसाओं से असहमत थी और उसने लगान की 22 प्रतिशत बढ़ोतरी तय की । ताल्लुक का पहले का लगान जो 5,14,762 रूपये था, वह नये कर निर्धारण के अन्तर्गत 6,20,000 रूपये से कुछ ऊपर हो गया था ।

इसके विरोध में बारदोली के किसानों का कहना था कि, ताल्लुक का पूरी हद तक कर निर्धारण हो चुका है तथा उसमें उस हद से आगे और बढ़ोतरी की कतई कोई बात नहीं है । ताल्लुके के किसान अपनी भूमि के मानक के अनुसार इस प्रकार विभाजित थे-

'क'

1 से 5 एकड़ तक	10,379
6 से 25 एकड़ तक	5,936
26 से 100 एकड़ तक	829
101 से 500 एकड़ तक	40

निरापद रूप से ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि वे सभी किसान जिनके पास कुल 25 एकड़ से ज्यादा जमीन नहीं थी स्वयं काश्त करते थे और जिनके पास ज्यादा जमीन थी वे अपनी जमीन बँटाई पर किसान को दे देते थे । इसका मतलब हुआ कि 16,315 किसान वास्तव में कुल 1,27,045 एकड़ के क्षेत्र में स्वयं काश्त करते थे । यानि कि हर किसान औसतन लगभग आठ एकड़ भूमि में खेती करता था । यह न्यायसंगत नहीं था कि निर्णय किरायों के आधार पर हो चाहे वे लाभकर या अलाभकर हो और जिनका उपभोग केवल बहुत कम लोग अर्थात 869 बड़े जमींदार करते हों । 16,315 किसानों के पास जो जमीन थी उसके मूल्य तथा भूमि-कर कानून की धारा 107 के अधीन मुनाफों का जो लाभ वे उठा रहे थे उसको ध्यान में रखते हुए निर्धारण किया जाना चाहिए था । बारदोली के किसान दलील दे रहे थे कि करों का निर्धारण एकड़ की औसत ऊपज को ध्यान में रखते हुए और भूमि-कर अधिकारियों द्वारा स्वीकृत बहुत ऊँचे दर्ज के मूल्यों को सही मानकर (यद्यपि रिपोर्ट के बाद से मूल्य काफी गिर गया था) 8 एकड़ जमीन में खेती करने वाले किसान को इतना लाभ नहीं होता था कि सरकार उस वक्त की मौजूदा कर निर्धारण की दर में बढ़ोतरी कर सके । वे इस कथन को सिद्ध करने को तैयार थे और उनका कहना था कि मुनाफे के 50 प्रतिशत को भी आधार माना जाये तो भी किसी बढ़ोतरी की जरूरत नहीं है और यदि मुनाफे के 25 प्रतिशत को आधार माना जाये तो लगान की मौजूद दरों में काफी कटौती करना जरूरी होगा ।

इस प्रकार वे अपनी दलील के लिए ताल्लुक की वास्तविक परिस्थितियों पर निर्भर करते थे लेकिन उनकी इस दलील का आधार सरकारी रिपोर्टो के महत्व और यर्थाथता को संदेहास्पद मानना भी रहा । उनका कहना था कि भूमि कर अधिकारी श्री जयकर ने कोई खास जाँच पड़ताल नहीं की । उन्होंने कुछ गाँवों का दौरा किया । गाँव वालों को लगान बढ़ाने के पक्ष

के बारे में कोई अभ्यावेदन देने का मौका नहीं दिया और सरसरी तौर पर एक सर्वेक्षण तैयार किया । उन्होंने नितान्त आवश्यक आकड़े बिना जांच किये अपने कार्यालय में तैयार किये और अपनी 30 प्रतिशत सिफारिशों के लिए कुल पैदावार के मूल्य में बढ़ोत्तरी पर निर्भर रहे । जयकर की जाँच जिस लापरवाही से तैयार की गई थी वह उसे निरर्थक बनाने के लिए काफी था । लेकिन एण्डरसन ने एक अन्य बहुत ठोस आधार पर श्री जयकर की रिपोर्ट पर शंका व्यक्त की जिनकी ओर जनता के प्रतिनिधियों ने भी ध्यान दिलाया था । उन्होंने श्री जयकर की रिपोर्ट के सबसे महत्वपूर्ण अंश को, अर्थात जिस पर वे कुल उपज व मूल्य पर अपनी सिफारिशें आधारित करते हैं, निरर्थक और सर्वथा खतरनाक कहकर रद्द कर दिया, क्योंकि उन सिफारिशों में उनके सुझावों का कोई औचित्य नहीं मिलना, बल्कि उनसे विरूद्ध तर्को का आभास मिलता था । इन हालात में श्री एण्डरसन का स्पष्ट कर्तव्य था कि सरकारों को नये सिरे से जाँच पड़ताल करने का सुझाव देते, लेकिन उन्होंने लक्ष्य का अतिक्रमण कर दिया और उन्होंने दरों के आँकड़ों के आधार पर अपनी सिफारिशें दे दी। यह एक ऐसा आधार था, जिनके औचित्य पर कई उच्च पदासीन सरकारी अफसरों ने भारी आपत्ति की थी और प्रस्तुत मामलों में आँकड़ो पर भी इस आधार पर कि उनकी जांच नहीं की गई है, भारी आपत्ति की । यदि श्री जयकर ने कोई वास्तविक जाँच पड़ताल न करके सैटलमेन्ट मेनुअल का मजाक उड़ाया था, तो श्री एण्डरसन एक कदम आगे बढ़ गये थे । उन्होंने सैटलमेन्ट मैनुअल का उल्लघंन किया । सैटलमेन्ट मैन्यूअल में लिखा था कि विचारणीय मुद्दों में किरायों को आधार मानना अनेक में से एक मुद्दा है और उनके आधार पर विचार करें भी तो जब तक उनका परिणाम काफी न हो और जब तक उनकी विश्वसनीयता प्रमाणित न हो जाये, उन्हें निश्चित निर्णयों का आधार नहीं बनाया जा सकता । किराये के आँकड़ों पर पूरी तरह भरोसा रखकर और यह मानकर कि उनके महत्वपूर्ण होने के लिए अपेक्षित दोनों शर्ते पूरी हो गई है, श्री एण्डरसन ने भारी गलती की । श्री एण्डरसन एक जगह श्री जयकर पर यह दोष लगाते है कि उन्होंने किराये पर उठाये क्षेत्र और खुद मालिक द्वारा जोते गये क्षेत्रों के आँकड़े इकट्ठा करने का कोई प्रयत्न नहीं किया और फिर भी वह परिशिष्ट "क" पर गलती से इस निष्कर्ष पर पहुँच गये कि कुल क्षेत्र का कम से कम आधा भाग उन जमींदारों के पास है, जो स्वयं खेती नहीं करते । उनकी भूल का आधार यह है कि जो उन्होंने जल्दबाजी में सात साल के आँकडें 42,923 एकड़, एक साल के आँकड़े मान लिये और 23,995 एकड़ अर्थात कुल क्षेत्र की लगभग 18 प्रतिशत जमीन जो किसानों के अपने पास थी, उनके बारे में श्री जयकर के अनुमान की नितान्त उपेक्षा कर दी । श्री जयकर का अनुमान भी यद्यपि ऊपर से सही दिखता प्रतीत होता था, तथापि बिल्कुल सही नहीं, क्योंकि यह मौके पर ही की गई जाँच पर आधारित नहीं रहा था ।

इन कारणों से श्री जयकर और श्री एण्डरसन, दोनों की रिपोर्ट बेकार थी और सरकार द्वारा 22 प्रतिशत की दर सर्वथा मनमाने तौर पर नियत की गई थी, क्योंकि वह किन्हीं नये या सही आँकड़ों पर आधारित नहीं थी ।

सत्याग्रह का मूर्तरूप -

इसलिए बारदोली के सत्याग्रहियों ने तब तक कोई लगान न देने की शपथ ली है, जब तक या तो

(1) बढ़ोतरी रद्द नहीं कर दी जाती, या

(2) पूरे मामले की जाँच करने के लिए स्वतन्त्र निष्पक्ष न्यायाधीकरण की नियुक्ति नहीं की जाती ।

इस प्रकार खुफिया पुलिस की फरवरी 1928 की गोपनीय रिपोर्ट से साफ झलकता है कि बारदोली के सत्याग्रह का प्रारम्भ बल्लभ भाई पटेल ने 12 फरवरी 1928 को कर दिया था । बारदोली आन्दोलन के प्रारम्भिक घोषणा में ही पटेल ने एक प्रश्न लोगों के सामने रखा कि जब्ती क्या है? क्या वे जमीन को इंग्लैंड ले जायेंगे?

पटेल के उक्त प्रश्न का भाव देखें, तो समझ में आता है कि कर नहीं देने पर सरकार जमीनों को जब्त करके, किस प्रकार अपना राजस्व प्राप्त कर सकती है, जब तक कि उस जमीन या भूमि को कोई और खरीद न ले अगर उसे कोई नही खरीदता तो ऐसे में यह सरकार क्या भूमि को इंग्लैंड ले जा सकती है । पटेल के इस भाव का सीधा अर्थ यह निकलता है कि ना सिर्फ वे किसानों को बढ़ी हुई दर से सरकार को राजस्व देने से मना करेंगे, अपितु अगर सरकार किसानों की भूमि को जब्त कर उसके विक्रय से राजस्व प्राप्त करने की चेष्टा भी करेंगे, तो ऐसा करने से भी वे उन लोगों को, जो कि उस जमीन को खरीदने की कोशिश करेंगे, आन्दोलन में सहयोग माँगने के मूल्य पर रोकेंगे । इसी के साथ पटेल ने अपने कौशल को अब आन्दोलन के स्वरूप व क्षेत्र में दिखाना प्रारम्भ कर दिया था । इसी के तहत उन्होंने गाँव में सभायें की । बारदोली ताल्लुक की लगभग आधी आबादी अनुसूचित जनजाति, पिछडी जाति एवं अनछुऐ जाति की थी, जो कि खेतों में किरायेदार या कृषि मजदूरी किया करते थे । इसके अतिरिक्त पाटीदार मण्डल और भूमिहीन किसान (किरायेदार) तथा मजदूरों और विभिन्न जातियों के लोग थे । सभी ने एक जबरदस्त सम्मिलित धर्मनिरपेक्ष एकता इस सत्याग्रह में दर्शायी, जो कि इस सत्याग्रह की खास बात थी ।

यही नहीं, वहाँ रहने वाली अल्पसंख्यक जातियों यथा मुस्लिम एवं पारसियों की भी उस आन्दोलन में हिस्सा लेने के लिए और पाटीदारों, नेताओं के पीछे एक दीवार की भाँति खड़े रहने के लिए अल्पसंख्यक समूहों के अखिल भारतीय नेता जैसे डॉ० अंसारी, मौलाना शौकत अली, नरीमन और बर्राचा आदि नेता बारदोली ताल्लुक क्षेत्र में घूमते रहते थे, इसके अलावा बारदोली ताल्लुक के धनाड्य लोगों व मध्यम किसान, जो या तो पाटीदारों के या भू-स्वामी (बनिया) आदि के बीच के मतभेद में भी सुधार को खोजा गया ।

इसके अलावा गरीब किसानों का सहयोग लेना भी इस आन्दोलन की सफलता के लिए अनिवार्य था । बारदोली ताल्लुक के 137 गाँवों के लगभग 17000 ऐसे भू-स्वामी थे, जो या तो अपनी जमीन को पुन: पट्टे पर जुतवाया करते थे या मजदूरों को किराये पर लेकर अपने प्रबन्ध से खेती करवाते थे । ऐसे में जबकि भूमि की बहुत माँग हो ये भू-स्वामी भूमि से अपनी रोजी खोना नहीं चाहते थे और इस बात के पूरे आसार थे कि ये भू-स्वामी अपनी जमीन को बचाने के लिए सरकार को राजस्व दे देते । ऐसे में आन्दोलन के आयोजकों पर यह जिम्मेदारी

बन गयी कि वे ऐसे गरीब किसानों का अपने आन्दोलन से जोड़े रखे जो कि इन भू-स्वामियों के यही मजदूरी पर कृषि कार्य करते या उनकी भूमि को स्वयं पट्टे पर लेकर खेती करते । कारण स्पष्ट था कि जब ऐसे किसान ना तो उनकी भूमि पर मजदूरी के रूप में कोई कार्य करने को राजी होंगे और ना ही उनकी जमीन को पट्टे पर जोतने को राजी होंगे तो उन भू-स्वामियों के द्वारा सरकार को राजस्व देने पर भी कोई लाभ होने वाला नहीं था । क्योंकि ऐसे में जमीन पर फसल तो उगायी ही नहीं जा सकती थी ।

सत्याग्रह के अन्तर्गत गाँव के किसानों को शीघ्र दिशा निर्देश भिजवाने के लिए एक प्रचार प्रसार विभाग बनाया गया, ताकि सत्याग्रह के नये विकास के बारे में लोगों को बताया जा सके । लगभग 1000 बुलेटिन (प्रपत्र) और पम्पलेट्स किसानों के बीच बाँटे गये और 4000 प्रतियाँ ताल्लुक के बाहर भी भिजवाया गया ।

बारदोली आन्दोलन को तीन स्तर पर चलाया जा रहा था प्रथम, राष्ट्रीय स्तर पर, द्वितीय, क्षेत्रीय स्तर पर और तृतीय, स्थानीय सार पर । गांधीजी की छवि प्रथम असहयोग आन्दोलन और सामाजिक अवज्ञा आन्दोलन से एक राष्ट्रीय नेता की बनी थी । वे सीधे तोर पर इस आन्दोलन से जुड़े थे, किन्तु इस आन्दोलन को वे पीछे से पूरा सहयोग व दिशा-निर्देश दे रहे थे । उन्होंने आन्दोलन को सहारा देने के लिए उसके मुख्य अंग के रूप में कार्य करते हुए राष्ट्रीय स्तर पर "यंग इण्डिया" व "नवजीवन" जैसे समाचार पत्रों में अपने लेखों से बजाए बारदोली आन्दोलन के नेताओं की फालतू बड़ाई करने के, आन्दोलनकारियों को बढ़ावा देते रहे । इसके अलावा जब भी बारदोली किसानों और नेताओं को उनकी जरूरत हुई वे उसके लिए तैयार रहे । क्षेत्रीय स्तर पर बल्लभभाई पटेल और दूसरे नेता गुजरात सभा और गुजरात कांग्रेस के सम्पर्क में रहे । बल्लभभाई पटेल, जिन्होंने कि गांधीजी को असहयोग आन्दोलन के दौरान कानून प्रक्रिया में साथ देते हुए अपने आपको उनके आन्दोलन से पूरी तरह जोड लिया था, पूरे आन्दोलन में सक्रिय भूमिका अदा करते रहे जब पटेल ने बारदोली सत्याग्रह का नेतृत्व किया, तब वे अहमदाबाद नगरपालिका समिति और गुजरात कांग्रेस समिति के अध्यक्ष थे । खेड़ा आन्दोलन के दौरान भी उन्होंने एक अहम् भूमिका निभाई थी । अत: पटेल जो गुजरात के क्षेत्र, लोग व राजनैतिक वातावरण से अच्छी तरह से परिचित थे, उनसे बढ़िया नेता क्षेत्रीय स्तर पर कोई दूसरा नहीं हो सकता था ।

5.3.2 बारदोली सत्याग्रह की तीव्रता

बारदोली सत्याग्रह अपनी सुव्यवस्थित योजना के तहत सुचारू रूप से आगे बढ़ रहा था, परन्तु सरकार इस मुद्दे को कोई बहुत ज्यादा अहमियत नहीं दे रही थी । इस आन्दोलन पर जे. मोनरेथ सेक्रेटरी ऑफ द गवर्नमेन्ट ऑफ बोम्बे ने 16 / 19 अप्रेल 1928 को अपने पत्र में सेक्रेटरी ऑफ द गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, एच. जी. हेग को लिखकर यह तथ्य एक बार फिर उजागर किया कि बारदोली ताल्लुका में राजस्व से संबंधित सत्याग्रह निरन्तर जारी हैं । साथ ही 5 अप्रेल को बॉम्बे क्रानिकल में प्रकाशित एक रिपोर्ट, जो कि "द सेक्रेट्री, सत्याग्रह, पब्लिसिटी,

बारदोली'' के नाम से थी, से पता चला कि पटेल ने 2 अप्रेल को बरधा में दिए अपने भाषण में वहाँ के संभागीय नेताओं के बारे में बहुत ही बढ़ा-चढ़ाकर बोला था ।

बारदोली आन्दोलन अपने जोर पर आ रहा था । कार्यकर्ता बारदोली ताल्लुकों में घूम-घूमकर सभा कर रहे थे । दिन में महिलाऐं भी बहुतायत में उपस्थित रहती थी । कार्यकर्ता गाँव-गाँव में घूम-घूमकर राजस्व नहीं देने की प्रतिज्ञा पर लोगों से हरताक्षर करवा रहे थे । जहाँ छोटे भू-स्वामी तुरन्त आन्दोलन में सम्मिलित हो रहे थे, वहीं बड़े भू-स्वामी कुछ झिझक रहे थे । इस दौरान कुछ बनिया राजस्व देकर आंदोलन को चोट पहुँचाने का कार्य कर रहे थे, लेकिन कुल मिलाकर अधिकतर किसानों ने ऐसा नहीं किया था । माह मई के दौरान सरकार की तरफ से लगभग 1500 जब्ती के नोटिस, किसानों की अचल सम्पत्ति, मवेशी और अन्य चीज जो किसानों की थी, के बारे में जारी हो चुके थे ।

अधिकारीगण जब भी जब्ती के नोटिस लाते थे, तो गाँव में घरों के दरवाजे बन्द या ताले लग जाते थे । आन्दोलन के कार्यकर्ताओं ने गाँव वालों को ड्रम व कन्चे दे रखे थे, ऐसे में जब भी जब्ती वाले लोग आते तो कार्यकर्ता ड्रम व कन्चे बजाकर उनको सतर्क कर देते । जिससे वे अपने घरों को बन्द कर जाया करते थे । इस तरह की कार्यवाहियों को अंजाम देने के लिए कार्यकर्ता बराबर सभाऐं करते, जिनमें कई बार पुरूषों से ज्यादा महिलाऐं भाग ले रही थी । वे अपनी सभाऐं भी किया करती थीं । वे गीत बनाती और उनके पतियों की गिरफ्तारी हो जाने पर उनके पीछे-पीछे अदालतें और रेलवे स्टेशनों पर गीत गाती जाती । इस बीच जातीय संगठनों द्वारा अपने जाति भाईयों में यह घोषणा की जा रही थी कि वे लोग कोई भी सरकार द्वारा जब्ती जमीन को नहीं खरीदेंगे ।

सरकारी दमनकारी नीतियों के चलते किसानों द्वारा सरकारी कारिन्दों की आवाजाही में रूकावट पैदा करना प्रारम्भ कर दिया था । वे रास्ते पर अवरोधक लगा देते । उनकी मोटर के टायरों को फाड़ देते थे ।

सरकार लगातार राजस्व न देने पर नोटिस जारी कर रही थी और ऐसी स्थिति में उनकी सम्पत्ति की जब्ती से राजस्व प्राप्त करने की कोशिश कर रही थी । ऐसे में कुछ बनिये, जो पैसो का लेन-देन और बड़े भू-स्वामी थे, जो कि झिझक के बाद सत्याग्रह में सम्मिलित हुए थे, सरकार ने सबसे पहले उन्हें नोटिस थमाये । इनमें से कुछ गाँवों के लोगों ने सत्याग्रहियों को चोट पहुँचाने वाला कार्य करते हुए अपना बकाया -जमा करा दिया किन्तु कानून के भय से ऐसी हरकत करने वाले या अपने आपको उसके हवाले करने वाले लोग ना के बराबर थे जबकि अधिकतर बड़े या छोटे किसान संघ के लोग अपनी कर ना देने वाली प्रतिज्ञा पर कायम रहें । इनके साथ ही ऐसे लोग, जो कि अमीर भू-स्वामियों के खेतों मजदूरों या हालीग्वाल की हैसियत से कार्य करते थे, अपने मालिकों के साथ खड़े रहे और जब भी कोई सरकारी अधिकारियों का गाँव में किसानों की अचल सम्पत्ति, मवेशी, ऐसा ही कोई वस्तु को जब्त करने के लिए ऐसे गरीब लोगों या मजदूरों की सहायता की जरूरत होती थी, तो वह गांधीजी के सुझाये मार्ग सविनय अवज्ञा का पालन करते सरकारी अधिकारियों की विनम्रता से इन्कार कर देते थे । ऐसे सत्याग्रह की मिसाल या उदाहरण अन्य नहीं है, जिसमें कि मालिक, गुलाम या सभी जाति के

लोग, या अमीर और गरीब एक साथ किसी एक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कन्धे से कन्धा मिलाकर खड़े दिखें, जैसा कि बारदोली सत्याग्रह में देखने को मिला ।

बम्बई सरकार द्वारा काफी प्रयास के बाद भी वो इस आन्दोलन से जुडे लोगों को अलग करने में विफल रही । सरकार ने यह भी सोचा कि आन्दोलनकारियों के बीच ऐसी कौनसी गलती कराई जाये जिससे कि वो अलग-अलग हो जाये । इसके लिए सरकार ने जब्ती अधिकारियों के साथ पठानों की टोली को लगाया ताकि वे हिन्दू सत्याग्रहियों को डराऐं और धमकाऐं जिससे कि उनके बीच साम्प्रदायिकता के आधार पर कुछ ऐसा हो, जिससे कि आन्दोलन से जुडे मुस्लिम नेता इस आन्दोलन से अलग हो जाये । इसी के चलते सरकार ने एक मुसलमान मामलातदार (ताल्लुके के स्तर का राजस्व अधिकारी) नियुक्त किया ताकि वो मुस्लिम किसानों को सत्याग्रहियों से अलग कर सकें । जिस तरह रवे बारदोली सत्याग्रह को एक साम्प्रदायिकता की आग में झोंकने जैसा कार्य हुआ और यह भी सत्य है कि किसानों की जब्त की गई अचल सम्पत्तियों को बहुत ही कम दाम पर या उस सम्पत्ति के वास्तविक दाम से बिल्कुल कमतर स्तर पर उसको नीलाम करने की कोशिश की गई ।

इसी बीच विधान परिषद के आठ सदस्यों ने सत्याग्रह को सहयोग प्रदान करने के लिए विधान परिषद से अपना इस्तीफा देने की धमकी सरकार को दी थी । बल्लभभाई पटेल ने उन समृद्ध लोगों से भी सहयोग माँग जो कि बारदोली के निवासी थे और इधर-उधर बस गये थे । वे उनको ताल्लुक के सत्याग्रह के दौरान घट रही असामान्य स्थिति से भी अवगत करवा रहे थे।

वास्तव में सरकार का जितना राजस्व उस ताल्लुका में बन रहा था, उसका मात्र 1 / 6 भाग ही जुलाई तक संग्रह कर पाई । इस बीच राष्ट्रीय प्रेस में सत्याग्रहियों के पक्ष में अपनी टिप्पणियाँ करना प्रारम्भ कर दिया और गांधीजी ने स्वयं यंग इण्डिया में सरकार की आलोचना की और गुजराती सदस्यों ने बॉम्बे विधान परिषद से अपना त्याग-पत्र दे दिये ।

गांधी जी ने बल्लभभाई पटेल को पत्र लिखकर जब भी वे उन्हे बुलाऐंगे गांधी जी तुरन्त उसी दिन रवाना हो जायेंगे ।

5.3.3 बारदोली दिवस

12 जून को बारदोली दिवस के रूप में मनाया गया । उस दिन अलग-अलग कस्बों में जिला कांग्रेस समिति के सदस्यों ने ताबड़तोड़ बैठकें की । उधर, बॉम्बे सिटी में एक छोटा समूह धन इकट्ठा करने में लगा था । प्रेस के सूत्रों से ऐसा जान पड़ रहा था कि, पटेल आदि सज्जनों द्वारा किए जा रहे प्रयासों के अन्तर्गत कुछ दिनों पश्चात उन्हें उनके दावों पर जरूर कुछ छूट मिल सकती हैं ।

बारदोली दिवस 12 जून के दिन ही पेशावर सिटी (पंजाब) में स्थानीय कांग्रेस समिति के सदस्यों ने एक बैठक बारदोली सत्याग्रह की जीत के लिए प्रार्थनाऐं की और सत्याग्रहियों को हरसंभव सहायता की पेशकश की । इसी प्रकार बड़ौदा जिले में भी बारदोली सत्याग्रहियों के पक्ष में आन्दोलन हुए और वहाँ भी सहायता की पेशकश की गई । करीब रूपये 200/- की राशि सहायता स्वरूप एकत्रित की गई।

बॉम्बे प्रान्त के बाहर पंजाब, लाहौर आदि जगह पर कांग्रेस समिति के सदस्यों द्वारा बारदोली दिवस 12 जून के दौरान कई बैठकें आयोजित की गई । सभी बैठकों में बारदोली के लोगों के लिए वित्तीय सहायता के लिए अपील की गई, जरूरत पड़ने पर हिन्दुस्तानी सेवादल के लोग बारदोली में वहाँ के लोगों की सहायता के लिए रवाना हो सकते हैं ।

सरकार द्वारा जिस बारदोली सत्याग्रह को आन्दोलन के प्रारम्भ में मात्र एक स्थानीय हलचल माना जा रहा था वह बारदोली दिवस यानि 12 जून तक आते-आते एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप ले रहा था । फिर भी सरकारी रिपोर्टो में उसे अधिक महत्व नहीं दिया जा रहा था । इसी तरह की जून माह के अन्तिम पखवाडे में बिहार, उड़ीसा सरकार की गोपनीय रिपोर्ट से पता चलता है कि प्रान्त के आधे से ज्यादा जिलों में बारदोली दिवस की बैठकें आयोजित की गई व धन संग्रह किया गया, किन्तु सरकारी रिपोर्ट में इस बात पर खुशी प्रकट की गई कि ऐसी बैठकें अधिकतर सफल नहीं हुई और इन बैठकों में वास्तव में बहुत थोड़ा उत्साह देखने को मिला और धन संग्रह के नाम पर मात्र 130 रूपये इकट्ठे हुए ।

बारदोली सत्याग्रह का असर भारत के अतिरिक्त अन्य पड़ोस के देशों जैसे बर्मा भी फैल चुका था । इस बीच जिला स्तर पर जिला कांग्रेस समितियों द्वारा बैठके आयोजित की जा रही थी । इसी तरह की एक बैठक जो कि 16 जून को आयोजित की गई, जिसमें सी.आर. दास को श्रद्धाजंलि देते हुए नौजवानों से उनके पदचिन्हों पर चलते हुए बारदोली सत्याग्रह में कूदने का आव्हान किया गया ।

इसी तरह की एक अन्य बैठक 26 जून को जिला कांग्रेस समिति ने शंकरलाल बंसल की अध्यक्षता में आयोजित की, जिसमें अमृतसर के डॉ० सत्यपाल और कानपुर के हसरत मोहानी ने इस सत्याग्रह को जीवन्त बनाये रखने के लिए अपने विचार रखें ।

1 जुलाई 1928 को भड़ौच जिला परिषद की बैठक हुई, जिसकी अध्यक्षता के०एफ0 नरीमन ने की थी जिसमें गांधीजी का एक सन्देश पढ़ा गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बारदोली की सहायता करने वाले लोग वास्तव में स्वयं अपनी ही सहायता करेंगे ।

1 जुलाई, 1928 परिषद की बैठक में ही बल्लभभाई पटेल, जमना लाल बजाज, अब्बास तैयब जी और एच.जे. अमीन जैसे लोग सम्मिलित थे । इस परिषद ने कई प्रस्ताव पारित किए, जिसमें (1) बारदोली जनता के पक्ष में समर्थन किया गया, डटकर लड़ने के लिए उस ताल्लुक के लोगों को बधाई दी गई । (2) भड़ौच के लोगों से सरकार द्वारा जब्त की गई जमीन न खरीदने के लिए अनुरोध किया गया । (3) बारदोली के मामले में बम्बई विधान परिषद की सदस्यता छोड़ने वाले पार्षदों को बधाई दी गई । (4) इसके अलावा माननीय दीवान बहादुर हरीलाल देसाई, माननीय श्री देहलवी, माननीय सर चुन्नीलाल मेहता तथा ठाकुर साहब, जो कि अब तक बम्बई विधानसभा परिषद के सदस्य थे, उनके त्यागपत्र देने का अनुरोध किया गया ।

के.एफ नरीमन (सदस्य, विधान परिषद) की अपील पर बॉम्बे सीटी के विद्यार्थियों ने 4 जुलाई को 12 जून "बारदोली दिवस" के आधार पर बॉम्बे यूथ लीग बारदोली प्रोपागेण्डा एण्ड रिलीफ कमेटी, जिसके कि नरीमन अध्यक्ष है, के निमंत्रण पर बल्लभभाई पटेल बॉम्बे आये और

उन्होंने एम्पायर थियेटर में भीड़ भरी बैठक में एक भाषण दिया और ऐसा बताया गया कि करीब 19000 रूपये इस अवसर पर एकत्रित हुए, जिसके बाद बैठक एक जुलूस के रूप में जाकर समाप्त हो गई।

पूना के विद्यार्थियों ने भी स्वेच्छा से बारदोली दिवस मनाया तथा अपना अध्ययन आदि का सारा काम बन्द रखा और दिनभर चन्दा इकट्ठा किया ।

8 जुलाई को बम्बई में बॉम्बे विधान परिषद के 31 में से 11 सदस्यों की कालिशन नेशनलिस्ट पार्टी की बैठक हुई, जिसमें बारदोली किसानों से सहानुभूति रखते हुए एक प्रस्ताव पारित किया गया, जिसमें सरकार से एक जाँच समिति बनाने और किसानों, को राहत पहुँचाने, परिषद के सदस्यों से त्यागपत्र देने इत्यादि विषय सम्मिलित की गई ।

एक आम सभा में श्री पटेल ने यह भी घोषणा की कि वे सरकार के किसी ऐसे प्रस्ताव को नहीं मानेंगे, जिसमें कि सरकारी राजस्व अधिकारी के द्वारा किया गया हो । उन्होने सरकार को मतभेद दूर करने के लिए एक ऐसे स्वतंत्र जाँच समिति का गठन करने के लिए कहा जो सभी पत्रों के लिए स्वीकार्य हो । कि सरकार एक स्वतन्त्र समिति, जो कि दोनों पक्षों को मंजूर हो, बना दे ।

अन्ततः 18 जुलाई को शिमला से सूरत आने पर बल्लभभाई पटेल के नेतृत्व में जिसमें अन्य लोगों में अब्बास तैयब जी, शारदा मेहता, भक्तिलक्ष्मी देसाई मीठूबहन पेटिट और कल्याण जी मेहता सम्मिलित थे, ने बारदोली किसानों के प्रतिनिधि की हैसियत से बम्बई गर्वनर से बातचीत की और गर्वनर ने समझौते के लिए ऐसी शर्ते रखी ।

जो किसी भी दृष्टि से समझौता वार्ता के लिए उचित नही था । बल्कि वार्ता के नाम पर सत्याग्रहियों को एक प्रकार से चेतावनी दे दी गई थी, जिसके नहीं मानने पर बारदोली के काश्तकारों पर समस्याओं का पहाड़ गिर सकता था ।

5.4 आन्दोलन के दौरान गांधीजी के विचार

गांधीजी का कहना था कि बारदोली की जनता के लिए इससे बुरा और कुछ नहीं हो सकता कि वह सत्याग्रह का उस प्रतिज्ञा को तोड़ दें, जो उसने सोच समझकर की हैं, और जिसे उसने न जाने कितनी बार दोहराया हैं । गांधीजी आश्वस्त थे कि बारदोली सत्याग्रह से अवश्य कुछ न कुछ प्राप्त होगा, और इस आन्दोलन के समर्थन में जिस प्रकार पूरे राष्ट्र में एक चेतना या जागृति उत्पन्न हुई है वह निश्चय ही शुभ सूचक है ।

गांधीजी ने यह भी कहा कि बारदोली आन्दोलन में भाग ले रहे लोग जितना अधिक त्याग तथा बलिदान करेंगे, देश और बारदोली की जनता को उतना ही अधिक लाभ होगा ।

बारदोली के किसान गर्वनर द्वारा रखी गई शर्तो को मानने पर राजी नहीं हुए । इस वार्ता के विफल होने से गांधीजी ने सरकार की कडी आलोचना की । इसके बाद गांधीजी ने बल्लभभाई पटेल को उनके द्वारा पूरा समर्थन दिए जाने की बात भी कही ।

5.4.2 गांधीजी का महत्वपूर्ण लेख

"नवजीवन" में दिनांक 22.7.1928 को प्रकाशित एक लेख में गांधीजी ने सत्याग्रह के पक्ष में लिखा कि "यह सही है कि सत्याग्रही की इस लड़ाई में लोगों की तन्दुरूस्ती बिगड़ गई है उनके ढोर-डंगर (मवेशी) दुबले हो गये हैं और कुछ मर गये हैं किन्तु सत्याग्रह में ऐसा होना स्वाभाविक हैं किन्तु सरकार से हम(सत्याग्रही) ऐसा हो जाने पर उसकी कोई क्षतिपूर्ति नहीं चाहते लेकिन जो कैद में पड़े है उनका क्या होगा? जिनकी जमीने कुर्क हो गई हैं, उनका क्या होगा? जिनकी माल मिल्कियत कौड़ी के दाम नीलामी हो गई हैं, उनका क्या होगा? इसलिए यदि समझौता होना है, और यदि सरकार न्याय करवाना चाहती है, तो समझौते के कागज पर दस्तखत होते ही -

1. सत्याग्रही कैदी रिहा किए जाने चाहिए ।
2. कुर्क की हुई जमीनें (वे चाहे नीलाम हुई हो या नहीं हुई हो) वापस दी जानी चाहिए ।
3. किसानों की भैंसे और बंदूकें आदि जो कुर्क कर लिए गए हैं, उनको नीलाम कर दिए गए हैं,
   उनकी कीमत बाजार भाव से लौटाई जानी चाहिए ।
4. जो तलाटी और पटेल आदि हटा दिये गये हैं, उनको बहाल किया जाना चाहिए । अथवा इनमे
   से जिन्होंने इस्तीफे दे दिए है, उनको वापिस लेने की अनुमति मिलनी चाहिए ।
5. लोगों को सत्याग्रह के संबंध में दी गई अन्य सजाऐं रद्द की जानी चाहिए ।

सत्याग्रहियों का यह मानना था कि सरकारी विज्ञप्ति में उपरोक्त कोई भी बात दिखाई नहीं देती । इतना तो जाँच के संबंध में जाँच के पूर्व किया ही जाना चाहिए ।

गांधीजी ने "नवजीवन" में 22.7.28 को प्रकाशित एक लेख में लिखा कि सरकारी विज्ञप्ति को देखते हुए श्री बल्लभभाई को समझौते की बात को लम्बा करने की जरूरत नहीं किन्तु सत्याग्रही लड़ने के लिए तैयार रहते हुए ऊपर बताये समझौते की आशा भी ना छोड़े । गांधीजी के इस लेख से स्पष्ट है कि उन्हें जिस प्रकार से यह आन्दोलन चल रहा था, उसकी सफलता के बारे में उन्हे कोई संदेह नही था और वे वहीं चाहते थे कि सत्याग्रही अपनी उचित मांगों से पीछे हटें ।

गांधीजी जिस प्रकार बल्लभभाई पटेल तथा अन्य सत्याग्रहियों में उत्साह बनाए रखने के लिये अपनी ओर से प्रयास कर रहे थे उसी प्रकार वे सरकार से भी समाचार-पत्रों के माध्यम से इस संबंध में सीधा अनुरोध कर रहे थे । इसी के क्रम में गांधीजी द्वारा समाचार पत्र यंग इण्डिया में अनुरोध किया कि, सरकार वह रास्ता अख्तियार न करे, जिसकी सभी ने एक स्वर से निन्दा की है और जिसका औचित्य किसी भी आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता ।

सूरत में जितना कुछ देने का प्रस्ताव किया गया, वह उससे भी कम है, जितना कि कुछ विश्वसनीय अफवाहों के अनुसार खानगी तौर पर देने का वादा किया गया था । श्रीयुत् वल्लभभाई पटेल ने जो शर्त रखी थी, वे वही हैं, जो सदा से उनके मन में रही है और जिनसे

वे तरह-तरह से सरकार को भी अवगत कराते रहे है, उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा, जो सम्मानपूर्ण समझौते में सदा से न किया जाता हो ।

गांधीजी ने यह भी कहा कि बल्लभभाई ने सरकार की तरह असम्भव शर्त नहीं रखी हैं । वे सरकार से यह नहीं कहते हैं कि वे स्वीकार करें कि वे गलती पर हैं । उनके पत्र का सार यदि एक वाक्य बताया जाये तो यह है कि उन्होंने सरकार से इस सवाल को उसकी अपनी पसन्द की एक कमेटी को सौंप देने को कहा है और उसमें केवल एक शर्त रखी है, कि उसमें जनता का भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो । वे सरकार से ऐसी निष्पक्ष समिति की नियुक्ति से निकलने वाले स्वाभाविक और तर्कसम्मत परिणामों को स्वीकार करने का कहते हैं ।

गांधीजी ने सरकार के सामने दो विकल्प प्रस्तुत किये :- या तो वह भारत के जनमत के सामने झुककर बल्लभभाई के प्रस्ताव को स्वीकार कर ले या फिर अपनी झूठी प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए लोगों को आतंकित करने की नीतियां पुन: आग्रह करें । उन्होने बम्बई सरकार से अनुरोध किया वे सत्य का मार्ग अपनाये ।

जैसा कि गांधीजी का अनुमान था गर्वनर ने बल्लभभाई पटेल के सुझाव को न मानते हुए सिर्फ बारदोली समस्या पर शुद्ध सरकारी नजरीया ही परिषद के भाषण में रखा ।

गर्वनर के उक्त भाषण से साफ वही बातें उभर कर आती है, जो उन्होंने सूरत में सत्याग्रहियों 13 जुलाई को उसके सूरत दौरे पर कही थी । गर्वनर ने सत्याग्रहियों को 15 दिन में उक्त बातें मानने का वक्त दिया ।

गर्वनर के उक्त भाषण से अवगत होने के बाद गांधीजी ने बल्लभभाई पटेल को 24 जुलाई 1928 को साबरमती आश्रम गुजरात से एक पत्र लिखा, जिसमें उनसे आग्रह किया गया कि वे गर्वनर के भाषण पर अत्यन्त संक्षिप्त उत्तर देवें । साथ ही गांधीजी ने यह संभावना भी व्यक्त की कि वल्लभभाई को गिरफ्तार किया जा सकता है और इसलिए वे पहले से ही बारदोली पहुंचने की मंशा रखते है ।

गांधीजी के उक्त पत्रानुसार ही बल्लभभाई पटेल ने गर्वनर के भाषण के उत्तर में एक संक्षिप्त वक्तव्य जारी किया, जिसमें उन्होंने गर्वनर के उक्त भाषण का जवाब कुछ इस प्रकार दिया कि बारदोली के लोग अपना अविनय अवज्ञा करने का अधिकार मनवाने के लिए संघर्ष नहीं कर रहे हैं। वे सरकार द्वारा लगान में की गई वृद्धि को समाप्त कर देने या अगर वह समझती हो कि यह वृद्धि अनुचित नहीं है तो वास्तविकता का पता लगाने के लिए एक निष्पक्ष और स्वतन्त्र जाँच समिति नियुक्त कर देने को प्रेरित करने के उद्देश्य से सविनय अवज्ञा कर रहे हैं ।

5.6 बारदोली में गांधीजी का आगमन

2 अगस्त 1928 वह दिन था जब गांधीजी स्वयं बारदोली आन्दोलनकारियों को सहयोग करने पहुँच गये थे और 3 अगस्त 1928 को बल्लभभाई पटेल ने समझौता वार्ता के लिए पूना प्रस्थान किया ।

बारदोली रवाना होने से पहले गांधीजी ने कहा था कि वल्लभभाई पटेल के आदेश पर बारदोली जा रहे बल्लभभाई मुझसे अक्सर सलाह मशविरा करते है, यह स्वीकारते हुए गांधी ने कहा की वे बारदोली सरदार का स्थान लेने नहीं, बल्कि उनके अधीन काम करने जा रहे हैं ।

बारदोली पहुँचने पर किसान लोग कीचड़-पानी से भरे रास्तों को लांघकर गांधीजी के दर्शन करने के लिए विभिन्न स्थानों से आये, और गांधीजी वहाँ के लोगों को सत्याग्रह के प्रति दृढ़ निश्चय भाव को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए । गांधीजी ने जब वहाँ के लोगों से पूछा कि अगर बल्लभभाई को गिरफ्तार कर लिया जाता है और उनके साथ अन्य कार्यकर्ताओं को भी तो क्या हिम्मत नहीं हार बैठें लोगो ने दृढ़तापूर्वक कहा, कि बिल्कुल भयभीत नही होगे क्योंकि बल्लभभाई पटेल ने कहा इतना कुछ किया है कि जनता हर हाल में अपना वचन पूरा करने के लिए तैयार है।

4 अगस्त को गांधीजी मोटर गाड़ी से सम्भॉण पहुँचे । यहाँ स्वराज आश्रम में उनसे मिलने के लिये सम्भॉण के स्वयंसेवकों तथा अपने-अपने पदों से इस्तीफे दे देने वाले पटेलों और तलाटियों के अतिरिक्त सम्भॉण इलाके के 25 गाँवों के प्रतिनिधि भी आये थे ।

बल्लभभाई की इच्छा से ही गांधीजी कुछ गांवों को देखने गये और वहा के आस-पास के बीसीयों गाँवों से आये सैकड़ों किसानों से मिले । गांधीजी ने सत्याग्रहियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि उन्होने अत्यन्त साहस और बहादुरी का परिचय दिया हैं और उनसे अपेक्षित है कि वे शांति होने तक इस तरह की भावना का परिचय देते रहेंगे ।

गांधी ने गांवों के प्रतिनिधियों को आग्रह किया कि सब शांति चाहते है लेकिन सब सम्मान के लिए शांति चाहते है ओर सभी को अपनी लड़ाई उस सम्मानजनक समझौते तक जारी रखना होगा, जिसके लिए उन्होने अब तक इतना त्याग किया है । साथ ही गांधीजी ने सत्य और अहिंसा की ढाल के साथ अपनी लड़ाई जारी रखना आवश्यक बताया ।

उन्होने कहा कि यदि लोगो ने दृढ़तापूर्वक आखिरी आँच को सह लिया तो दुनिया भर में उनका पराक्रम का डंका बजने लगेगा, यदि वे उस निर्णायत्मक परीक्षा में विफल रहे तो उनका पतन भी वैसा और ही जबरदस्त होगा ।

5.7 बारदोली समझौता

पूना में समझौता वार्ता अपने अन्तिम दौर से गुजर रहा था । वार्ता में गर्वनर ने 23 जुलाई को विधान परिषद में दिये भाषण में रखी शर्तो के अनुसार ही समझौता हुआ । बल्लभभाई ने अपने सगे भाई बिट्ठलभाई की बात मानते हुए व पाटीदार भू-स्वामियों की कमियों को देखते हुए समझौता कर लेना ही उचित समझा, बल्लभभाई के पास इसको स्वीकारने के अलावा कोई चारा नहीं था और पुरानी लगान दर व नई लगान दर के बीच का हिस्सा बारदोली ताल्लुका के उस गुजराती व्यवसाई, जो कि बम्बई में रह रहा था, ने सरकारी खजाने में उतनी रकम जमा करा दी, जो कि प्रस्तावित 22 मालगुजारी के करीब थी ।

5.8 सारांश

बारदोली किसान आन्दोलन के सभी पहलुओं पर गौर करने पर यह बात स्पष्ट होता है कि यह आन्दोलन को, जिस उद्देश्य के लिए लड़ा गया, उसमें तो यह सफल रहा ही, इसके साथ ही यह आन्दोलन पूरे भारतवर्ष की उस जनभावना को प्रेरित करने या जगाने में भी सफल हुआ जिससे उनमें ब्रिटिश शासन के अन्यायी पक्ष से लड़ने एवं उसके लिए जागरूकता की क्षमता भी उत्पन्न हुई क्योंकि यह आन्दोलन सम्पूर्ण भारतवर्ष में पहचाना जाने लगा था-

उस काल के प्रचार-प्रसार माध्यमों द्वारा भी यह माना कि निःसन्देह बारदोली ताल्लुकों के किसानों को उनके ऊपर हो रहे अन्याय को बहुत हद तक दूर करने में बल्लभभाई पटेल का एक महत्वपूर्ण योगदान एवं समपर्ण रहा, किन्तु उसकी नीवं गांधीजी द्वारा सन् 1922 में ही रखी जा चुकी थी । 1928 का बारदोली आन्दोलन करों में वृद्धि के विरोध स्वरूप उत्पन्न हुआ था । और अंततः यह आन्दोलन अपना उपयुक्त अधिकार प्राप्त करने में सफल रहा ।

गांधी जी ने आन्दोलन की सफलता पर प्रसन्नता व्यक्त की । गांधी ने सत्याग्रहियों को जो विजय के लिये बधाई दी । लेकिन उन्हें अपनी इस विजय से निश्चित होकर आगे निष्क्रिय होकर चुपचाप बैठने से सावचेत किया । गांधी जी ने उन्हे दुगनी शक्ति से रचनात्मक कार्य करने में जुट जाने को कहा और इस तरह भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रीय होने का आव्हान किया।

इस तरह से गांधी जी ने भारत के स्वतंत्रता के लिए पृष्ठभूमि तैयार होने का आभास दिलाया है ।

5.9 अभ्यास प्रश्न

1. बारदोली किसान आन्दोलन से आप क्या समझते हैं?
2. बारदोली किसान आन्दोलन की कार्ययोजना पर प्रकाश डालिए?
3. बारदोली किसान आन्दोलन में गांधीजी की भूमिका की समीक्षा कीजिए?

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सुनील सेन, "पीजेन्ट मूवमेन्ट इन इण्डिया", केपी बागजची एण्ड कं. न्यू देहली, 1982
2. डी.एन. धनागरे, 'पीजेन्ट मूवमेन्ट इन इण्डिया', 1920- 1950, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1983 ।
3. 'सम्पूर्ण गांधी वाड्गमय', खण्ड 37, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, 1988।

अध्याय - 6

किंग की अहिंसा

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 डॉ. मार्टिन लुथर किंग जुनियर की मौलिक चिन्ताऐं

6.3 डॉ. किंग की उपलब्धियाँ

6.4 किंग का अहिंसा दर्शन

6.5 सिद्धान्त एवं चरण

6.5.1 छः सिद्धान्त

6.5.2 छः चरण

6.6 डॉ. बर्नार्ड लफाएट्टे, जुनियर और कप्तान चार्ल्स एल. एल्फिन सीनियर

6.7 किंग की अहिंसा के अनुप्रयोग

6.8 द लफाएट्टे एसोसिएट्स

6.9 अहिंसा के मूलभूत सिद्धान्त

6.10 पुलिस कार्यों में किंग की अहिंसा के अनुप्रयोग सम्बन्धी कुछ टिप्पणियाँ

6.11 निष्कर्ष

8.12 अभ्यास प्रश्न

6.13 संदर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

यह अध्याय किंग की अहिंसा सम्बन्धी विचारों से सम्बन्धित है, जिसके अध्ययन के उपरान्त आप-

- किंग की अहिंसा सम्बन्धी धारणा को समझ पाएंगे,
- डॉ. किंग की उपलब्धियों को जान पाएंगे,
- किंग के अहिंसा दर्शन को समझ पाएंगे,
- किंग के अहिंसा सम्बन्धी सिद्धान्तों तथा चरणों को समझ पाएंगे, तथा
- किंग की अहिंसा के अनुप्रयोग को भी समझ पाएंगे ।

6.1 प्रस्तावना

नॉबेल पुरस्कार समिति के अध्यक्ष डॉ. गुन्नार जॉन ने डॉ. मार्टिन लुथर किंग जुनियर की उपलब्धियों को संक्षेप में बताते हुए कहा कि ।"डॉ. किंग पाश्चात्य जगत का पहला ऐसा व्यक्ति है जिसने यह दिखाया कि हिंसा के बिना भी संघर्श लड़ा जा सकता है ।"

उन दिनों शत कम ही लोग थे जिनका इस बात में भी विष्वास हो कि गाँधी द्वारा भारत में प्रयुक्त पद्धतियों और रणनीतियों का प्रयोग कर करोड़ों आमेरिकी निग्रो लागों के लिए न्याय और आजादी सुनिश्चित की जा सकती है । डॉ. लिंग ने एक बार अपने दर्शन की व्याख्या करते हुए कहा था कि "मेरा उग्र अहिंसा की धारणा में विश्वास है जिसमें एक व्यक्ति धरना, कानूनी कार्यवाही, बॉयकाट, मतदान तथा अन्य किसी भी माध्यम का, केवल हिंसा या घृणा छोड़कर प्रयोग करते हुए अन्याय की व्यवस्था के विरूद्ध खड़ा होता है ।"

यह देखा जा सकता है कि डॉ. किंग के सार्वजनिक अभियान इस बात पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित करते थे कि राज्य कानून में क्या लिखा हुआ था । डॉ. किंग का विश्वास था कि "मैंने मेरी पृष्ठभूमि से मेरे को संचालित करने वाले इसाई आदर्श प्राप्त किये और गाँधीजी से मैंने मेरी क्रियात्मक तकनीक सीखी ।" उन्होंने महात्मा गाँधी के प्रति अपने ऋण को स्वीकार करते हुए मोन्टगोमरी बस बहिष्कार के समय कहा कि "यह एक निष्क्रिय प्रतिरोध का विरोध है जो नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति पर आधारित है । ईसा मसीह ने हमें रास्ता दिखाया और महात्मा गाँधी ने काम करना सिखाया ।"

डॉ. किंग के मोन्टगोमरी बस बहिष्कार ने यह सिद्ध कर दिया कि अहिंसा उनके विरोधियों का हृदय जीतने का एक प्रभावी माध्यम है और यह आन्दोलनकर्ताओं को जोड़ने का धागा भी है । इस बस बहिष्कार ने एक ओर तो पूर्णरूपेण श्वेत लोगों को कटुता से रहित कर दिया । दूसरी और हृदय को स्पर्श करने वाली विशेषता यह थी कि कई श्वेत अमेरिकियों ने इस आन्दोलन को नैतिक समर्थन प्रदान किया ।

अन्तर्राष्ट्रीय विकास के अध्येताओं और पर्यवेक्षकों दोनों ने ही यह इंगित किया है कि गांधी अहिंसक प्रतिरोध के प्रयोग करने की शुरूआत को एक सामाजिक संघर्ष की तकनीक के रूप में किया जिसको डॉ. किंग ने सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ाया । वह काले लोगों की पवित्र आवाज के रूप में उभरे थे वहीं साथ में महत्वपूर्ण लोगों का समर्थन एवं प्रशंसा भी प्राप्त की । वे अधिक सामजस्यकारी एवं संतुलनकारी व्यवस्था की खोज में मानवता के मित्र बन गये । गाँधी ने उन्हें महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया । डॉ. किंग का कहना है-

"गाँधी संभवत: इतिहास में प्रथम आदमी था जिसने ईसा मसीह के नैतिक प्रेम को साधारण लोगों में प्रचलित व्याख्याओं से ऊपर उठाते हुए बड़े स्तर पर एक शक्तिशाली और प्रभावी सामाजिक शक्ति बना दिया । गाँधी के लिए प्यार सामाजिक रूपांतरण का एक संभाव्य साधन था । यह गाँधी के प्रेम और अहिंसा पर बल मे ही था जिसे मैंने सामाजिक सुधार के लिए पद्धति के रूप में खोजा जिसके लिए मै कई महीनों तक प्रयास करता रहा ।"

6.2 डॉ. मार्टिन लूथर किंग जूनियर की मौलिक चिंताऐं आरंभिक

डॉ. मार्टिन लूथर किंग जूनियर की मौलिक चिंताऐं आरंभिक तौर पर - एक पादरी की थी । वह न केवल अमेरिकी आदर्षो में विष्वास करता था बल्कि वह यह भी मान चुका था कि अहिंसक साधनों के माध्यम से वह देष में विद्यमान नस्लीय तनाव के वातावरण को सुधार सकता था । उन्होंने आर्थिक षोशण की समाप्ति के लिए, जो कि बहुत जरूरी था, पद्दलित लोगों की गरीबी और भूख को हटाने पर बल दिया । यह भी स्मरणीय है कि वह अपने आपको काले

लोगों तक ही सीमित नहीं रखता था बल्कि उसकी दृश्टि में ष्येत और काले दोनों ही लोग समान थे ।

उन्होंने कई रैलियों का नेतृत्व बड़ी सफलता के साथ जिसमें सबसे महत्वपूर्ण थी- मोन्टगोमरी बस बहिष्कार (1955-56) जो आज भी मानव इतिहास में न्याय के लिए किए गए प्रयासों में सबसे भव्य मानी जाती है । उन्होंने कहा कि इस स्थिति में इतिहास ने मेरे पर विश्वास किया है । यह अनैतिक और किसी अन्य को कृपापात्र बनाने का चिह्न होता यदि मैं मेरी नैतिक जिम्मेदारी को स्वीकार नहीं करता कि मैं इस संघर्ष के लिए क्या कर सकता हूँ । वह इतना विनम्र था कि वह यह विश्वास करता था कि वह तो एक साधन मात्र है वह एक विचार का व्यक्तिकीकरण था बजाय एक व्यक्ति के । नोबेल शांति पुरस्कार चयन समिति ने उनके मानवता को दिए अद्भुत योगदान को मान्यता दी और डॉ. किंग के "मनुष्य के भ्रातृत्व" के विचार के लिए सर्वोच्च त्याग को रिकॉर्ड किया ।

उसने 1963 में वाशिंगटन में एक विशाल रैली का नेतृत्व सफलतापूर्वक किया, सदरन् क्रिश्चियन लीडरशिप कॉन्फ्रेयन्स के अध्यक्ष और संस्थापक के रूप में और उनका 'आई-हेव-ए-ड्रीम नामक भाषण दिया जो उनके कुशल वक्ता और पवित्र भावनाओं का शास्त्रीय उदाहरण माना जाता है ।

जब डॉ. किग की व 1969 में हत्या की गई, तब वह मानव के भ्रातृत्य के पहरेदार यन गये और आशा के नये युग के पैगम्बर बन गये और यह कि अहिंसा कमजोर का हथियार नहीं है, बल्कि यह साहसी का हथियार है जैसा कि गाँधीजी ने प्रदर्शित किया । डॉ. किंग ने इस सत्य को बड़ी मानने योग्य स्पष्टता, अद्भुत साहस और मनोभाव के साथ प्रदर्शित किया ।

16.3 डॉ. किंग की उपलब्धियाँ

1. डॉ. किंग ने सन् 1954 से 1968 तक कई प्रमुख आंदोलनों का नेतृत्व किया जो उसके नेतृत्च गुणों एवं उसके अहिंसा के प्रतिबद्धता को दिखाते है । इसके अतिरिक्त वह न केवल अमेरिकी निग्रों का ही नेता नहीं था बल्कि एक ऐसे नेता थे जिसने सत्ता में बैठे लोगों को सभी पद्दलित लोगों के प्रति सभी प्रकार अन्यायों का उपचार करने की दिशा भी दिखायी थी । डॉ. किंग ने सम्पूर्ण विश्व के सभी पददलित लोगों को संगठित आवाज प्रदान की । जिसके प्रमुख उदाहरण निम्नलिखित है-

1955 मोन्टगोमरी - सार्वजनिक यातायात में पष्थक व्यवस्था के विरूद्ध

1962 अलबाने - अपृथक सार्वजनिक ठहरने की व्यवस्था और मताधिकार के लिए

1963 बर्मिघम - अपृथक सार्वजनिक ठहरने के स्थान और सकारात्मक कार्यवाही के लिए

1964 सेंट आगसलाइन - अपृथक सार्वजनिक ठहरने के स्थान के लिए

1965 सेलमा - मताधिकारों के गारंटेड सुरक्षा के लिए

1966 शिकागो - खुले मकान, बस्तियों की समाप्ति के लिए

1967 क्लिवलैण्ड - बस्तियों की समाप्ति, रोजगारों के लिए

1968 चार्ल्सटन - अस्पताल के श्रमिकों के अधिकारों की मान्यता के लिए

1968 - अमेरिका में गरीबी समाप्ति के लिए देश के कई भागों में गरीब लोगों के लिए अभियान

2. डॉ. किंग द्वारा गाँधी की अहिंसक कार्यवाही की तकनीकों की स्वीकारोक्ति से पूर्व अहिंसा को एक सामान्य अवधारणा के रूप में देखा व व्याख्या की जाती थी, जिसका प्रयोग कुछ थोड़े से धार्मिक समुदायों व लोगों के लिए, जो गाँधी के साथ भारत में काम करते थे, प्रयुक्त होता था । जहां धर्म को इसकी सफलता का श्रेय दिया जाता था । डॉ. किंग ने दिखाया कि अहिंसा अपने प्रभावी एवं बिना हिंसा व घृणा के प्रयोग के द्वारा यह एक लोकतांत्रिक समाज के बनने में महत्वपूर्ण अंग बन सकती थी ।
3. हमने देखा कि अब वैश्विक अहिंसक जागरूकता व्यापक रूप से लोकप्रिय हो रही है जिसके लिए गाँधी और डॉ. किंग के अगुवा बनकर कार्य करने के प्रयास जिम्मेदार हैं । आज भी अहिंसा अन्य दर्शनों की तुलना में छोटा ही है ।
4. गाँधी और डॉ. किंग दोनों ने ही अपने-अपने संबंधित धर्मो से उसकी प्रेरणा ली और इससे यह सिद्ध होता है कि उनका धर्म में अटूट विश्वास व प्रतिबद्धता थी ।

6.4 किंग का अहिंसा दर्शन

डॉ किंग के अनुसार'' अहींसा एक शक्तिशाली और चायपूर्ण हथियार है। यह इतिहास का अनोखा हथियार है जो बिना काटे घाव करता है और यह जगलियों को कुलीन वर्ग का सदस्य बना देती है यह एक ऐसी तलकर है जो बार खत्ती है 7 ''

किंग ने अपनी अहिसा का दर्षन अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक '' स्ट्राइड टुअर्डव फ्रीडम' के चौथे अध्याय ' पिलग्रिमेज टू नॉन वायलेस में प्रस्तुत किया । उसने विस्तार से अहिसा के छः सिद्धान्तो की व्याख्या की है -

पहला सिद्धान्त – अहिंसा साहसी लोगो, की जीवन शैली है ।

दूसरा सिद्धान्त – इसका उद्देश्य प्रेमी समुदाय का निर्माण करना है ।

तीसरा सिद्धान्त – बुराई पर आक्रमण करो, बुराई कर्ता पर नहीं ।

चौथा सिद्धान्त – बिना विरोध के पीड़ा को स्वीकारना ताकि लक्ष्य को प्राप्त कर सकें ।

पाँचवां सिद्धान्त – बाह्य शारीरिक हिंसा के साथ-साथ आतरिक हिंसा की भावना को भी नकारन्

छठा सिद्धान्त – - ब्रह्माण्ड हमेशा न्याय का पक्षधर रहता है ।

'लैटर फ्रॉम ए बर्मिघम जेल' में डॉ. किंग ने अपनी अहिंसा की रणनीति के छः चरण बताए हैं -

पहला चरण – सूचना संग्रहण

दूसरा चरण – शिक्षा
तीसरा चरण – व्यक्तिगत प्रतिबद्धता
चौथा चरण – समझौता वार्ता
पाँचवां चरण – प्रत्यक्ष कार्यवाही
छठा चरण – समझौता

6.5 सिद्धान्त एवं चरण

उनके पुलिस प्रशिक्षण में उन्होंने 'इच्छा' के रूप में छः सिद्धान्तों तथा 'कौषल' के रूप छः चरणों का उल्लेख किया । डॉ. बर्नाड लफाएट्टे जूनइयर, डेविज जॉनसन और चार्ल्स एलफिन द्वारा रचित पुस्तक 'द लॉ एनफॉर्समेंट वर्कबुक' किंग की अहिंसा में पुलिस प्रशिक्षण देने वाले सभी संस्थानों द्वारा प्रयोग में ली जाती है । इन छः सिद्धान्तों एवं छः चरणों को पुलिस की शब्दावली में निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया गया है ।

6.5.1 छः सिद्धान्त

पहला सिद्धान्त : दैनिक आधार पर पुलिस अधिकारी साहसी कार्यो को प्रदर्शित करते हैं । अहिंसा चाहती है कि प्रत्येक पुलिस अधिकारी संघर्ष में उसकी सहभागिता का स्वयं विश्लेशण करें ।

दूसरा सिद्धान्त : पुलिस अधिकारी सामान्यतः समुदाय की सेवा और लोगों की सहायता के वास्ते कानून के क्रियान्वयन के व्यवसाय को चुनता है कानून प्रवर्तन नीति एवं व्यवसायवाद हमेशा सम्पूर्ण समुदाय के उत्थान का समर्थन करती है ।

तीसरा सिद्धान्त : संघर्शो के निपटारे में यह महत्वपूर्ण है कि लोगों के कार्यो और संघर्षो के मुद्दों के बीच अंतर की पहचान हो तथा अपनी ऊर्जा को वास्तविक समस्या की ओर लगाया जाए । अहिंसा के लिए जरूरी है कि हमें सम्पूर्ण मानवता का सम्मान करना है और उनके कार्यो को व्यक्तिशः लेना है ।

चौथा सिद्धान्त : महत्वपूर्ण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए त्याग करना जरूरी है । अहिंसा उद्देश्य चाहती है, बिना उद्देष्य के त्याग उत्पीड़ित होगा ।

पाँचवां सिद्धान्त : अहिंसा एक भावनात्मक शिक्षा है इसलिए प्रत्येक को उसके / उसकी भावनाओं की शिक्षा देने की जरूरत है । लोगों या एक समुह के लिए नकारात्मक भावनाऐं अपने आपको आतरिक हिंसा को जन्म दे सकती है।

छठा सिद्धान्त : ब्रहमाण्ड में संतुलन और व्यवस्था की अन्तर्निहित

आवश्यकता है । ज्यादातर लोग गलत और अन्यायपूर्ण व्यवहार का विरोध करते है ।

6.5.2 छः चरण

पहला चरण : संघर्ष के दोनों ओर के तथ्य पुलिस अधिकारियों की प्रभावी समाधान की क्षमसा को बढ़ा सकते है और गुणात्मक सूचना पुलिस अधिकारियों के लिप शक्तिशाली स्त्रोत हो सकती है ।

दूसरा चरण : अहिंसा संघर्षो की अच्छी समझ पैदा करती है । यह समाधानों को कारगर और न्यायप्रिय बना सकने में सहायता करती है ।

तीसरा चरण : अहिंसा को चाहिए कि पुलिस अधिकारियों को संघर्षो में उनके संवेगात्मक जुडाव की स्पष्ट समझ को विकसित करें । पुलिस अधिकारी दूसरों के सांस्कृतिक अनुभेदों को समझते हैं ताकि संघर्षो के निपटारों में विभिन्नताओं को समझा जा सके ।

चौथा चरण : अहिंसा संघर्षो से संबद्ध सभी दलों पर आशिक विजय चाहती है । बिना किसी समझौते के पुलिस अधिकारी प्रायः समझौतों में उलझे रहते हैं लेकिन जब इनका अहिंसक रूप से समाधान किया जाता है तो ज्यादा प्रभावी होती है ।

पांचवां चरण : अहिंसा हस्तक्षेप एकध्रुवीय संघर्ष को रोक सकता है । रचनात्मक हस्तक्षेप समझौतों के नये विकल्पों का सृजन कर सकती है ।

छठा चरण : समस्याओं में संलग्न व्यक्तियों को समाधान में संलग्न होना आवश्यक है । अहिंसा पुलिस अधिकारियों को पुरानी समस्याओं के साथ नई संभावनाओं की ओर ध्यान खिंचने में सहायता करती है ।

6.6 डॉ. बर्नाड लफाएट्टे जूनइयर और कैप्टिन चार्ल्स एल. एलफिन सीनियर

डी. मार्टिन लूथर किंग जूनइयर के शिक्षण एवं अभ्यास पर आधारित समग्र अहिंसक प्रशिक्षण कार्यक्रम डॉ. बर्नाड लफाएटटे जूनइयर और कैप्टिन चार्ल्स एल. एलपिन सीनियर ने मिलकर विकसित किया था । जहां डॉ. बर्नाड लफाएट्टे जूनियर डी. किंग के विभिन्न अभियानों के निकट के साथी रहे थे वहीं कैप्टिन चार्ल्स एल. एलफिन सेंट लुईस पुलिस विभाग, मिसुरी, का जासूस था। कैप्टिन चार्ल्स एलपिन एक सबसे अधिक प्रसिद्ध अहिंसक प्रशिक्षक था, जिसने पुलिस अधिकारी से अहिंसक प्रशिक्षण के रूप में उसके रूपांतरण पर लफाएटटे की छत्रछाया में लिखा -

मैंने मेरी अनियमित कल्पनाओं में कभी नहीं सोचा होगा कि मैं डॉ. किंग की अहिंसा के दर्शन को स्वीकार करूँगा और पुलिस के प्रभावी रास्ते में इसको शामिल करूँगा । मै न तो समझता था नही समर्थन करता था कि अहिंसा बदलते समाधानों या व्यक्तियों में प्रभावी थी । मैं सोचा था यह एक निष्क्रिय और बिना रणनीति के भगवान द्वारा चीजों के बदलने की प्रतिक्षा और इंतजार के अलावा कुछ नहीं है । मैं बहुत गलत था । मैंने 30 वर्षो के जीवनकाल में लोकतांत्रिएक समाज में पुलिस क सभी स्तरों पर किंग के दर्शन को परीक्षण किया होगा । मैने तीन सरकारों के साथ पुलिस में किंग के दर्शन के अनुप्रयोग के संबंध में संवाद किया और पढ़ाया ।

1. साम्यवादी सरकारें - सोवियत संघ, मॉस्को, लिनिग्राड, ताषकन्द, सेन्दमाकान और लिथुआनिया - 1990 और 1991
2. सैन्य तानाषाही सरकारें - हैती, जनरल केडारास 1993
3. धिनायकवादी सरकारें - दक्षिण अफ्रिका - 1993.94,95,96,97

मेरा इन सरकारों के साथ आरम्भिक संबंध बने थे उस दौरान ये बदलाव की प्रक्रियाओं से गुजर रही थी, हालांकि वे तब तक बहुत ग्रहणकारी और संवाद उनके साथ निरन्तर जारी था । हालांकि किंग का दर्शन संभवत: अधिनायवादी परिस्थितियों और सरकारों में लागू हो सकता है, लेकिन यहां हम लोकतांत्रिक समाज के पुलिस कार्यो पर ही ध्यान केन्द्रित करेंगे । मेरा पुलिस कार्यो संबंधी अनुभव 21 जुलाई 1965 में शुरू हुआ था जब मैं सेंट लुईस पुलिस विभाग में एक पुलिस अधिकारी के रूप में शपथ ग्रहण की थी । एक पुलिस अधिकारी के रूप में 25 वर्षो के दौरान मेरी तीन बार पदोन्नति हुई, सार्जेन्ट से लैफ्टिनेंट और लैफ्टिनेंट से कैप्टिन के स्तर पर । अंतिम 10 वर्षो में मैंने कैप्टिन के स्तर पर सेवा की -

1. जिला कमाण्डर के रूप में
2. कमाण्डर ऑफ होमी साईड / रेप और बाल दुरूपयोग के कमाण्डर के रूप में, तथा
3. कमाण्डर ऑफ वायस नारकोटिक्स के रूप में ।

सेन्ट लुईस में मेरे शैक्षणिक अनुभव केवल काले लोगों के साथ सहयोग के बने थे, हालांकि मेरे धार्मिक संस्कार सभी संस्कृतियों और नस्लों के साथ सहयोग से बने थे । मेरे दादाजी एक पादरी थे और हम सेटिनेल क्रिश्चियन चर्च के सदस्य थे । मेरी युवावस्था अत्यधिक हिंसा के साथ गुजरी, मैं एक. 'गुट' से संबंध रखता था और कई सारी लड़ाईयों में भाग लिया, मेरे वातावरण ने मुझे सिखाया कि संघर्ष लड़ाई से सुलझाए जाते हैं । अप्रेल, 1968 में जब डॉ किंग की हत्या हुई थी, चार्ल्स एल्फिन सेंट लुईस पुलिस विभाग, मिसौरी, का जासूस था जिसे तीन वर्षों का अनुभव था उसने जुलाई, 1965 को इस विभाग में कार्यभार ग्रहण किया था वह सापेक्ष रूप से कानून क्रियान्वयन में नया था ।

एस्किन ने लिखा कि -

'जब मैं सर्जेन्ट था, मेरी पत्नी और मैं हाई स्कूल के साथ, जहाँ मेरे दोनों बच्चे पढ़ते थे, एक शैक्षणिक संघर्ष में उलझ गए थे । यह संघर्ष एकेडमिक और खेलों से सम्बन्धित था । मेरे दोनों बच्चे हाई स्कूल के लिए तीन खेल खेलते थे - फुटबाल, बेसबाल और बॉस्केटबाल ।

मेरे परिवार का नियम था ।के यदि हमारे बच्चे एकेडमिक्स में अच्छा नहीं करते थे, वे खेलों में भाग नहीं ले सकते थे । एक दिन दोपहर बाद मैंने एक डाक सूचना प्राप्ति की कि मेरे सबसे बड़ा बच्चा एक विषय में अनुतीर्ण रहा । हमने उसे फुटबाल टीम से हटा लिया और कई स्कूल कर्मचारियों ने हमें हमारे निर्णय पर पुनर्विचार के लिए याचना की । और यह कहा गया कि आने वाले खेल बहुत ही महत्त्वपूर्ण थे और उसकी अत्यधिक आवश्यकता थी । पुनर्विचार से मना करने के बाद मैं और मेरी पत्नी लगभग 60 माता-पिताओं की, जो कि गुस्सेबाज थे, बैठक में उपस्थित हुए, सभी ने स्कूल की व्यवस्था में अफ्रीकी-अमेरिकी छात्रों के बीच एकेडमिक्स के बारे में शिकायत की । "

इस बैठक के दौरान मैं डॉ. बर्नार्ड लफाएट्टे जुनियर से मिला था जिनका एक बच्चा हाई स्कूल में पढ़ता था और वह होली कम्यूनियन के बाप्टिस्ट चर्च का सहयोगी पादरी था । डॉ. लफाएट्टे कमरे में पिछले हिस्से में बैठ गये और घुस्सेल माता-पिताओं को सुना और फिर प्रश्न पूछना शुरू किया । उनके प्रष्नों के आधार पर हम एक रणनीति पर पहुँच गए जिससे स्कूल तंत्र की समस्याओं का समाधान हो गया । आगामी बैठकों में उसने निरन्तर रूप से उस समूह का, प्रश्न पूछते हुए और सुझाव देते हुए, नेतृत्व किया जब उसे लगता कि सुझाव उपयुका होंगे । यह याद करना रूचिकर है कि उस समय उसने उस समूह के लोगों और मुझे कभी भी डॉक्ट्रेट की उपाधि, हार्वर्ड विश्वविद्यालय से प्राप्त करने का जिक्र नहीं किया, न ही उसने डॉ. किंग और नागरिक अधिकार आन्दोलन के असाधारण अनुभवों का जिक्र किया ।

बाद में मैंने अध्ययन में उसका नाम पाया कि नागरिक अधिकार आन्दोलन उनके कारण ही महत्त्वपूर्ण बना था ।

16.7 किंग की अहिंसा के अनुप्रयोग

स्कूल के मसले के समाधान के बाद डॉ. लफाएट्टे और चार्ल्स एलपिन निरन्तर कई वर्षों तक समुदाय के मसलों पर साथ-साथ कार्य करते रहे । सन् 1981 में लफाएट्टे ने "फ्रीडम राईड" नामक एक कार्यक्रम का आयोजन किया जो 1961 के मूल "फ्रीडम राईड" के 20 वर्शों के स्मरणोत्सव के रूप में था । इस फ्रीडम राईड के समय ही एलपिन को पता चला कि जो कई वर्षों से उसका मित्र था वह डॉ. बनार्ड लफाएट्टे ही था । जब वहाँ के राजनीतिक नेतृत्व ने शहर का महत्त्वपूर्ण व्यक्ति घोषित किया और एल्फिन ने सुना यह बदल जो कि घट रहे हैं वह अहिंसक रणनीति का ही परिणाम थे । उसने अत्यधिक प्रेरणा का सब कुछ समझने - लड़ाई की पद्धति के बारे में एल्फिन ने बाद में लिखा कि क्या घटित हुआ - "फ्रीडम राईड" के दौरान मैंने डॉ. लफाएट्टे के मित्रों जेम्स फार्मर, सम्माननीय एन्ड्रयू यंग, डोरोथी कॉटन सी.टी विवियन, डेविड जोनसन, जॉन लेविस, डॉ. गेविन पैटान, श्रीमती क्रिस्टिन किंग फेरिस श्रीमती कॉरेट्टा स्कॉट किंग, ब्रेच्छा और लेस चार्टर आदि से प्रश्न पूछे । जब मैं 9 दिनों बाद अटलांटा, (जार्जिया) आ पहुँचा, तब मेरा मन अहिंसा की ओर आकर्षित हो रहा था । हालांकि मेरी इस दर्शन में पर्याप्त समझ नहीं थी ।. "फ्रीडम राइड" पर मेरे अनुभवों के बाद मैं प्रेरित हुआ और असमंजस में भी पड़ा कि कैसे किंग की अहिंसा का प्रयोग लड़ने में किया जाए ।

डॉ. लफाएट्टे जुनियर और मैं काफी करीबी मित्र बन गये और हम निरन्तर समुदाय के मुद्दों पर काम करते रहे । वह, ग्रीष्मकालीन कार्यशाला, के प्रमुख (डीन) थी थे, जो कि वार्शिक रूप से सेन्टर फॉर नानवायलेंट सोशल चेंज, इक, अटलांटा (जार्जिया) में आयोजित की जाती थी । उसने मुझे प्रोत्साहित किया कि वह एक सप्ताह लम्बी कार्यशाला में पंजीकृत हो और मैंने इन कार्यशालाओं में भाग लेने के लिए पुलिस विभाग से छुट्टियाँ ले ली । आठ वर्षों तक यह चलता रहा । बाद में डॉ. किंग, महात्मा गाँधी और अन्य अहिंसक दार्शनिकों के बारे में व्यापक अध्ययन व किंग सेन्टर की वार्षिक कार्यशालाओं में भाग लेने के पश्चात्, यह दर्शन स्पष्ट हो गया ।

मेरी परिकल्पना थी कि किंग की अहिंसा का दर्शन और रणनीति पुलिस कार्यों में प्रभावी कौशल बन सकता है । मैंने इस दर्शन को संघर्षो के समाधान में परीक्षण करना शुरू कर दिया । जिनका पुलिस अधिकारी के रूप में कर्तव्य निष्पादन में प्रतिदिन सामना करना पड़ता था । मैंने इसे अधिकारिर्या के आपसी व पर्यवेक्षकों के साथ अन्त:व्यक्तिक संघर्षो के समाधान में भी इसे लागू करना शुरू किया । मैं डॉ. किंग की अहिंसक प्रतिरोध के बारे में समझ से प्रभावित था, जहाँ वे अपने आप को संघर्षों में अपनी सहभागिता दिखा कर अपना स्वयं परीक्षण करते रहते थे । इस दर्शन सम्बन्धी बौद्धिक समझ का प्रयोग मैंने वास्तविक व्यक्तिगत संघर्षों में किया और इससे ज्यादा इसका प्रयोग मेरे द्वारा प्रयोग करने से तथा डॉ किंग के लेखन को निरन्तर पढ़ने से इस दर्शन के बारे में हमारी समझ और स्पष्ट होती गई । अहिंसा के मेरे अनुप्रयोगों द्वारा मैं समझ गया था कि "विरोधी के ऊपर जीत हासिल करना संभव है, लेकिन विरोधी की इस पर जीत हासिल करना असंभव है । जो कि किंग की अहिंसा का अंतिम लक्ष्य है ।"

मैंने संघर्शों के सभी स्तरों पर इस अवधारणा की निरन्तर परीक्षण किया और वैसे ही मेरे अध्ययन और पुलिस के कार्यो में अहिंसा का प्रयोग किया और जिला कमाण्डर से कमाण्डर ऑफ होमीसाइड एण्ड चाईल्ड अब्यूज टू कमाण्डर टू नारकोटिक्स में मेरा कार्य बदले जाने पर भी किया । मैंने निरन्तर अध्ययन और ज्ञानवर्धन किया । डॉ. लफाएट्टे और डेविड जानसन के संरक्षण में मैंने प्रभावी रूप से निरन्तर इस दर्शन का सम्भावित अपराधियों की पूछताछ में, हिंसा और नारकोटिक्स के मामलों में संगठित समुदाय को सम्बोधन में, समुदायों की समस्याओं की पहचान और उन पर कार्य करके समुदायों को सशक्तिकरण करने में किया ।

जिस रूप में समुदाय के पुलिस कार्य और समुदायोन्मुखी पुलिस कार्य, पुलिस कार्यो में गुंज उठा है । मैंने महसूस किया है कि किंग की अहिंसा ने इस अवधारणा को पूरा किया और संवर्द्धित किया ।

6.8 द लफाएट्टे एसोसिएट्स

लफाएट्टे एसोसिएट्स, की स्थापना डॉ. लफाएट्टे और डॉ. एल्फिन ने पुलिस एजेन्सियों को आन्तरिक प्रशिक्षण देकर उनकी क्षमता को बढ़ावा देने हेतु की थी । इस प्रकार प्रशिक्षकों का प्रषिक्षण दृष्टिकोण नामक प्रशिक्षण कार्यक्रम, जो 150 घंटों का था, का निर्माण किया गया इसके प्रमाणीकृत होने के बाद इसे अधिकारियों को प्रस्तुत किया गया । यह उनको दो दिवसीय

किंग की अहिंसा के मूल पाठ्यक्रम को पढ़ाने के लिए अर्हता देता था । इस उपागम को पुलिस एजेन्सियों ने बहुत अच्छे से लिया और यह इस दर्शन को संस्थागत रूप देने का प्रथम चरण था।

पुलिस अधिकारियों को किंग की अहिंसा का प्रशिक्षण / शिक्षा मूलत: डॉ. लफाएट्टे, डेविड जॉनसन और चार्ल्स एल्फिन ने दी थी । उन्होंने दूसरे अधिकारियों को प्रोत्साहित किया जिन्होंने हमारे साथ सह-प्रशिक्षक के रूप में कार्य करने हेतु प्रशिक्षण प्राप्त किया । प्रत्येक पुलिस प्रशिक्षण में प्रथमदृष्ट्या इस दर्शन का विरोध किया । उन्होंने कई प्रश्न उठाये और कहा कि अधिकारियों को डॉ. किंग के दर्शन की व्याख्या को पढने की जरूरत है । इस दो दिवसीय मूल पाठ्यक्रम के बाद ज्यादातर अधिकारी वापिस लौट आए । एल्पिन ने विरोध के मुख्य कारणों को इस रूप में संक्षिप्त किया है-

1. 'अहिंसा' शब्द की सही समझ का नहीं होना ।
2. वे सोचते हैं, कि यह उनके द्वारा किये गये कार्यो की आलोचना का दूसरा प्रशिक्षण है ।
3. वे सोचते हैं कि डी. किंग ने श्वेतों को पराजित किया ।

सन् 1990 में लगभग 30 पुलिस अधिकारी अलबाने, न्यूयार्क में एकत्रित हुए, वे सार्जेन्ट्स और ऊपर के दर्जे के लोग थे जो अपने संबंधित पुलिस विभाग में प्रशिक्षण देते थे । इस अनुभव के साथ डॉ. लफाएट्टे जूनियर डेविड जॉनसन और एस्किन ने एक विषेश रूप की " लॉ एन्फोर्समेन्ट वर्कबुक"" विकसित की, जो किंग की अहिंसा में पुलिस अधिकारियों के प्रशिक्षण हेतु तैयार की गयी थी ।

इस प्रशिक्षण पद्धति ने लोगों का ज्यादा ध्यान खींचा - द लफाएट्टे एसोसिएट्स ने अपनी नई पद्धतियों के लिए अमेरिका और अन्य स्थानों पर लोगों का ज्यादा ध्यान खींचा । फ्लोरिडा और मिशिगन राज्यों के अपने ज्यादातर पुलिस अधिकारियों को जिन्हें अब दो घण्टे के किंग की अहिंसा का मूल पाठ्यक्रम को पढ़ाने हेतु प्रमाणित किया ।

चार्ल्स एल्फिन ने. लिखा - फ्लोरिडा में, द फ्लोरिडा मार्टिन किगं जूनियर इंस्टीट्यूट ने पुलिस प्रशिक्षण में नेतृत्व ग्रहण किया वहाँ पर वे मैट्रो डाडे पुलिस विभाग के 3000 से ज्यादा पुलिस अधिकारियों ने किंग की अहिंसा में 8. घण्टे का प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्पन्न किया । इस मैट्रो डाडे पुलिस विभाग लगभग 25 निष्ठावान अधिकारी रखता है जो दो दिवसीय किंग की अहिंसा पाठयक्रम पड़ाने के लिए प्राधिकृत है, 5 अधिकारी मियामी शहर के पुलिस विभाग में और 4 अधिकारी तल्लाहसे (Tallahassee) पुलिस विभाग में भी थे । मिशीगन राज्य में द न्यू डेटरोइट (Detroit) इंक ने पुलिस प्रशिक्षण का नेतृत्व किया, जहाँ लगभग 70 अधिकारी किंग की अहिंसा में दो दिवसीय पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण हेतु प्राधिकृत हैं । यहाँ रोडे आइलैण्ड और साउथ केरोलिना की क्रिमिनल जुस्टिस एकेडमी, में भी पुलिस प्रशिक्षकों को प्राधिकृत किया गया है । इस प्रकार कुल लगभग 150 पुलिस अधिकारी सम्पूर्ण संयुक्त राज्य अमेरिका में पुलिस अधिकारियों को किंग की अहिंसा पढ़ाने हेतु प्राधिकृत हैं ।

6.9 अहिंसा के मूलभूत सिद्धान्त

डॉ. मार्टिन लुथर किंग जुनियर ने "स्ट्राइड टुवर्डस फ्रीडम ' (हार्पर एण्ड रॉ,1958) के चौथे अध्याय "पिलाग्रिमेन टू नॉनवायलेंस" में अहिंसा के छ: मूलभूत सिद्धान्त बताए हैं जो निम्नलिखित प्रकार से है।

पहला सिद्धान्त : अहिंसा साहसी लोगों की जीवन शैली है ।

- यह अशुभ के प्रति सक्रिय अहिंसक प्रतिरोध है ।
- यह उद्यमी आध्यात्मिकता, मानसिकता एवं भावुकता है ।
- यह हमेशा विरोधी को उसकी न्यायपरायणता के लिए समझाती रहती है ।
- यह अनाक्रमण की स्थिति में ही उसके शत्रु के प्रति निष्क्रिय होती है ।

दूसरा सिद्धान्त : अहिंसा मित्रता और बोध को जीतना चाहती है ।

- अहिंसा का अन्तिम परिणाम मुक्ति और समाधान है ।
- अहिंसा का उद्देश्य बहुत प्रेमी समुदाय का सृजन करना है ।

तीसरा सिद्धान्त : अहिंसा लोगों को नहीं अन्याय को परास्त करती है ।

- अहिंसा मानती है कि अशुभ कर्ता भी उससे पीड़ित होते हैं ।
- अहिंसक प्रतिरोधक लोगों को नहीं अन्याय को परास्त करता है ।

चौथा सिद्धान्त : अहिंसा की धारणा है कि दुख या पीड़ा ही सिखा सकती है तथा बदलाव ला सकतीहै।

- अहिंसा बिना प्रतिकार के पीड़ा को स्वीकारती है ।
- अहिंसा हिंसा को भी स्वीकारती है यदि आवष्यक हुआ तो, लेकिन यह कभी भी पीड़ा नहीं पहुँचायेगी।
- अहिंसा सुखीपूर्वक इसके कृत्यों के परिणामों को स्वीकारती है ।
- अनुपार्जित पीड़ा मुक्ति है और यह व्यापक शैक्षणिक एवं बदलाव की सम्भावना रखती है।
- पीड़ा शत्रु के रूपान्तरण की शक्ति रखती है जब विवेक असफल हो जाए ।

पाँचवा सिद्धान्त - अहिंसा घृणा के बजाय प्रेम का चुनाव करती है ।

- अहिंसा शारीरिक और मानसिक हिंसा का प्रतिरोध करती है ।
- अहिंसा एक स्वत: प्रवर्तित, अप्रेरित निस्वार्थ तथा सृजनात्मक प्रेम है ।
- अहिंसक प्रेम एक अच्छी जानकारी देती है कि उसके बदले में सम्भवत:, हालांकि कम ही सम्भावना है, वैर या युद्ध का प्रतिफल मिलेगा ।
- अहिंसक प्रेम सक्रिय होता है, निष्क्रिय नहीं ।
- अहिंसक प्रेम समुदाय जीर्णोद्धार के क्रम में माफ करने की कभी न समाप्त होने वाली योग्यता का नाम है ।
- अहिंसक प्रेम घृणाकर्ता के स्तर में डूबता नहीं है ।
- शत्रु के प्रति प्रेम का प्रदर्षन अपने-आप के प्रति प्रेम के प्रदर्शन जितना ही होता है।
- प्रेम समुदायों का जीर्णोद्धार करता है और अन्याय का प्रतिरोध करता है ।

– अहिंसा इस तथ्य को भी मान्यता प्रदान करती है कि सम्पूर्ण जीवन अन्तर्सम्बन्धित है ।

छठा सिद्धान्त : अहिंसा का विश्वास है कि ब्रह्माण्ड न्याय की ओर रहता है ।

– अहिंसक प्रतिरोधक का यह पक्का विश्वास होता है कि अन्ततः न्याय की ही जीत होगी।

– अहिंसा का विश्वास है कि ईश्वर न्याय का देवता है ।

6.10 पुलिस कार्यो में किंग की अहिंसा के अनुप्रयोग सम्बन्धी कुछ टिप्पणियाँ

सेंट लुईस, मिसौरी, के पुलिस प्रमुख रोनाल्ड हेन्डरसर का कहना है कि 'मैंने कैप्टिन एल्फिन के साथ सेंट लुईस पुलिस विभाग में काम किया और समुदाय के संचालन और संघर्षों के प्रबन्धन में इस दर्शन के प्रभावी प्रयोग को भी देखा । मैंने इस दर्शन के प्रयोग को मान्यता प्रदान की है । यह दर्शन दिवारें नहीं खींचता बल्कि जोडने का काम करता है । मुझे कैंप्टिन एलफिन का यह कहना याद है कि "हमें उन पर विजय हासिल करनी है न कि उन्हें हम पर विजय हासिल करनी है । मैं आजकल इस दर्शन का अभ्यास कर रहा हूँ और कार्य भी ।

डेट्रोईट, मिशीगन के पुलिस विभाग के लेफ्टिनेंट टोरी क्तित्र का कहना है कि 'मैं पिछले 3 वर्षों से किंग की अहिंसा में प्रमाणित प्रशिक्षक हूँ और इस दर्शन को समुदायों के संघर्षों के समाधान में तथा पुलिस अधिकारियों के मेरे प्रबन्धन में अनुप्रयुक्त किया । मैं किंग के दर्शन के प्रति प्रतिबद्ध हूँ और मेरे आगामी पुलिस अधिकारियों को निरन्तर इसे पढ़ाने का इरादा है ।"

रोड़े आइलैण्ड के प्रोविडेन्स पुलिस डिपार्टमेंट के सर्जेन्ट टोन्या किंग कहते हैं कि 'मैं इस दर्शन के प्रति बढ़ा संशयवादी था । जब मैंने इसके बारे में पहली बार सुना और ऐसे ही मेरी कक्षा के ज्यादातर अधिकारी भी, जिनको यह प्रस्तुत की गई थी । जिस प्रकार मैंने इसके बारे में सुना था,

उसी रूम में मैंने यह भी देखना शुरू कर दिया कि यह पुलिस कार्यों के सभी स्तरों पर कैसे लागू की जा सकती है । मेरे को प्रमाणित किए जाने के बाद समुदायों के संघर्षों तथा पुलिस के सभी स्तरों पर इस दर्शन का प्रयोग किया । मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि 21 वीं सदी की पुलिस के लिए यह जरूरी है । "

फ्लोरिडा की मेट्रो-डाडे ट्रेनिंग एकेडमी के सार्जेन्ट ग्लेण्डा टी. वाईनगार्ड का कहना है - 'किंग की अहिंसा में प्रमाण-पत्र हासिल करने के बाद से, इस दर्शन ने मेरे व्यवसाय और निजी जीवन को संवर्द्धित व समृद्ध किया है । मेरे समक्ष ऐसे कई अवसर आए थे, जब मैंने नाजुक संघर्षों के दौर में पुलिस अधिकारियों और समुदाय के साथ इस दर्शन का अनुप्रयोग किया । ट्रेनिंग एकेडमी का काम स्व-निर्दिष्ट होने के बाद मेरे को ट्रेनिंग प्राप्त करने के लिए आने वाले अधिकारियों को देखने-समझने का अवसर मिला, मैंने सभी संस्कृतियों के अधिकारियों पर इसका असर अनुभव किया । "

साउथ केरोलिना क्रिमिनल जस्टिस एकेडमी के अधिकारी लाइन्ने केन का कहना है कि 'मैं किंग की अहिंसा में प्रशिक्षण या प्रशिक्षक के रूप में नहीं जाना जाता था । मैंने शुरू के कुछ दिनों तक बहुत प्रतिरोध किया । बाद में मैंने इस दर्शन को सुनना और समझना षुरू किया, मैंने यह भी देखना शुरू किया कि इसको पुलिस में कैसे लागू किया जा सकता था । सभी पुलिस अधिकारियों को इस दर्शन में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए यह हमें भी सभी संघर्षों के समाधान में सहायता करती है एक पद्धति के साथ जो कि मेरे लिए सफल रही है ।

हम 21 वीं सदी की ओर बढ़ रहे हैं । क्या हम वही गलती नहीं करने जा रहे हैं जो 20वीं सदी में की थी। पुलिस में अहिंसा के भावी प्रभाव सामने आएंगे? क्या हम अहिंसक सरकार के सृजन के बिना एक अहिंसक पुलिस का सृजन कर सकते हैं? क्या हम ऐसी अहिंसक पुलिस का सृजन कर सकते हैं जो शिक्षण तन्त्र में अहिंसा का पाठ पढ़े बिना प्रभावी होगी? टेलीविजन, कार्टूनर्स, मुवीज, समाचार, व्यक्ति एवं घटना प्रधान हास्य नाटिकाऐं आदि पर दिखाए जाने वाली हिंसा लोगों के व्यवहार और मानसिक वृत्ति को कितनी मात्रा में प्रभावित करती है ?

किंग की अहिंसा भविष्य के लिए काफी सम्मावनाऐं रखती हैं, विशेषकर पुलिस में । हालांकि पुलिस ही अकेला क्षेत्र नहीं होगा बल्कि स्कूलों, घरों, गलियों एवं जीवन के प्रत्येक स्तर पर अहिंसा का अस्तित्व हो, जो कि डी. मार्टिन लुथर किंग जुनियर का सपना था ।

6.11 निष्कर्ष

गाँधी के समान ही मार्टिन लुथर किंग जुनियर ने अहिंसा को 'वीरता की पहचान माना बजाय कायरता की श्वेत विशेषता के ।' किंग ने इस तर्क को इंगित किया कि अहिंसा कायरता को नकारना है, वीरता इसकी शक्ति है । प्राय: यह खतरनाक या संकटपूर्ण कार्य हैं यह उसके शब्दाडम्बर मात्र है । जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण - मोटगोमरी बस बहिष्कार, धरने, फ्रीडम राइट्स और अंतिम बर्मिघम है । अहिंसक प्रत्यक्ष कार्यवाही के सिद्धान्त की विजय एक वास्तविकता थी । इस सिद्धान्त या पद्धति में विश्वास बर्मिघम में परिपक्व हुआ । परिणामस्वरूप नागरिक-अधिकार के संघर्ष के सम्पूर्ण प्रतिबिम्ब ने ही मूलभूत बदलाव कराए होंगे । अहिंसा इसके परीक्षण में सफल हुई । दक्षिण के वियोजन की एकीकृत शक्ति ही वह हथौड़ा थी । बर्निघम अहरू था ।

किंग का प्रशिक्षण कार्यक्रम जो कि अब डॉ. बर्नार्ड लफाएट्टे और कैप्टिन चार्ल्स एलफिन द्वारा विश्व स्तर पर विकसित व संगठित किया गया । यह उनकी उनके नेता डॉ. मार्टिन लुथर किंग जुनियर के प्रति भावपूर्ण श्रद्धांजलि का प्रमाण है ।

6.12 अभ्यास प्रश्न

1. किंग की अहिंसा से आप क्या समझते हैं?
2. डॉ. किंग की प्रमुख उपलब्धियाँ क्या रही थी?
3. किंग की अहिंसा के दर्शन का वर्णन कीजिए ।
4. किंग की अहिंसा के विभिन्न सिद्धान्त व चरण कौन-कौन से हैं?

5. किंग की अहिंसा के अनुप्रयोग का वर्णन कीजिए ।

6.13 संदर्भ ग्रन्थ

- वेबर,थॉमस, "गाँधी : एज डिसिप्लिन एण्ड मेंन्टॉर," कम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2007.
- फिशर,लुईस, "द लाईफ ऑफ महात्मा गाँधी", द हार्पर कॉलिन्स पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2006.
- हार्डिमेन,डेविड, "गाँधी इन हिज टाइम एण्ड वन्स", परमानेन्ट्स ब्लेक, नई दिल्ली, 2005.

इकाई - 7

ग्रामदान

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 ग्रामदान के लक्षण, स्वरूप एवं प्रकृति

7.3 ग्रामदान की अवधारणा

7.4 भारत में ग्रामदान

7.5 राजस्थान में ग्रामदान

7.6 राजस्थान में ग्रामदान अधिनियम, 1971

7.7 ग्रामसभा

7.8 सारांश

7.9 अभ्यास प्रश्न

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप जान पाएँगे :

- ग्रामदान की अवधारणा स्वरूप एवं प्रकृति
- भारत में ग्रामदान की स्थिति
- राजस्थान में ग्रामदान की स्थिति
- वर्तमान सन्दर्भ में प्रभावशीलता

7.1 प्रस्तावना

उपरोक्त उद्देश्य स्वतंत्र भारत में अवस्थित ग्रामदान की अवधारणा व उसके क्रियान्वयन की प्रक्रिया व समस्याएँ व सफलताओं से अवगत करायेगी । राजस्थान के लगभग 40,000 गाँवों में 200 को ही ग्रामदान का दर्जा प्राप्त है । परन्तु प्रत्येक ग्रामदानी ग्राम गाँधी दर्शन की अहिंसात्मक पदति द्वारा सामाजिक-आर्थिक संघर्षो के निवारण का दर्शन कराता है । अत: इन ग्रामदानी ग्रामों के स्वरुप, समरसता एवं सफलताएँ जानने से आपको महात्मा गाँधी के विश्वविख्यात दार्शनिक सिद्वान्तों का प्रत्यक्ष दर्शन मिलता है ।

7.2 ग्रामदानी के लक्षण,स्वरूप एवं प्रकृति

भारत में ही नहीं किन्तु समस्त विश्व में पिछले एक - दो शताब्दियों से साधारण ग्रामों को ग्रामदान मे परिवर्तित करने की घटनाएँ लगभग नगण्य हैं । इससे पूर्व यूरोप में कई समुदायवादी अथवा समाजवादी विचारको ने इस प्रकार की इकाईयों की कल्पना अवष्य की थी । जिसमें किसी भी व्यक्ति के पास निजी सम्पत्ति का लगभग पूर्ण अभाव हो तथा उस इकाई में

रहने वाले सभी व्यक्ति अपना जीवन मिलजुल कर व्यतीत करते हैं । इस प्रकार की अवधारणा देने वालों में राबर्ट ऑवन व सन्त साइमन के नाम प्रमुख है, जिसमें से ऑवन ने तो कुछ इस प्रकार की सामूहिक समुदायों की स्थापना भी कर ली थी । कालान्तर में ये विचाराधारा प्राय: लुप्त हो गई तथा एक ओर पूंजी उन्मुख उदारवादी व पूंजीवादी विचारधारा तथा दूसरी ओर सर्वहारा उन्मुख समाजवादी व साम्यवादी विचारधारा के बढ़ जाने के कारण इस प्रकार के सामुहिक समुदायों या कम्यून / कॉमनकवेल्थ की स्थापना की कल्पना भी विस्मृत हो गई ।

जिन देशों में पूंजीवाद क्रांतिकारी रुप से विकसित होने लगा वही तो निजी सम्पत्ति का महत्व अत्यधिक बढ़ गया । वहीं दूसरी ओर साम्यवादी विचारधारा से प्रेरित सोवियत रुस में लगभग सभी सम्पत्तियों का राष्ट्रीयकरण अथवा राज्य-स्वामित्व का मॉडल विकसित होने लगा । ग्रामदान का मूल दर्शन विकसित पूंजीवाद व विकसित समाजवाद को नकारकार एक ऐसी सामाजिक इकाई का निर्माण करना है, जिसमें सामूहिक सम्पत्ति की मान्यता है और जिसमें उत्पादक सम्पत्तियों का सामूहिक रुप से उपयोग किया जाये ।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि कुछ यूरोपीय नीतिशास्त्रीयों ने तो इस प्रकार की सामुदायिक व सामूहिक जीवन इकाईयों की कल्पना की थी, परन्तु अंग्रेजो के भारत में स्थापित होने के बाद भारतीय चिन्तन में इस प्रकार का प्रस्ताव परिलक्षित नहीं हुआ ।

अतएव दार्शनिक रुप से ग्रामदान भारतीय परिप्रेक्ष्य मं अनूठी व अनोखी कल्पना है जिसका कि विनोबा भावे जैसे गाँधीवादियों के संरक्षण में यथार्थ स्वरूप आज भी भारत के कई ग्रामों में अवस्थित है । गॉधीवादी विचारधारा का एक प्रमुख लक्षण स्वावलम्बल है तथा गाँधीजी के जीवन दर्शन में राज्य का महत्व बहुत कम है, परन्तु जब विनोबा भावे ने कई पूर्व-अस्तित्व ग्रामो को ग्रामदान में परिवर्तित कर दिया अर्थात् भारत के कई गाँवो में ग्राम के लगभग सभी निवासियों द्वार अपनी निजी भू-सम्पत्ति का स्वामीत्व एक साथ त्याग कर दिया । निश्चित ही आधुनिक समय की एक महत्वपूर्ण घटना है, क्योंकि अंग्रेजी शासन के अंतर्गत भारत में प्राचीन काल की सामूहिक जीवन पद्धति की परम्परा थी, जो प्राय: लुपा हो गई थी तथा प्रत्येक गाँव में अधिकतर भू-सम्पत्ति के स्वामीत्व का निजीकरण हो चुका था । शामलात् अथवा गोचर भूमि व कुछ अन्य जो राज्य के स्वामित्व में अवस्थित थी को छोड़कर 1947 तक लगभग सभी ग्रामीण भूमि सम्पूर्ण रुप से निजी स्वामित्व में बंट चुकी थी । साथ ही भू-सम्पत्ति का स्वामित्व सामाजिक प्रतिष्ठा का एक चिह बन चुका था । जिसके विवादास्पद प्रकरणों में प्रत्येक संबंधित व्यक्ति अपार सम्पत्ति का कई दशकों तक व्यय करके उच्च से उच्चतम न्यायालय तक संघर्ष करना न्याय संगत मानता था । इस प्रकार की महत्वपूर्ण निजी भू-स्वामित्व की धारणा को प्रत्येक ग्रामदानी व्यक्ति द्वारा सम्पूर्ण प्रकार से नकार दिया जाना ग्रामदान का एक अति महत्वपूर्ण लक्षण है ।

कई सैकड़ो वर्षो तक ग्रामीण भारत में भूमि का निजी स्वामित्व की कल्पना व यथार्थ के बढ़ते हुए महत्व को देखते हुए एक ग्राम के समस्त ग्रामवासियों द्वारा भूमि सम्पत्ति का त्याग विधि के अभाव में असंभव था । ग्रामदान आन्दोलन का आधार निश्चित रुप से महात्मा गाँधी के स्वावलम्बन व स्वराज जैसे आदर्शो पर आधारित था तथा विनोबा भावे द्वारा सैकड़ो

ग्रामवासियों के द्वारा अपनी भू-सम्पत्तियों का ग्रामदान में विलिनीकरण अवश्य ही महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व व कृतित्व से प्रभावित था । परन्तु विनोबा जैसे गाँधीवादियों के ना चहाते हुए भी कई राज्य सरकारों द्वारा ग्रामदानी गाँवो के निवासियों द्वारा अपनी निजी भू-सम्पत्तियों का त्याग करके नई प्रकार की ग्रामदानी ईकाईयों का निर्माण करने का विधिक नियमन आवश्यक हो गया । सैद्धान्तिक रुप से निजी सम्पत्ति का त्याग मानव मात्र का अधिकार माना जा सकता है परन्तु व्यावहारिक रुप से भू-स्वामित्व त्याग करके ग्रामदानी प्रतिमानों का निमार्ण विधिक प्रक्रिया के बगैर संभव नहीं था । अतएव गाँधीवादी परम्परा से थोड़ा हटकर ग्रामदानी गाँवो का विधिक अस्तित्व दूसरा महत्वपूण लक्षण है ।

ग्रामदान का तीसरा महत्वपूर्ण लक्षण, जो कि पहले व दूसरे लक्षणों का मात्र Corollary(कारोलरी) है एक ग्रामदानी ग्राम में संग्रहित भू-सम्पत्ति का नियमन करने के लिए निर्मित की गई संस्थाओं का स्वरूप है । सैद्धान्तिक तौर पर ग्रामदान के अंतर्गत एक ग्रामदानी गाँव में समस्त भू-सम्पत्ति का सार्वजनिकरण हो जाता है तथा उसका उपयोग व उपभोग प्रजातान्त्रिक संस्थाओं द्वारा किया जाता है । जिसमें गाँधीवादी विचारकों के अत्यधिक बल देने के कारण बहुमत सिद्धान्त का तिरस्कार करके सर्वमान्यता के सिद्धान्त को विधिक रुप से स्थापित कर दिया गया है । अतएव प्रत्येक ग्रामदान गांव मे संग्रहित भू-सम्पत्ति का उपयोग ग्राम सभाओं में सर्वमान्यता के आधार पर किया जाता है तथा इन ग्राम सभा के मुखिया अथवा अध्यक्ष का चयन भी बहुमत पर आधारित चुनावों में न होकर सर्वमान्यता के आधार पर चयन का प्रयास किया जाता है ।

ऊपर वर्णित तीनों लक्षणों के आधार पर सैद्धान्तिक रुप से ग्रामदानी गाँवों का एक लक्षण यह भी माना जा सकता है कि निजी भू-सम्पत्ति के अभाव में आर्थिक विषमताएँ कम होती है तथा निजी व सामाजिक विद्वेशो के आधार प्राय: नहीं के बराबर होते है । अतएव सैद्धान्तिक तौर पर ग्रामदानी गाँवों का जीवन सामुदायिक व पारिवारिक समरसता, सार्वजनिक शान्ति से भरपूर व सम्पत्ति आधारित झगड़ों से रिक्त माना जा सकता है ।

यथार्थ में ग्रामदानी गाँवो में भी समय-समय पर मूल्यों की टकराहट, आपसी व्यवहार में कटुता व शान्ति भंग होने के अवसर आते रहते हैं । परन्तु सिद्धान्त के रूप में निजी सम्पत्ति के विलीनीकरण के पश्चात् संघर्षो के आर्थिक व सामाजिक आधार नगण्य ही रह जाते हैं । संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों में पूंजीवादी व्यवस्था व सोवियत रुस जैसे देशों में साम्यवादी व्यवस्था में भू-सम्पत्ति का विलुप्तीकरण के संदर्भ में ग्रामदानी गाँवों में अधिकांश व्यक्तियों की सम्पत्ति का संग्रहण व सामंजस्यपूर्ण निर्वहन एक विलक्षण प्रतिस्थापना प्रतीत होती है । परन्तु यह निर्विवाद है कि विनोबाजी के निर्देशन से बहुत से ग्रामदानी गाँवों में ये लक्षण काफी समय तक पाया जाता रहा है तथा उसकी प्रतिछाया प्रत्येक ग्रामदानी गाँवों में अनुभव किया जा सकता है ।

विद्यार्थियों को उपयुक्त सामग्री के अत्यन्त सावधानीपूर्वक पढ़ना चाहिये क्योंकि ग्रामदान एक असाधारण विश्वदर्शन को एक स्थानीय स्तर पर जीवन्त करने का प्रयास हैं । भारत में अभी भी 6 लाख से अधिक गाँव अवस्थित है जिनमें सभी में भू-सम्पत्ति का निजीकरण कई शताब्दियों से स्थापित है और गाँवों के इस विशाल समुद्र में ग्रामदानी गाँवों की

संख्या बहुत ही कम होने के कारण समाज वैज्ञानिकों का ध्यान इस ओर नहीं जा पाया है । इसका अध्ययन करके ही इस सामाजिक करिश्में की संरचना, सफलता व असफलताओं की तरफ ध्यान दिलाया जा सकेगा । निश्चय ही ग्रामदान सामाजिक समस्याओं का निवारण करने के लिए एक शक्तिशाली संस्था है । परन्तु यथार्थ में ग्रामदान बनाकर अपने आप को समर्पित किया था, उनकी पीढीयाँ गाँधी ये विनोबा के करिश्माई व्यक्तित्व के अभाव में कब तक जीवित रख पायेगी, यह एक यथार्थवादी प्रश्न है ।

लगभग 40 वर्श पूर्व नवोदित ग्रामदानी गाँधी का जन्म अवश्य करिश्माई था, परन्तु क्या इस करिश्मा को स्थाई बनाया जा सकता है । यह प्रश्न ग्रामदान की अवधारणा का एक प्रमुख घटक है जो कि भारत के जितने ग्रामदान के अंतर्गत गाँधी आ चुके वे सभी विलुप्त हो सकते हैं क्योंकि उनके चारों ओर अवस्थित व विकासमान व्यवस्थाएँ ग्रामदानी गाँवो के मूल लक्षणों से न केवल मेल नहीं खाती है बल्कि इन दोनों प्रकार के गाँवो की संरचना व संकल्पना में कई विभिन्नता स्पष्ट है, व ये विभिन्नताएँ विरोधाभासी भी मानी जा सकती है, और इन विरोधाभासों के अंतर्गत ग्रामदान का यथार्थ पर एक प्रश्न चिह स्वत: ही लग जाता है । इन विरोधाभासों का यथार्थ ग्रामदान का एक लक्षण ही माना जाना चाहिये ।

7.3 ग्रामदान की अवधारणा

ब्रिटिश राज के दौरान भूमि के मालिकाना हक की जो सैद्धान्तिक व अभ्यासात्मक परिपाटी शुरू हुई थी उसके संदर्भ में ग्रामदान-आन्दोलन का प्रार्दुभाव व सफलता स्वतंत्र भारत की एक क्रान्तिकारी उपलब्धी है । विनोबा भावे की इस अवधारणा को ग्रामीण भारत की अशिक्षित जनता को 50-60 के दशक में समझाना और उसके सामुदायिक लाभों की विवेचना करना एक दुष्कर कार्य था क्योंकि ग्रामीण भारत की जनता के अधिकांश मामले भूमि से सम्बन्धित थे तथा ब्रिटिश न्यायिक प्रक्रिया में उलझे हुए थे । यह विनोबा भावे का एक करिश्मा ही था कि ग्रामदान की संकल्पना ने मूर्त रूप लिया और इनके द्वारा सम्पूर्ण भारत की पदयात्रा के दौरान लाखों हैक्टेयर भूदानी भूमि में परिवर्तित व हजारों ग्रामदानी ग्रामों की स्थापना हुई ।

आचार्य विनोबा भावे द्वारा 20 वीं शताब्दी के 5० के दशक में "सबै भूमि गोपाल की" का अलख जगाकर गाँव-गाँव में भूमि मालिकों द्वार अपनी भू-सम्पत्ति से कुछ भाग दान करने का आन्दोलन भू-दान के नाम से जाना जाता है । तत्कालीन समय में विनोबा भावे की इस अलख का सर्वाधिक प्रभाव भारत के प्रत्येक गाँव में विस्मयकारी प्रभाव पड़ा तथा लाखों हैक्टेयर भूमि भूदान में संग्रहित हुई । इस आन्दोलन और विनोबा भावे सम्बन्धित साहित्य में भूदान पर सामग्री उपलब्ध है परन्तु ग्रामदान जो कि भूदान आन्दोलन का एक परिवर्धित अवधारणा है इसके सम्बन्ध में वर्णन एवं विश्लेषण बहुत कम मात्रा में उपलब्ध हैं । ग्रामदान एक ऐसी संरचना है जिसके अन्तर्गत अलग - अलग भूमि के टुकडे संग्रहीत नहीं करके यह प्रयास किया गया कि एक ग्राम के सम्पूर्ण निवासी अपनी सारी भूमि को ग्रामदानी घोषित कर दें, तथा कुछ शर्ते पूरी करने के पश्चात् वह गाँव ग्रामदानी घोषित हो सकते है ।

भूदान आन्दोलन के प्रादुर्भाव से ही कई शिकायतें मिली कि कुछ भूमि मालिकों ने अपनी पड़त / बंजर भूमि विनोबा जी के करिश्माई व्यक्तित्व से प्रभावित होकर भूदान की तथा इस प्रकार की भूदानी भूमि का छोटे-छोटे टुकडो में अलग-अलग क्षेत्रों में अवस्थित होना भूदान आन्दोलन के समक्ष एक बहुत बड़ी चुनौती बना व बहुत मात्रा में आज भी भूदानी भूमि के चकबन्दी की समस्या का भी उचित हल नहीं किया जा सका है ।

ग्रामदान की अवधारणा भूदान की प्रक्रिया से ज्यादा करिश्माई है । क्योंकि ग्रामदान निर्माण की प्रक्रिया में प्राय: विशेष गाँव के सभी भू-मालिकों द्वारा अपनी भूमि का स्वामित्व त्याग दिया जाता है तथा उस गाँव की प्राय: सभी भूमि ग्रामदानी घोषित होकर एक नवीन प्रकार की सम्पत्ति का रूप धारण कर लेती है जिसका स्वामित्व उस गाँव के सभी निवासियों का हो जाता है । इस प्रकार जहाँ भूदान में प्रत्येक भू-मालिक अपनी सम्पत्ति का एक अंश भूदान आन्दोलन को समर्पित कर देता है वही दूसरी और एक गाँव तब ही ग्रामदानी बनता है जब उस गाँव के सभी निवासी स्वेच्छापूर्वक भूमिहीनता की स्थितियों में आना स्वीकार कर लेते हैं ।

यद्यपि ग्रामदान एक करिश्माई / क्रान्तिकारी परिवर्तन की प्रक्रिया है परन्तु फिर भी किन्हीं कारणों से इसको पर्याप्त विशेषताओं व सफलताओं का विशेष प्रचार प्रसार नहीं हो सका है गाँधी दर्शन की स्थापना में स्वावलम्बन व स्वशासन प्रमुख है तथा साथ ही उस दर्शन में मनुश्य द्वारा अपनी इच्छाओं को न्यूनतम करने पर भी बहुत अधिक बल दिया जाता है । इस दृष्टिकोण से ग्रामदान का अध्ययन करके गाँधी दर्शन की प्रासंगिकता को और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है ।

प्रसिद्ध समाजषास्त्री मेक्सवेबर के करिश्मा सम्बन्धी विचारों का अध्ययन सर्वप्रथम राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रो.टी.के..उमन ने करके ग्रामदान की गाँधी दर्शन से संबंधित राजस्थान के 6 गाँवो का एक सैद्धान्तिक विश्लेषण प्रस्तुत किया, उनके अनुसार सामुदायिक स्वशासन की यह गाँधीवादी विचारधारा (ग्रामदान) एक श्रेष्ठ एकमात्र कल्पना नहीं है बल्कि गाँधी के विचारों का मूर्त रुप है जो एक ग्रामदानी ग्राम की आर्थिक स्वशासन समृद्धि की प्रक्रिया को जीवित करती है । प्रो. उमन का यह 1964 का षोध सर्वेक्षण सर्वप्रथम 1965 में प्रकाशित हुआ परन्तु शोक के साथ कहना पड़ रहा है कि इसके बाद पिछले 35-40 वर्शो से किसी भी राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय समाज वैज्ञानिक ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण शोध नहीं किया ।

ग्रामदान की अवधारणा को विकसित करने की आष्यकता आज गाँधीजी के देहावसान के लगभग 60 वर्ष बाद भी बनी हुई है, यद्यपि अब राज्य सरकारों ने इन ग्रामदानी गाँवों की विस्मयकारी स्वायतत्ता को वैधानिक सुरक्षा प्रदान कर रखी है परन्तु ग्रामदान का मूल करिश्माई स्वरूप अभी तक पूर्णरूप से प्रकाश में नही आ सका है और कई ग्रामदानी गाँव कई दशकों के मूल ग्रामदानी अस्तित्व को खोते जा रहे है । अतएव आज सभी ग्रामदानी भारत के शुभ चिन्तकों को ग्रामदान की व्यवस्था / अवस्था का अध्ययन करना बहुत आवश्यक है । गाँधीवादी विचारधारा के अध्ययनकर्ताओं को तो ग्रामदानी गाँवों की समस्याओं व सफलताओं का आकलन करना और भी आवष्यक हो जाता है । क्योंकि सैद्धान्तिक रूप से ग्रामदानी गाँवों में तनाव व टकराव की लपटें स्वाभाविक रूप से ज्यादा ज्वलनशील नहीं हो पाती है क्योंकि ग्रामदानी ग्राम

के निवासियों का भूसम्पत्ति मे कोई स्वामित्व नहीं रहता है जो कि पिछले कई शताब्दियों से प्रत्येक भारतीय ग्राम में प्रतिष्ठा व प्रतिद्वन्द्वता का आधार बन गया है ।

7.4 भारत में ग्रामदान

मई, 1952 में ग्रामदान की कल्पना ने मूर्तरुप " मंगरोठ " में लिया जो भारत का पहला ग्रामदानी गाँव बना और इस ग्राम की समस्त भूमि स्वामित्व समस्त ग्रामवासियों का हो गया । विनोबा भावे ने इस समाज को "ग्राम समाज" माना । मंगरोठ के बाद बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, आसाम, पश्चिम बंगाल, केरल तथा राजस्थान में ग्रामदान आन्दोलन शुरू हुआ ।

मंगरोठ (उ.प्र.) व अन्य राज्यों में ग्रामदान प्रक्रिया शुरू होने के बाद, सर्व सेवा संघ के निमन्त्रण पर मैसूर राज्य में "येलवाल"' नाम के स्थान पर 21 -22 सितम्बर 1957 को ऐतिहासिक अखिल भारतीय ग्रामदान परिषद् हुई जिसमें तत्कालीन भारत के शीर्ष राजनीतिज्ञों, विद्वानों, विचारकों व विश्लेषकों ने भाग लिया। इस परिषद् में आचार्य विनोबा भावे ने ग्रामीण भारत की सामाजिक - आर्थिक समस्याओं के संदर्भ में भूमि की प्रबंध व्यवस्था को हल करने के अहिंसक आन्दोलन की आवष्यकता को विश्लेषित किया और इस परिषद् ने "ग्रामदान" आन्दोलन को श्रेष्ठ प्रक्रिया माना । परिशद् में उपस्थित तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू, गोविन्द बल्लभ पंत, मोराजी देसाई, गुलजारी लाल नन्दा, एस.के.डे., कामराज नाडार, ई.एम.एस. नम्बूद्रीपाद, भक्त वत्सलम, जयप्रकाश नारायण, श्रीमन्नारायण, आदि ने श्री विनोबा भावे के "ग्रामदान" आन्दोलन का स्वागत किया । "येलवाल", परिषद् में श्री विनोबा भावे ने चर्चा -परिचर्चा व विश्लेषण के लिए निम्न वक्तव्य प्रस्तुत किया -

1. यह आन्दोलन स्वप्रेरित भूमिदान से षुरु हुआ और विकसित होते-होते ग्रामदान के रुप में स्पश्ट हुआ ।
2. 3 हजार से ज्यादा गांव ग्रामवासियों ने समाज को दान कर दिये और जमीन पर से अपनी निजी मालकियत छोड़ दी ।
3. गाँवों में सहकारी जीवन का और समग्रतापूर्व आर्थिक विकास व सर्वागीण प्रगति ग्रामदान प्रक्रिया से सम्पन्न होगी ।
4. सम्पूर्ण भारतवर्ष में भूधारणा व भूप्रबंधन की समस्या हल होगी ।
5. यह एक अहिंसात्मक प्रक्रिया व उसका स्वरुप स्वप्रेरित होगा ।
6. आर्थिक समृद्धि के साथ-साथ सहयोग और स्वावलम्बन पर आधारित एक नये समाज की रचना होगी ।
7. सहकारी सामुदायिक आन्दोलन में और ग्रामदान आन्दोलन में घनिष्ठ सहयोग उत्पन्न होगा ।

येलवाल परिषद् के बाद श्री विनोबा भावे ने सम्पूर्ण भारत की पदयात्रा की और भारतीय गणतंत्र के सभी राज्यों में संकल्पित ग्रामदान आन्दोलन तूफान के रूप में प्रगति करने लगा । 17- 18 नवम्बर 1957 को तत्कालीन सामुदायिक विकास मंत्री श्री एस.के.डे तथा जयप्रकाश

नारायण ने ग्रामदान व सामुदायिक विकास आन्दोलन के समन्वय के लिए निम्न सुझाव निश्चित किये :

1. दोनों आन्दोलनों के उच्चतम कार्यकर्ताओं की एक विशेष कार्यशाला आयोजित की जाये।
2. सर्व सेवा संघ के कार्यकर्ता राज्य सरकारों द्वारा आयोजित कार्यशालाओं में भाग ले ।
3. सामुदायिक विकास कार्यक्रम मे लगे मुख्य कार्यकर्ताओं को ग्रामदान आन्दोलन का विशेष प्रशिक्षण दिया जाये ।
4. स्थानीय तथा अंग्रेजी भाशा में भूदान-ग्रामदान साहित्य उपलब्ध हो ।
5. क्षेत्रीय समस्याओं पर खण्ड स्तर पर विष्लेशण तैयार किया जाये ।

येलवाल परिषद् के समय व अगले 7 वर्शो में भारत में ग्रामदानी गाँवों की संख्या 1964 ई. में निम्न प्रकार हो गई ।

सुलभ ग्रामदान व ग्रामदान तूफान के अन्तर्गत सम्पूर्ण भारत वर्ष की पदयात्रा के दौरान श्री विनोबा भावे ने प्रखण्ड दान व जिलादान की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए इस बात पर जोर देना शुरू कर दिया कि जब सरकारी विकास योजनाएँ प्रखण्ड (ब्लाक स्तर) के आधार पर चलती है तब 30-40 या 50 ग्रामदान के स्थान पर एक पूरा प्रखण्ड दान होना चाहिए जिसमें विकास की प्रक्रिया मे और अधिक तीव्रता लाई जा सके और इसी दौरान श्री विनोबा भावे ने अनेक राज्यों में प्रखण्ड दान सम्पन्न कराया ।

7.5 राजस्थान में ग्रामदान

श्री विनोबा भावे के इन विचारों का "जमीन पर से व्यक्तिगत मालकियत का विसर्जन और गाव की कुल जमीन सारे गाँव की हो" मूर्त रूप राजस्थान में 11 फरवरी 1955 को नागौर के "गोरावा" गाँव के ग्रामदानी गाँव बनाने से शुरु हुआ जिसका श्रेय बद्रीप्रसाद स्वामी (तत्कालीन भूदान संयोजक) को जाता है । 1957 में राजस्थान में ग्रामदानी गाँवों की सख्या 11 हो गई । 1960 में राजस्थान ग्रामदान अधिनियम पारित होने के बाद यह संख्या बढ़कर 44 हुई । इसी क्रम में 1963 तक राज्य में 65 ग्रामदानी ग्राम घोषित हुए । जून 1966 तक ग्रामदान तूफान के पष्चात् राजस्थान में ग्रामदानी प्रक्रिया निम्न सारणी अनुसार सम्पन्न हुई ।

1. जयपुर जिले में चाकसू पंचायत समिति में जयप्रकाशपुरा 1957 में प्रथम तथा 1957 में दद पंचायत समिति का गाँव "आइदान का बास" प्रथम ग्रामदानी गाँव बना ।
2. सीकर जिले में व 1961 में नीम का जाना समिति गाँव "खाती का ढ़ाणी' प्रथम ग्रामदानी ग्राम' बना।
3. सिरोही जिले में रेवदर पंचायत समिति का गाँव "हाथल" 1960 में प्रथम ग्रामदानी गाँव बना ।
4. डूंगरपुर जिले में सागवाड़ा पंचायत समिति के 3 गाँव 1961 म ग्रामदानी घोषित हुए ।
5. नगौर जिले में मकराना पंचायत समिति में "गोरावा" ग्राम 1955 में प्रथम ग्रामदानी गाँव बना जो राजस्थान का भी प्रथम ग्रामदानी ग्राम घोषित हुआ ।

6. बांसवाडा जिले में 1961 में भूखिया प्रखण्ड का "बावडी" गाँव सर्वप्रथम ग्रामदानी घोषित हुआ ।
7. चित्तौड़गढ़ जिले में 1960 में गंगरार तहसील में 7 गाँव ग्रामदानी घोषित हुए ।

इस प्रकार ऊपर लिखित ग्रामों का ग्रामदानी इतिहास राजस्थान में सबसे लम्बा माना जा सकता है, तथा इस पाठ के विद्यार्थियों को यह प्रयास करना चाहिये कि इन ग्रामों में जाकर उनकी वर्तमान विकास व स्थितियों का अवलोकन करके गाँधीदी दर्शन की मूलभूत अवधारणाओं की व्यवहारिकता व उपयोगिता का आकलन करें ।

राजस्थान मे ग्रामदानी गाँवों की संख्या वर्तमान में 12 जिलों मे 204 ग्राम है । राजस्थान समग्र सेवा संघ तथा सर्वोदयी विचारकों ने विनोबा भावे के इस क्रान्तिकारी आन्दोलन को वर्तमान समय तक चला रखा है । राजस्थान में इस आन्दोलन के प्रमुख सर्वोदयी कार्यकर्ताओं में सर्व श्री गोकुल भाई भट्ट, भोगी लाल पंडया, मनमोहन चौधरी, सिद्धराज ढढ्ढा, पूर्णचन्द जैन, जवाहिर लाल जैन, यज्ञदत्त उपाध्याय, बद्रीप्रसाद स्वामी, जगन्नाथ कसारा, गोपाल हरी वर्मा, नाना जी कोठारी, उम्मेदजी राव, छीतरमल पुरोहित, सुन्दरलाल आजाद, राधाकृष्ण बजाज, रामेश्वर अग्रवाल, कालूराम, दुर्गा प्रसाद अग्रवाल, छीतरमल गोयल आदि प्रमुख है

7.6 राजस्थान में ग्रामदान अधिनियम - 1971 और ग्रामदान बोर्ड के कार्य

राजस्थान विधानसभा द्वारा राजस्थान ग्रामदान अधिनियम 3 अगस्त 1971 को सम्पूर्ण राज्य में प्रवृत्त कर दिया गया, तथा राजस्थान ग्रामदान अधिनियम - 1960 को निरस्त कर लिया गया । इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए पूर्व अवस्थित भू-दान बोर्ड को राजस्थान भू-दान, ग्रामदान बोर्ड के रुप में निर्दिष्ट कर लिया गया तथा उसके निम्नलिखित कर्त्तव्य घोषित किये गये -

1. ग्रामदान बोर्ड का राजस्थान मे ग्रामदान अभियान को प्रोन्नत करना और उसके प्रयोजनार्थ-
   (क) इस अधिनियम के लक्ष्यों तथा उद्देष्यों को क्रियान्वित करने के लिये कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना और ग्रामदान गॉवों में उन्हें समनुदिष्ट करना ।
   (ख) अपने कर्तव्यों के समुचित निर्वाह करने में ग्रामसभाओं मार्गदर्शन करना ।
   (ग) ग्रामदान गाँवो के विकास का अध्ययन करना तथा उसमें सामान्य अनुभव का मूल्यांकन करना और
   (घ) ग्रामदान गाँवो से संसक्त विधिक तथा अन्य औपचारिकताओं को शीघ्र पूरा करना ।
2. ग्रामदान बोर्ड ऐसे कर्तव्यों का भी पालन करेगा जो उसे इस अधिनियम के उपबन्दों के अधीन समनुदेशित किये जा सकेंगे ।

1971 के अधिनियिम के मूल्यों को ग्रामदान के रुप से स्वेच्छा अन्तरिक करने की प्रक्रिया निर्धारित कर दी गई है इसकी धारा 11 में किसी गाँव को ग्रामदान गाँव के रूप में घोषित करने की निम्न शर्ते निर्धारित है ।

गाँव की ग्रामदान गाँव के रूप में घोषणा

1. जहाँ कहीं गाँव में -

(क) झूमइयाँ, जिनके संबंध में धारा 8 की उप-धारा (1) के अधीन फाइल की गई घोषणाएँ पुष्ट कर दी गई हैं, का क्षेत्रफल उस गाँव में रहने वाले व्यक्तियों द्वारा धृत भूमियों के कुल क्षेत्रफल के इक्यावन प्रतिशत से कम नहीं है ।

(ख) ऐसे व्यक्तियों की संख्या जिनकी घोषणाएँ इस प्रकार पुष्ट कर दी गई हैं उस गाँव में भूमि धारण करने वाले और रहने वाले व्यक्तियों की कुल संख्या के पचहत्तर प्रतिशत से कम नहीं है ।

ऐसे व्यक्तियों की संख्या जिनके संबंध में धारा 8 और 9 के अधीन की गई घोशणाएँ पुष्ट कर दी गई हैं, उस गाँव में रहने वाले भूमिधारियों और परिवार के मुखिया जो भूमि धारण नहीं करते हैं, की संख्या के पचहत्तर प्रतिशत से कम नहीं है ।

तो सभापति समस्त ससंक्त कागज तथा अपनी राय कि वह गाँव ग्रामदान गाँव घोषित किया जाना है या नहीं के सबध में समस्त घोषणाएँ उस जिले, जिसमें वह गाँव स्थित है, के कलेक्टर को भेज देगा तथा कलेक्टर ऐसी जाँच, जैसी वह ठीक समझें, करने के पश्चात् विहित रीति में अधिसूचना द्वारा उस गाँव को उक्त अधिसूचना में विनिर्दिष्ट तारीख से ग्रामदान गाँव होना घोषित कर सकेगा ।

2. यदि कलेक्टर उस गाँव को ग्रामदान होना घोषित करने से इन्कार कर देता है तो सभापति ऐसे गाँव को ग्रामदान गाँव होना घोषित करने के लिए राज्य सरकार को अभ्यावेदन कर सकेगा, और राज्य सरकार, अपना समाधान कर लेने के पश्चात् कि उप-धारा (1) मे बताई गई शर्ते सारत: पूरी की जा चुकी हैं उस गाँव को ग्रामदान गाँव होना घोषित करने के लिए कलेक्टर को निर्देश दे सकेगी तथा राज्य सरकार का यथापूर्वोक्त रुप में समाधान न होने की दशा में, वह उस गाँव को ग्रामदान गाँव घोषित करने से इन्कार करते हुए आदेश जारी कर सकेगी और उपधारा (4) में अन्तर्विश्ट उपबन्ध, केवल कलेक्टर या राज्य सरकार के किसी गाँव को ग्रामदान गाँव घोषित करने से इन्कार करते हुए कोई विशिष्ट आदेश जारी होने पर ही प्रवृत्त होंगे ।

3. उपधारा (1) के अधीन प्रत्येक अधिसूचना की एक प्रति गाँव में प्रमुख स्थान पर सम्प्रदर्शित की जायेगी तथा ऐसे तहसीलदार, सब-डिविजनल ऑफिसर और कलेक्टर, जिनकी अधिकारिता के भीतर वह गाँव स्थित है, के कार्यालयों के नोटिस बोर्डो पर चिपकाई जायेगी और ऐसी अधिसूचना का सार विहित रीति से प्रकाशित भी किया जायेगा।

4. जहाँ किसी गाँव को ग्रामदान घोषित नहीं किया जाता है वही धारा 8 या धारा 9 के अधीन प्रत्येक घोषणा, इस बात के होते हुए भी कि वह पुश्ट कर दी गई थी, प्रभावहीन हो जायेगी ।

इसी धारा में यह स्पष्ट किया गया कि जब पूर्वोल्लेखित समस्त ससंक्त प्रारुप कलेक्टर को प्रेषित किये जायेंगे तथा वह जिस प्रकार भी ठीक समझे उस प्रकार ज्ञात करने के पश्चात् उक्त ग्रामदान घोषित कर सकता है।

7.7 ग्राम सभा

अध्याय-4 में किसी ग्राम को ग्रामदानी घोषित होने के पश्चात् उस ग्रामदानी के लिए ग्राम सभा का गठन, ग्राम सभा की प्रक्रिया व कार्यकाल, संगठन व कार्यविधि का निर्धारण किया गया है इस ग्राम सभा को निगमित करने का तथा इस अधिनियम के अन्तर्गत सभी प्रकार की सम्पत्तियों को अर्जित करने, धारण करने, प्रशासनिक करने की शक्ति होगी । प्रत्येक ग्राम सभा अपने स्वयं की कार्यपालिका समिति जिसमें कम से कम 5 सदस्य होंगे तथा कार्य समिति के सदस्य अपने आपको ग्राम सभा के रूप में जाना जाये । ग्राम सभा को एक अधिकारी के रूप में सचिव की नियुक्ति करने व हटाने का अधिकार होगा ।

अध्याय-5 में यह स्पष्ट किया गया है कि ग्रामदान में दान की गई सभी भूमियाँ ग्राम सभा में नीहित होगी तथा विभिन्न धाराओं मे प्राप्त समस्त भूमियों का एक भूमिपूल (Land Pool) बनाया जायेगा । इसी अधिनियम की धारा 26 के अनुसार ग्राम सभा भूमिपूल में से दान की गई भूमि का 19/20 प्रमाण उनके दानकर्ताओं को आवंटित कर सकेगा । तथा ग्राम सभा इस संबंध में बनाये गये किसी विनियमन के अनुसार भूमिहीन व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को वैयक्तिक कृषि के लिए भूमि आवंटित कर सकेगी ।

धारा 33 के अनुसार ग्राम सभा की अन्य शक्तियाँ निम्न प्रकार निश्चित की गई है :-

1. इस अधिनियम के उपबन्धों के अध्याधीन, ग्राम सभा ग्राम समुदाय और उसके सदस्यों के कल्याण के लिए समस्त क्रिया कलापों का जिम्मा लेगी और उससे आनुशंगित समस्त अन्य बातें करेगी ।
2. विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर विपरीत प्रभाव डाले बिना, ग्राम सभा
   - (क) सामुदायिक प्रयोजनों के लिए भूमि पृथक् रख सकेगी
   - (ख) भूमि सुधार कर सकेगी
   - (ग) खेती के तरीकों में सुधार करने और बंजर भूमियों को कृषि योग्य बनाने के उपाय कर सकेगी।
   - (घ) भूमि विनिमय द्वारा अथवा अन्यथा ग्रामदान गाँव में भूमियों का समेकन कर सकेगी ।
   - (ङ) ग्राम अभिलेख जिसमें ग्रामसभा के अधीन व्यक्तियों के कब्जे में, भूमियों का ब्यौरा देने वाला रजिस्टर सम्मिलित हैं, तैयार तथा संधारित कर सकेगी ।

(च) ग्रामदान गाँव के निवासियों के हित में कोई कृषि अथवा कृषि अथवा भूमि इतर उपक्रम का जिम्मा ले सकेगी ।

(छ) ग्रामसभा के सदस्यों को किसी प्रयोजन के लिए चाहे वह कृषि सम्बन्धी हो अथवा अन्यथा, उधार मंजूर कर सकेगी ।

(ज) वृद्धावस्था, निर्योग्यता अथवा अंगशैथिल्य से ग्रस्त व्यक्तियों अथवा गाँव के अनाथों को ऐसी सहायता दे सकेगी जो वह साध्य समझे ।

(झ) गाँव में अथवा गाँव में लगे हुए परिक्षेत्र में शान्ति बनाये रखने के लिए शान्ति बल अथवा शान्ति दल स्थापित कर सकेगी ।

(ञ) गाँव में अथवा गाँव में लगे हुए परिक्षेत्र में खाद्य में और जीवन की अन्य आवश्यकताओं में आत्मनिर्भरता के लिए सरकार का अथवा अन्य अधिकरणों का सहयोग और सहायता प्राप्त करने की स्कीमें तैयार कर सकेगी और उन्हें कार्यान्वित कर सकेगी ।

(ट) ग्राम उद्योग जिनमें, खादी, पशु प्रजनन आदि सम्मिलित हैं, के सम्पूर्ण विकास की स्कीमें तैयार कर सकेगी और उन्हें कार्यान्वित कर सकेगी ।

(ठ) गाँव में बेकारी की समाप्ति के लिए कदम उठा सकेगी ।

(ड) सामुदायिक प्रयोजनों के लिए गाँव में स्वेच्छिक अभिदान जुटा सकेगी ।

(ढ) ग्राम निधि के लेख संघारित कर सकेगी ।

(ण) अपने प्रभावाधीन ग्राम समुदाय के लिए आवासीय, शैक्षिक और चिकित्सकीय सहायता के लिए स्कीमें तैयार कर सकेगी और उन्हें कार्यान्वित कर सकेगी ।

(त) अपने सदस्यों को निजी ऋणों के बारे में समझौते के लिए प्रोत्साहित कर सकेगी।

(थ) ऐसे अन्य कष्त्यों को कर सकेगी जिन्हे करने के लिए उसे राज्य सरकार द्वारा शासकीय राज-पत्र में अधिसूचना द्वारा प्राधिकष्त किया जाये ।

अध्याय-6 में किसी भी भूमिदानकर्ता द्वारा ग्रामदान समुदाय के बाहर हो जाने की विधी का निर्धारण भी किया गया है । इस विधि के अनुसार किसी ग्रामदान गाँव के 50 प्रतिशत से अधिक व्यक्तियों द्वारा ग्रामदान से बाहर निकलने का प्रतिवेदन प्रस्तुत करने पर कलेक्टर, उपखण्ड अधिकारी द्वारा जाँच करने के पश्चात् वह यदि सन्तुष्ट हो जाता है कि ग्रामदान के 50 प्रतिशत व्यक्तियों ने ग्रामदान संविधान से बाहर होने का निश्चय कर लिया है तब उक्त ग्राम ग्रामदान नहीं रहेगा तथा इस ग्राम के किसान इस अधिनियम के द्वारा शामिल नही होगे ।

ग्रामदान अधिनियम 1971 व अन्य नियमों के अन्तर्गत ग्रामदानी ग्रामों के निर्माण व इस प्रक्रिया के लिए विभिन्न प्रकार के घोषणाओं सम्बन्धि विधि का विस्तृत अध्ययन करने के लिए प्रपत्रों (क,ख,ग- 1 तथा ग-2) का अध्ययन किया जा सकता है । यद्यपि ये प्रपत्र विधिक व प्रशासनिक महत्व अधिक रखते हैं, परन्तु गाँधीवादी विचारधारा के सभी व्यक्तियों को इनका ज्ञान आवश्यक है, क्योंकि ये प्रपत्र गाँधीवाद की संकल्पनाओं को मूर्तरूप देने के लिए प्रक्रियाओं

का पथ प्रदर्शन करती है । किसी प्रपत्र की पूर्ति करके व हस्तान्तरित करने पर कई शताब्दियों से ग्रामीण भू-सम्पत्ति के स्वामी अपनी भू-सम्पत्ति का सार्वजनिकीकरण कर सकते हैं तथा ग्रामदानी ग्रामों का निर्माण करते हैं ।

7.8 सारांश

ग्रामदान के सैद्धांतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन करने के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि भारत में ग्रामदानी गांवो की जीवन प्रकृति एवं पद्धति का सम्पूर्ण विवरण प्रस्तुत करना एक दुष्कर कार्य हैं । भूदान और ग्रामदान की अवधारणाओं के क्रियान्दयन में अनेक समस्याऐं उत्पन्न हुई है और वेश्वीकरण और विकास की नवीन परिस्थितियों में इस गाँधीवादी अवधारणा के समक्ष कई नवीन चुनौतियां विद्यमान है । भारत की मूल आर्थिक समस्याऐं यथा भू-संग्रहण एवं उनका भूमिहीनों के मध्य समता पूर्ण वितरण गाँधीवादी दर्शन पर आधारित ग्रामदान अथवा भूदान से काफी हद तक संभव हो सका है । ग्रामदान तथा भूदान गाँधी के विचारों और उनकी प्रांसगिकता के प्रति संवेदना जगाने का कार्य करते है । इस दृष्टि से ग्रामदान तथा ग्रामदानी गांवो की सम्पूर्ण व्यवस्था का अध्ययन महत्वपूर्ण और प्रासंगिक प्रतीत होता है ।

7.9 अभ्यास प्रश्न

1. भूदान तथा ग्रामदान से आप' क्या समझते है?
2. राजस्थान में ग्रामदान की स्थिति की समीक्षा कीजिए?
3. राजस्थान में ग्रामदानी ग्रामसभा की अवधारणा की समीक्षा कीजिए?

7.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ओम्मन, टी.के. : प्राब्लम्स ऑफ ग्रामदान: ए स्टडी इन राजस्थान, इकॉनोमिक वीकली, 1965
2. ओम्मन, टी.के. : ग्रामदान मूवमेन्ट इन इण्डिया, थॉमसन प्रेस, नई दिल्ली, 1972
3. ग्रामदान से ग्राम स्वराज्य (1999) राजस्थान ग्रामदान बोर्ड जयपुर
4. माथुर, पी.सी. : ग्रामसभा इन राजस्थान, कुरूक्षेत्र अक्टूबर 1999, नई दिल्ली

इकाई - 8

भारत में गांधीवादी शांति आन्दोलन

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 व्यवहार में गाँधी

8.3 गांधीवादी शांति आन्दोलन

8.3.1 चिपको आन्दोलन

83.1.1 ऐतिहासिक परिदृश्य

83.1.2 दार्शनिक आधारशिला

83.1.3 चिपको एवं सर्वोदय

8.3.2 'सेवा' आन्दोलन

8.3.2.1 दार्शनिक आधारशिला

8.3.2.2 लक्ष्य

8.3.2.3 उपलब्धियां

8.3.2.4 वैश्वीकरण की चुनौतियां

8.3.3 खादी आन्दोलन

8.3.3.1 पृष्ठभूमि

8.3.3.2 प्रोग्राम एवं उद्देश्य

8.3.3.3 उपलब्धियां एवं महत्व

8.3.4 भूदान-ग्रामदान आन्दोलन

8.3.4.1 दर्शन एवं लक्ष्य

8.3.4.2 उपलब्धियां एवं सीमाऐं

8.4 सारांश

8.5 अभ्यास प्रश्न

8.2 संदर्भ ग्रंथ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् भारत में संचालित किये जाने वाले विभिन्न गाँधीवादी शांति आन्दोलन के बारे में जान पायेंगे । इसमें

– आप चिपको आन्दोलन के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, दार्शनिक आधार और कार्यो के बारे में जान पायेंगे।

- आप सेवा आन्दोलन के दार्शनिक आधार, लक्ष्य, उपलब्धियॉ तथा चुनौतियों की जानकारी प्राप्त कर पायेंगे ।
- आप खादी आन्दोलन की पृष्ठभूमि, उद्देश्य, कार्य, उपलब्लिया तथा महत्व की जानकारी प्राप्त कर पायेंगे ।
- आप भूदान एवं ग्रामदान का अर्थ, लक्ष्य, उपलब्धिया, चुनौतिया एवं सीमाओं की जानकारी प्राप्त कर पायेंगे ।

8.1 प्रस्तावना

शान्ति आन्दोलन के बारें में बातचीत करने से पूर्व यह अपरिहार्य सा लगता है कि शान्ति की बात की जाए । शान्ति एक लचीला शब्द है । एक ऐसा शब्द है जिसका ओर छोर नहीं मालूम पड़ता । इसलिए इसके सही अर्थ को पता लगाना मुष्किल है । यह अलग अलग लोगों के लिए अलग अलग अर्थ रखता है तथा विभिन्न परिस्थितियों में इसके भिन्न-भिन्न अर्थ निकलते हैं । यह स्वास्थ्य की भांति है जिसको कि समग्रता मे समझ पाना निहायत ही मुष्किल कार्य है । तथापि इन सारी बातों को देखते हुए षान्ति की एक निष्चित परिभाशा न सिर्फ संभव नहीं बल्कि षायद आवष्यक भी नहीं है ।

शान्ति के स्वरूप को सामान्य तौर पर समझने हेतु एवं शान्ति आन्दोलन को विशेष रूप से समझने के लिए यद्यपि इसे परिभाषित करना अपरिहार्य हो जाता है । आधुनिक समय में जोहान गान्तुंग नामक वैज्ञानिक ने शान्ति पर महत्वपूर्ण कार्य किया है । वह गाँधी से बुरी तरह प्रभावित रहा है । उसने शान्ति के दो आयामों की चर्चा की है ।

एक, नकारात्मक शान्ति जिसका कि अर्थ है युद्ध एवं वास्तविक हिंसा की अनुपस्थिति एवं दूसरी, सकारात्मक शान्ति जिसका अर्थ है मानव समाज का एकीकरण । इस दूसरे आयाम को पुनर्परिभाषित करते हुए उसने शान्ति को भौतिक एवं संरचनात्मक हिंसा की अनुपस्थिति एवं मानव समाज के एकीकरण के साथ साथ मानव परिपूर्णता से जोड़ा । इस तरह से गान्तुंग शान्ति को ऐसी स्थिति के समान मानता है जहां पर कि अस्तित्व की आवश्यकताएं (यथा सुरक्षा, स्वतंत्रता कल्याण एवं अस्मिता) पूर्ण हो सके । गान्तुंग के अनुसार समाज में शान्ति को चार प्रकार के खतरे हैं यथा हिंसा, दमन, तंगहाली एवं अलगाव ।

एक मत के अनुसार, सभी संस्कृतियों एवं सभ्यताओं में तथा सभी काल में शान्ति के तीन विभिन्न अर्थों ने समानान्तर रूप से अपना महत्व दिखाया है । इन तीनों अर्थों को एक पिरामिड में व्यवस्थित किया जा सकता है । शान्ति की सबसे सामान्य स्थिति को पिरामिड की सबसे निचली पायदान पर रखा जा सकता है । यह शान्ति का सबसे संकीर्ण एवं नकारात्मक अर्थ है जिसके अनुसार शान्ति का अर्थ है परम्परागत या आण्विक, छोटे या बड़े युद्ध या इनकी सम्भावना की अनुपस्थिति । दूसरे स्तर पर, शान्ति पहली स्थिति से अधिक व्यापक एवं सकारात्मक है । जहां पर शान्ति का अर्थ प्रत्यक्ष हिंसा (तथा इनकी संभावना / आशंका) की अनुपस्थिति के साथ-साथ अप्रयत्यक्ष एवं संरचनात्मक हिंसा की अनुपस्थिति है । यह मत न सिर्फ आण्विक युद्ध की आशंका के खतरों को रेखांकित करता है बल्कि यह धीमी गति के युद्ध, जो गरीबी, भुखमरी ओर शोषण के रूप में विश्व के विभिन्न हिस्सों में चल रहे हैं, उनकी ओर

इषारा करता है । शान्ति का तीसरा अर्थ है जो कि इस पिरामिड के शीर्ष पर है । यह सबसे अधिक व्यापक एवं महत्वाकांक्षी है । इसे गाँधी जैसे दार्शनिक एवं नानक, बुद्ध तथा महावीर जैसे पैगम्बरों से जोड़ा गया है । इसके अनुसार शान्ति मानवीय मन की आंतरिक स्थिति है, जो व्यक्ति एवं समूह के शान्तिपूर्वक एवं अहिंसक व्यवहार के बाहरी पहलू एवं अभिव्यक्ति से अभिन्न रूप से जुड़ा है । पूर्वोत्य और पश्चिमी सभ्यताओं में, प्राग-औद्योगिक, औद्योगिक एवं उत्तर-औद्योगिक समाजों में इन तीनों ही छवियों ने समान रूप से अपना अस्तित्व बनाए रखा है और ये आज भी अलग अलग अंश में उपस्थित हैं । हां, ये जरूर है कि धनाढ्य देशों एवं समाजों में नकारात्मक शान्ति का आर्थिक महत्व दिखता है क्योंकि वहां व्यक्ति / समाज की सामान्य, भौतिक आवश्यकताएं पूरी हो चुकी होती हैं जबकि सकारात्मक शान्ति, विकासशील एवं पिछड़े समाजों में, जहां बाहरी एवं भीतरी शोषण अधिक तीक्ष्ण है, में अधिक महत्व रखती है ।

8.2 व्यवहार में गाँधी

गाँधी की बात की जाए तो हम यह पाते है कि गाँधी कोई आदर्शवादी विचारक नहीं थे । संसार के अनेकों दार्शनिकों के विपरीत, वे अपने प्रधान विचारों को व्यवहार में सफलता पूर्वक परिवर्तित कर लिया करते थें उनके लिए शब्दों एवं कर्म (कथनी व करनी) में कोई भी अंतर नहीं था । व्यवहार और आदर्श के मध्य उन्होने अद्भुत सामंजस्य बिठाया जोकि उनके व्यापक विश्व दर्शन से उत्पन्न होता है । उनके विचारों से कई आंदोलन प्रस्फुटित हुए । उनके जीवित रहते हुए एवं उनके गुजरने के पश्चात भी नये आंदोलन अभियान एवं नागरिक समाज मंच, उदय होकर उनके विचारों एवं आदर्शों की प्रांसगिकता को पुनर्स्थापित करते हैं ।

जैसा कि सर्वविदित है, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन महात्मा गांधी के नेतृत्व से अतरंगता से प्रभावित था । इस आंदोलन ने न सिर्फ भारतवर्ष को राजनीतिक स्वतंत्रता दिलवाई बल्कि 36 करोड़ भारतवासियो का उस समय, एवं आज 1 अरब से ऊपर लोगों को शान्ति के वृहत अर्थ (जिसमें न्याय, समता एवं सर्वकल्याण हो) के आधार पर नेतृत्व प्रदान किया । उन्होने अपना जीवन और कर्म पूर्णत: सत्य अंहिसा और नैतिक आदर्शों को समर्पित कर दिया था । उन्होने सत्याग्रह नामक विशुद्ध नई तकनीक को प्रयोग में लिया जो हिंसा के तौर-तरीकों एवं प्रयोग से दूर, सत्य और अहिंसा की पद्धतियों पर आधारित है ।

गाँधी के नेतृत्व की ये विशेषता थी कि वे किसी भी प्रतिरोध आंदोलन को न्याय एवं शान्ति के आंदोलन में परिवर्तित कर दिया करते थे, जिसमें विरोधियों एवं प्रतिद्वंदियों के प्रति संवदेना की उपस्थिति रहती । उनके अनुसार शान्ति अपने अर्थ में अनिवार्यत: सर्वोदय यानि "सभी का भला" समेटती है । ये केथन के 'सर्वोच्च संख्या के सर्वोच्च भले' से आगे की सोच थी ।

गाँधीवादी सोच ने शासन, प्रशासन, विकेन्द्रीकरण नीति, राजनीति में नैतिकता, शिक्षा, ग्रामीण एवं राष्ट्रीय विकास, आत्मनिर्भरता, स्वेच्छावाद, जाति व अस्पृश्यता जैसे क्षेत्रों में अभूतपूर्व योगदान दिया है । समूहों व आन्दोलनों में इसकी लोकप्रियता का कारण भी इसका प्रकृति एवं मानवीय क्रिया कलापों के मध्य सामंजस्य बैठना रहा है । राजनीतिक शक्ति एवं

आर्थिक उत्पादन के विकेन्द्रीकरण को आधार बनाकर एक शान्तिपूर्ण समाज की स्थापना ही इसका मूल ध्येय भी है ।

8.3 गाँधीवादी शान्ति आंदोलन

भारत में आज मुख्यत: दो प्रकार के शान्ति आंदोलन सक्रिय हैं : एक, वे स्वतंत्र, स्वायत्त आंदोलन जो प्रतिक्रियात्मक हैं और विकास के हमारे चुने हुए रास्ते के फलस्वरूप जो रूग्णता पैदा हुई है, उस कारण से सक्रिय हुए है जैसे- विद्यार्थी समूह, महिला संगठन, धार्मिक संस्थाऐं, पर्यावरण कार्यकर्ता, कलाकार, शिक्षाविद्, नागरिक अधिकार कार्यकर्ता एवं पत्रकार इत्यादि और वे आन्दोलन जो अहिंसावादी है, गाँधीवादी है व शान्ति एवं विकास के वैकल्पिक रास्ते पर आधारित हैं । इन दोनों ही धाराओं में ये सोच समान गंभीरता से व्याप्त है कि भारतीय पश्चिमी देशों में शान्ति के खतरों के जो कारण हैं, वे भारतीय लोगों पर बराबरी से लागू नहीं होते । भारत में शांति का सार्थक अर्थ केवल युद्ध की अनुपस्थिति नहीं हो सकती । यहां दैनिक जीवन में शांति अपनी सार्थकता एवं परिपूर्णता से तभी स्थापित हो सकेगी, जब आम आदमी को रोजी-रोटी, शोषण, दमन एवं अत्याचार से मुक्ति, अस्तित्व के संसाधनों तक पहुंच, सांस्कृतिक स्वायत्ता, एवं राज्य व शक्तिशाली की हिंसा से राहत मिले । इस प्रकार भारत में शान्ति आन्दोलन के आधार एवं परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से पश्चिम के शांति आन्दोलनों से सर्वथा भिन्न कहे जा सकते हैं । स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान व स्वतंत्रता पश्चात के कई आन्दोलनों पर गाँधीवादी प्रभाव देखने को मिलता है, निम्न आन्दोलनों के माध्यम से सत्याग्रह के गाँधीवादी दर्शन के तरीकों, लक्ष्यों, अनुरोधों, पहुँच और सफलता के विभिन्न पहलूओं का पता लगाया जा सकता है ।

8.3.1 चिपको आन्दोलन

पूरे भारतवर्ष में ग्रामीण जनता के लिए वन एक महत्वपूर्ण संसाधन है । इससे खाना, ईधन व चारा तो मिलता ही है इसके अलावा मिट्टी और पानी के संसाधनों को स्थिर करने में विशेषकर पहाड़ी, एवं पर्वतीय क्षेत्रों में ये महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है । परन्तु वाणिज्य एवं उद्योग के निरन्तर फैलाव से वन सिकुड़ने लगे हैं । इससे सामान्य ग्रामीण जनजीवन बुरी तरह से प्रभावित होने लगा है । अपनी आजीविका की रक्षा हेतु भारतीय ग्रामीणों ने सत्याग्रह जैसे अहिसंक प्रतिरोध के गांधीवादी तरीको को अपनाया है ।

1970 और 1980 के दशक में वनों के विनाश का ये प्रतिरोधी आन्दोलन व्यस्थित होकर पूरे देश में फैल गया । यह आन्दोलन 'चिपको' के नाम से प्रसिद्ध हुआ । ये मूलत: एक पर्यावरण आन्दोलन था जो उत्तरांचल के सुदूर क्षेत्र से पनपा । वहां के लोगों ने 'विकास' के एजेन्टों द्वारा पर्यावरण को लीलने के शड्यंत्र को समझते हुए अनेक प्रकार के प्रतिरोधी तकनीकों को विकसित किया जिन्हें सामान्य तौर पर चिपको नाम से जाना जाता है । 'चिपको' का शाब्दिक अर्थ है सीने से लगाना । संक्षेप में, चिपको एक प्रकार का विद्रोह था, उन बाहरी एजेन्सियों के विरूद्ध जो प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करके पहाड़ों के पारिस्थितिकी सन्तुलन को बिगाड़ने पर आमादा थे। जब इनके पेड़ काटे जाने लगे, तो गढ़वाल के लोग विरोध में उठ

खड़े हुए । इनके बचाव के लिए उन्होने एक नायाब तरीका निकाला-काटे जाने वाले पेड़ से वे चिपक जाया करते । इस तरह से उन्होने पेड़ों की जगह अपने को कटवा देने का साहस जुटाकर वनों की रक्षा की ठानी ।

पहाड़ों में वन आजीविका के मुख्य स्त्रोत होते हैं क्योंकि वहाँ खेती दुश्कर होती है । इस आंदोलन में स्थानीय स्वयंसेवी संस्था - दशोली ग्राम स्वराज्य संघ तथा क्षेत्र की महिलाओं की सक्रिय भागीदारी रही । आंदोलन से जुड़े मुख्य व्यक्तित्व श्री चंडी प्रसाद भट्ट के नेतृत्व में वनों में प्रवेश कर पेड़ों को घेर लिया जाता है और कटने से बचाया जाता है । कर्मशील, अनपढ़ महिलाओं को जंगल एवं वृक्षों के कटने के नुकसान का भली भांति ज्ञान था, इसलिए उन्होने आंदोलन को सक्रिय बनाने में भरपूर सहयोग दिया । इस प्रतिरोध आंदोलन ने देश के दूसरे भागों में अपने तरह के कई आंदोलनों को जन्म दिया । इस स्वत: प्रवर्तित प्रतिरोध ने, जिसने उतर प्रदेश के हिमालय में जन्म लिया, जल्दी ही आग की भांति उत्तर में हिमाचल, दक्षिण में कर्नाटक, पश्चिम में राजस्थान, पूर्व में बिहार एवं मध्य भारत में विन्ध्य में अपने पैर जमाने शुरू कर दिये । इस आंदोलन के फलस्वरूप पश्चिमी घाट और विन्ध्य में पेड़ों की कटाई जबरदस्त ढंग से रूक गई एवं इसने जनता की पारिस्थितिकीय आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील प्राकृतिक संसाधन नीति के निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण दबाव बनाया ।

8.3.1.1 ऐतिहासिक परिदृष्य

प्रकृति के निकट रहने वाले अधिकांश समुदाय इसकी रक्षा को कटिबद्ध रहते हैं । राजस्थान का विश्नोई सम्प्रदाय इन्हीं में से एक है कई वर्षों पूर्व राजस्थान के सुदूर पश्चिमी भाग में चिपको का असली रूप देखने को मिला था जब अमृता देवी नामक ग्रामीण विश्नोई महिला के नेतृत्व में 84 गांवों के कई लोगों ने पेड़ों की रक्षा हेतु अपने प्राणों की आहुति दे दी थी । जोधपुर के राजा को इसके कारण प्रदेश के संपूर्ण विश्नोई बाहुल्य गांवों में पेड़ों को नष्ट नहीं करने के कड़े निर्देश देने पड़े थे ।

8.3.1.2 दार्शनिक आधारशिला

ऐतिहासिक दार्शनिक एवं सांगठनिक तौर पर चिपको आंदोलन, परम्परागत गांधीवादी सत्याग्रह का विस्तार है । इसका विशेष महत्व इस बात में है कि इस आंदोलन का जन्म स्वतंत्र भारत में हुआ । पारिस्थितिकीय स्थायित्व संतुलन एवं न्याय पर आधारित विकास के गाँधीवादी दर्शन से लैस इस आंदोलन ने सहज भाव से उतर प्रदेश के पर्वतीय इलाको में महिला शक्ति एवं पर्यावरण चेतना को महत्वपूर्ण ढंग से आगे बढ़ाया, गांधीजी की दो यूरोपीय शिष्याओं (मीराबेन एवं सरलाबेन) का भी इस संघर्ष की धरोहर पर गहरी छाप रही है । उन्होनें पहाड़ों में गांधीवादी कार्यकर्ताओं की एक नई पौध को जन्म दिया, जिन्होने चिपको आंदोलन की आधारशिला रखी । चिपको आंदोलन एक प्रकार से क्षेत्र में की गई कई विकेंद्रित स्वायत्त स्थानीय पहल का नतीजा है । इसके नेता एवं कार्यकर्ता मुख्य तौर पर ग्रामीण महिला हैं जो अपने समुदाय एवं अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही हैं, पुरूषों का भी इसमें महत्वपूर्ण सहयोग एवं सक्रिय भागीदारी आवश्यक रूप से है ही । प्रमुख चिपको व्यक्तित्वों में गांधीवादी कार्यकर्ता

एवं विचारक सुंदरलाल बहुगुणा है 1981-1983 में 5000 कि.मी लम्बी हिमालय पद-यात्रा ने चिपको के संदेश को प्रचारित-प्रसारित किया । बहुगुणा ने नारा दिया "पर्यावरण ही स्थायी अर्थव्यवस्था है ।" इनके अलावा चण्डी प्रसाद भट्ट आंदोलन के शुरूआती दौर के सक्रिय कार्यकर्ता रहे, जिन्होंने स्थानीय हित के लिए वन सम्पदा के संरक्षण एवं अविच्छिन्न प्रयोग की आवश्यकता पर बल देते हुए स्थानीय उद्योग एवं उद्यमों का बढ़ावा दिलवाने का प्रयास किया । धूमसिंह नेगी ने बचनी देवी एवं अन्य महिलाओं के साथ मिलकर सर्वप्रथम पेड़ों से चिपक कर उनकी रक्षा की उन्होने नारा भी दिया जिसका अर्थ था वनों से हमें मिट्टी, पानी और शुद्ध हवा मिलती है यानि हमें जीवन मिलता है ।

8.3.1.3 चिपको एवं सर्वोदय

चिपको आंदोलन उत्तराखण्ड के लोगों की शांतिपूर्ण प्रतिरोध की अविरल परंपरा की ही समसामयिक अभिव्यक्ति है । उतर-स्वाधीनता काल में यहां के गाँधीवादी समर्थकों एवं कार्यकर्त्ताओं ने 1961 में उत्तराखण्ड सर्वोदय मंडल की स्थापना की । ये सर्वोदय आंदोलन चार मुख्य बिन्दुओं पर केन्द्रित रहा :

1. महिलाओं को संगठित करना
2. शराब खोरी के विरूद्ध संघर्ष
3. वन अधिकारों के लिए संघर्ष
4. स्थानीय, वन आधारित लघु उद्योगों की स्थापना

साठ एवं सत्तर के दशक में यह धारणा मजबूत होती जा रही थी कि वनों से लाभ उठाने की प्रवृत्ति एवं सोच की एक पारिस्थितिकीय सीमा होती है जिसका अनुमान अभी तक लगाया नहीं जा सका है । वनों के निरंतर कटाव से पर्यावरण पर खतरे बनने लगे जोकि महिलाओं के आम जीवन एवं स्वास्थ्य को नकारात्मक रूप से प्रभावित करने लगे । महिलाऐं ही मोटे तौर पर चारा इकटठा करना एवं पानी लाने का काम करती थीं । इसी प्रकार अन्य समस्याऐं भी पैर पसारने लगी थीं । वनों के संकट से निजात दिलाने हेतु शासन व नौकरशाही कितनी भी सक्षमता व संवेदनशीलता से कार्य क्यों न कर ले, सभ्यता की सहज प्रतिक्रिया का विकल्प नहीं हो सकते । आन्दोलन से जुड़े गांधीवादी कार्यकर्ता अपने जमीनी कार्यों में दक्षता हासिल कर परिपक्व होने लगे थे । चिपकों की सफलता के अनेको उदाहरण गढ़वाल के सामने हिमालय में आने लगे । अडवानी, अमरसर और बदियारगढ़ ऐसे ही कुछ नाम हैं । हालांकि वे यह भी महसूस करने लगे थे कि स्थानीय लघु उद्योगों के लिए वन उत्पाद की आपूर्ति का प्रश्न अब उतना महत्वपूर्ण नहीं रह गया था । इसका स्थान, पानी एवं चारा की आपूर्ति को सुनिश्चित करने के लिए वनों के संसाधन पर परिस्थितिक नियंत्रण की नई मांग ने ले लिया था ।

1990 के दशक में भारत में पर्यावरण चेतना नाटकीय ढंग से बढ़ी और इसके साथ ही साफ एवं स्वच्छ पर्यावरण की वकालत करने वाली व्यवस्थित लॉबीज की संख्या भी । परिणामस्वरूप, भारत सरकार ने प्रदूषण नियंत्रण के नए कानून भी बनाए यद्यपि इन्हें लागू

करने के प्रभावी तरीके मोटे तौर पर अनुपस्थित ही रहे । 'चिपको' के समर्थकों ने अगस्त 1994 में टिहरी के बांध के निर्माण का पुरजोर विरोध किया था । इसके निर्माण से पेड़ों के समूहिक कटाव एवं बाढ़ की भयानक स्थिति उत्पन्न हो सकती है । आज राज्य के अनेकों विधायकों एवं दलों का सम्मान चिपकों कार्यकर्ताओं एवं आन्दोलन को प्राप्त है । आज भी 'पेड़ को हृदय से लगाने वाले' सक्रिय हैं । अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी एक ही सिक्के के दो पहलू हैं । पर्यावरण और विकास में कोई अर्न्तविरोध नहीं है । वास्तव में, ये आन्दोलन इस बात में गहराई से विश्वास करता है कि पारिस्थितिकी रक्षण या पर्यावरण का बचाव विकास के रास्ते पर ही जाता है, भले ही आम धारणा इसके विपरीत हो । चिपको का ये दार्शनिक एवं अस्तित्व वादी पहलू गांधीवादी दर्शन से सार्थक रूप से प्रभावित है, और इसलिए व्यवहार में गाँधी का एक अद्भुत उदाहरण है ।

8.3.2 'सेवा' आन्दोलन

'सेवा' यानि SEWA (Self-employed Women Association) जिसका अर्थ है स्वनियोजित महिला संघ, 'सेवा' एक श्रमिक संघ है जो 1972 में पंजीकृत हुई । यह गुजरात की स्वनियोजित महिला मजदूरों का संगठन है । इसकी सदस्यता लगभग सात लाख से अधिक है । ये महिलाएं अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के ग्रामीण और शहरी कार्य क्षेत्रों से जुड़ी हुई है । ये महिलाएं अपनी आजीविका छोटे मोटे धंधे करके या मजदूरी करके प्राप्त करती है । उद्योग के संगठित क्षेत्र के श्रमिकों की भाँति इन्हें नियमित व वैतनिक रोजगार मुहैया नहीं होता ।

'सेवा' की स्थापना 1920 में अनुसुईया साराभाई नामक महिला द्वारा हुई । टैक्सटाइल लेबर एसोसिएशन (TLA) नाम भारत के सबसे पुराने एवं सबसे बड़े कपड़ा मजदूर संघ को इसका मूल संघ माना जाता है ।

'सेवा' एक ही समय में एक संगठन तथा एक आन्दोलन दोनों ही है । एक आन्दोलन के रूप में यह तीन विभिन्न आन्दोलनों का संगम है । श्रमिक आन्दोलन, सहकारी आन्दोलन और महिला आन्दोलन । पर इसके इसके साथ ही यह स्वनियोजित मजदूरों का भी आन्दोलन है । महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण के आन्दोलन के रूप में यह एक अनूठी मिसाल है । अपने ही आन्दोलन के माध्यम से महिलाऐं सबल एवं दृष्टिगोचर होती है, एवं समाज को उनके आर्थिक एवं सामाजिक योगदान की पहचान बनती है ।

8.3.2.1 दार्शनिक आधारशिला

सामाजिक परिवर्तन के लिए संगठित 'सेवा' की गरीब, दुर्बल, स्वनियोजित महिलाओं का मार्गदर्शक एवं प्रेरणास्रोत गाँधीवादी दर्शन ही है । गांधी के सत्य, अहिंसा, सर्वधर्म और खादी के सिद्धान्तों का इसमें अनुकरण किया गया है । महात्मा गांधी ने 1917 में कपड़ा मजदूरों की एक हड़ताल को अहमदाबाद में सफल नेतृत्व प्रदान किया था । उनका मानना था कि मजदूरों में चेतना जागृत करने से सकारात्मक संगठित बल की रचनात्मक सर्जना सम्भव थी, एकता और व्यक्तित्व को विकसित करके नियोक्ता या राज्य की निरंकुशता से बचा जा सकता था,

इस बल का विकास, श्रमिक के पारिवारिक व कार्यस्थल के सभी पहलुओं को समेटने वाले श्रमिक संघ संगठन से सम्भव हो सकता था ।

8.3.2.2 लक्ष्य

'सेवा' के मुख्य उद्देश्य महिला मजदूरों को पूर्व रोजगार / व्यवसाय दिलाना है । पूर्ण रोजगार का अर्थ है । वह रोजगार जिससे मजदूरों को कार्य सुरक्षा, आय सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा (स्वास्थ्य, बाल सुरक्षा, एवं आश्रय) मिले ।

8.3.2.3 उपलब्धियां

1. जनचेतना व जागृति अभियान

ये अभियान न सिर्फ आवश्यक मुद्दों को विशिष्टता प्रदान करते हैं बल्कि 'सेवा' आन्दोलन को भी बल देते हैं । महिलाऐं व स्थानीय अगुआ ऐसे मुद्दों की पहचान करते हैं जो बड़ी संख्या में मजदूरों और जनता को प्रभावित करते हैं, और इन मुद्दों को जनचेतना व जागृति अभियान के केन्द्र में रखा जाता है । इस अभियान के अन्तर्गत मोहल्ला या गांव के स्तर पर लगातार बैंठकें रखी जाती हैं जिनमें जनता का अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व रखा जाता है, जैसे कि ग्राम सभा, ये अभियान मुद्दों के अनुसार, सारे क्षेत्रों एवं धंधों / व्यवसायों को छूते हैं । पिछले वर्षों में कई अभियानों ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की जबकि कुछ को लम्बे संघर्ष करने पड़े । पर कुल मिला कर, इन अभियानों में बड़ी संख्या में श्रमिकों / मजदूरों ने भाग लिया है, अपने सृजनात्मक सुझाव व विचार दिए हैं, तथा इन्हें मजबूती प्रदान की है, कई बड़े नेताओं का जन्म इन अभियानों के माध्यम से हुआ है, कुछ मुख्य अभियान इस प्रकार से हैं :-

गृह आधारित श्रमिक अभियान, विक्रेता अभियान, वन श्रमिक अभियान, निर्माण श्रमिक अभियान, जल अभियान, खाद्य सुरक्षा अभियान, बाल सुरक्षा अधिकार अभियान, दाइयों को मान्यता देने हेतु अभियान, न्यूनतम मजदूरी अभियान।

2. 'सेवा' आन्दोलन

राज्य, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहकारी संघ एवं अन्य संघ के माध्यम से ये संचालित हो रहे है।

सहकारी समूह- सामाजिक, बचत व ऋण समूह ।

राज्य संघ

गुजरात राज्य महिला 'सेवा' सहकारी संघ, बनासकान्था ड्वाक्टा महिला 'सेवा' संस्था, कच्छ शिल्प संस्था, खेड़ा जिला महिला बचत व साख संस्था, अहमदाबाद जिला सब्जी उत्पादक व विक्रेता संस्था, सुखी महिला मंडल, सांबर कान्था, खेड़ा मण्डल, सुरेन्द्रनगर जिला महिला व बाल विकास मंडल, श्री महिला 'सेवा' अनुसूया ट्रस्ट, गुजरात महिला गश्ह 'सेवा' ट्रस्ट, 'सेवा' ग्राम महिला हाट, गुजरात शिशु संघ, 'सेवा' बीमा, इत्यादि ।

राष्ट्रीय संघ

राष्ट्रीय श्रमिक केन्द्र, नेशनल एलायंस ऑफ स्ट्रीट वेन्डर्स ऑफ इन्डिया (NASVI), और

अन्तर्राष्ट्रीय संघ

होमनेट, स्ट्रीटनेट, दक्षिण अफ्रीका में 'सेवा' आन्दोलन यमन में 'सेवा' व तुर्की में 'सेवा'

8.3.2.4 वैश्वीकरण की चुनौतियां

भारतीय अर्थव्यवस्था एवं समाज पर भूमंडलीकरण का विशिष्ट प्रभाव विभिन्न तरीकों से देखने को मिल रहा है, 'सेवा' एक तरह से भारतीय असंगठित अर्थव्यवस्था का ही एक लघु रूप है 'सेवा' के सदस्यों के जीवन में आते हुए बदलाव का अध्ययन करके राष्ट्रव्यापी स्तर पर नीति । निर्माण में महत्वपूर्ण संशोधन किए जा सकते है. 'सेवा' ने इस परिवर्तित समय में गाँधीवादी सिद्धान्तों को कहीं अधिक प्रासंगिक एवं प्रभावशाली पाया है, इस परीक्षा की घड़ी में गांधीदर्शन प्रेरणा के स्रोत के रूप में खरा उतर रहा है, जो गाँधीवादी सिद्धान्तों की प्रमाणिकता सिद्ध करते हैं ।

इस तरह से 'सेवा' एक ऐसी संस्था का जीता-जागता उदाहरण है, जो समानता, न्याय जैसे गांधीवादी मूल्यों को आगे बढ़ाते हुए शान्ति को उस के सकारात्मक स्वरूप में प्रसारित कर रहा है जो कि भारत जैसे विकास शील राष्ट्र के लिए अति आवश्यक भी है । इसमें कोई दो राय नहीं कि 'सेवा' को भारत में गांधीवादी शांति आंदोलन के एक प्रभावशाली स्तम्भ के रूप में देखा जाना चाहिए ।

8.3.3 खादी आन्दोलन

खादी, जिसे खद्दर के नाम से सामान्यत: जाना जाता है, आज की पीढी के लिए सम्भवत: बीते दिनो का एक पुराना वस्त्र है । उनकी कल्पना शक्ति को यह उतना नहीं छूता जितना उन पीढियों को जिन्होने ब्रिटिश साम्राज्य से स्वतंत्रता संग्राम के दौरान लोहा लिया । भारतीय स्वतन्त्रता से पूर्व यह आर्थिक स्वतंत्रता आत्मनिर्भरता व भारतीय एकता का प्रतीक था । खादी आन्दोलन भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का एक अभिन्न व महत्वपूर्ण अंग था । गाँधी जी के हाथों में यह एक सशक्त शस्त्र के रूप में सिद्ध हुआ, जिसने भारतीय भूमि से औपनिवेशक ताकतों को बाहर खदेड़ा । गांधीवादी चिंतन से प्रभावित महत्वपूर्ण शान्ति आंदोलनों में खादी आंदोलन उन शुरुआती आंदोलनों में से है जिन्हे गाँधी ने खुद सींचा ।

8.3.3.1 पृष्ठभूमि

औद्योगिक क्रांति ने कपड़ा मिलों में बिजली करघा पैदा कर दिया था और बिजली करघों ने भारतीय वस्त्र मिलों को सुखा के रख दिया । कानून द्वारा पारित ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति ने भारत में उत्पादित सूत का इंग्लैण्ड को सस्ती दरों पर निर्यात एवं ब्रिटिश मिलों के कपडों का भारतीय बाजार में प्रवेश तथा स्थानीय लोगों द्वारा खरीदा जाना, आवश्यक बना दिया । लाखों की संख्या में भारतीय बुनकर तथा जुलाहे अपना काम खो बैठे । हाथ से बना एवं बुना हुआ कपड़ा जो भारत की शान था, मृतप्राय: हो गया और इसके साथ ही भारतीय वस्त्र से जुड़े बहुमूल्य परम्परागत ज्ञान के भंडार का भी अंत होने लगा ।

8.3.3.2 आन्दोलन के कार्यक्रम एवं उद्देश्य

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में गाँधीजी ने खादी को एक नये ब्राण्ड, नये दर्शन और नये कार्यक्रम के साथ पुनआविष्कार किया ।

भारतीय खादी का सामान्य अर्थ है हाथ से बुना हुआ सूती कपड़ा । वैसे खादी का कच्चा माल सूती, रेशमी या ऊनी हो सकता है जिसे चरखे पर कातकर बुना जाता है । अपने देश के लाखों नागरिकों को विदेशी सामान के बहिश्कार, स्वदेशी खादी कपड़े के उपयोग एवं चरखा कातने की प्रेरणा देकर वे न सिर्फ भारतीय विरासत एवं हस्तकला में खोऐ हुए गर्व को पुर्नस्थापित कर रहे थे बल्कि औपनिवेषिक शोषण के खिलाफ वातावरण तैयार कर रहे थे । खादी एक सामाजिक आर्थिक वक्तव्य भी था । लाखों ग्रामीण दस्तकार, कारीगरों एवं शिल्पकारों को रोजगार देने के साथ-साथ उनका यह कार्यक्रम संपत्ति के समान वितरण, विकेन्द्रीकरण एवं शोषण को हटाने की तरफ लक्षित था । गाँधी जी के इस आह्वान से असंख्य भारतीय, जिसमें बुद्धिजीवी वर्ग, मध्यम वर्ग, सामान्य व्यक्ति, गरीबी रेखा से नीचे ग्रामीण जनता शामिल हैं, प्रभावित हुए और चरखा चलाने को प्रेरित हुए । खादी की लहर समूचे देश में दौड़ गई । 1921 में प्रथम खादी निर्माण केन्द्र का उद्घाटन हुआ और लाखों चरखों के चलने के साथ भारतीय खादी का पुनर्जन्म हुआ ।

8.3.3.3 उपलब्धियां एवं महत्व

खादी आंदोलन ने न सिर्फ स्वदेशी एजेंडे को आगे बढ़ाया बल्कि रोजगार भी पैदा किए । गाँधी जी जनता द्वारा उत्पादन चाहते थे न कि जनता के लिये उत्पादन (फैक्ट्रियों द्वारा) । वे लोगों मे स्वयं की उत्पादन की संभावना के प्रति जागृति पैदा करना चाहते थे, जो आर्थिक सरंचना पर नियंत्रण करने में सहायक हो सकता था । उनका मानना था कि स्वदेशी के बिना स्वराज खोखला था । अगर स्वदेशी स्वराज की जान था तो खादी स्वदेशी की जान! खादी हाथ से बने कपड़े से कहीं अधिक था । ये स्वराज तथा राष्ट्रीय स्वाधीनता का सूचक था ।

खादी आंदोलन अपने दृष्टिकोण में, विशिष्ट रूप से, अहिंसा पर आधारित था । लेखक गोल्डस्टन के अनुसार इस आंदोलन से किसी भी कानून का प्रत्यक्ष रूप से उल्लंघन नहीं हो रहा था, पर ब्रिटिश राज अपनी ताकत शनै: शनै: खोता जा रहा था ।

आज खादी वैश्वीकरण के दौर में तथा नव उपनिवेशवाद की मार के आगे फिर से अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा है । खादी भावुकता के आधार पर जीवित नहीं रह सकेगा । आज के युग में इसे जीवित रहने के लिए प्रतिस्पर्धी बनना होगा । फैशन डिजायनर की पसन्द बनने के पश्चात् ही इसकी भारतीयता इसकी विशिष्टता बन पायेगा ।

खादी आंदोलन को, नयी पीढ़ियों को खादी के सही अर्थों से अवगत कराना आवश्यक है । सरकार द्वारा खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग की स्थापना एवं उसका व्यवस्थित संचालन इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम साबित हो रहा है । इ.एफ. शुमां, के "छोटा सुन्दर है" की तर्ज पर खादी गाँधी के सपनों के भारत की धुरी बन चुका है व पुन: उस स्थिति में आने में सक्षम है । आज की पीढ़ियो के समक्ष उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमंडलीकरण (L.P.G) की

चुनौतियों से लड़ने का भी यह एक सशक्त माध्यम है । इस लड़ाई के माध्यम से वे गांधी की धरोहर को एक सच्ची श्रद्धांजलि भी दे सके ने ।

8.3.4 भूदान और ग्रामदान आन्दोलन

आजादी मिलने के बाद भारतीय नेताओं ने गाँधी के सिद्धान्तों को परित्याग करने में अधिक समय नहीं लिया। अहिंसा का स्थान भारत की सशस्त्र सेनाओं ने ले लिया। भारी एवं बड़े उद्योगों को 'आधुनिक भारत के मन्दिर' की संज्ञा दी गई, स्वतंत्र भारत के नेतृत्व ने गाँधी के सपनों का भारत था। जो स्वायत्त, आत्मनिर्भर गांवों के विकेन्द्रित समाज का भारत था, का पूर्ण तिरस्कार कर दिया। पश्चिम के अंधानुकरण के फलस्वरूप भारतीय नेतृत्व एक शक्तिशाली, केन्द्रीय शासन एवं औद्योगिक अर्थव्यवस्था की पुरजोर वकालत में लग गया।

परन्तु भारत में सभी की सोच ऐसी हो, ये नहीं था, सभी ने गांधी को नहीं भुला दिया। गांधी के "रचनात्मक कार्यकर्ता", विकास विशेषज्ञ और समुदाय आयोजकों ने विभिन्न माध्यमों से, जो गांधी के स्वयं द्वारा स्थापित हुए थे, उनके दर्शन के भारत को साकार करने का बीड़ा उठाया । गांधी की ही भांति, उनके शिष्य विनोबा ये मानते थे कि भारत के समाज के पतन एवं इसके निष्क्रिय होने का मुख्य कारण इसके समाज के हिस्सों में गहरी असमानता है । विनोबा के अनुसार भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् जब स्वराज का लक्ष्य प्राप्त हो चुका था, गांधीवादी शक्तियों का लक्ष्य अब ऐसा समाज होना चाहिए जो 'सर्वोदय' को समर्पित हो । 'सर्वोदय' का अर्थ है- 'सभी का कल्याण' ।

भूदान और ग्रामदान, वास्तव में, सर्वोदय के दर्शन के ही व्यावहारिक प्रयोजन है। इन्हें संकलित रूप में 'व्यवहार में न्यासिता' कहा जा सकता है । भूदान और ग्रामदान से ही जुड़े कई अन्य कार्यक्रम भी थे, जिनमें कुछ मुख्य इस प्रकार से हैं ।

सम्पत्ति दान, श्रम दान, शान्ति सेना, सर्वोदय पात्र एवं जीवन दान।

8.3.4.1 दर्शन एवं लक्ष्य

विनोबा ने सर्वप्रथम, इस अभूतपूर्व एवं असाधारण आन्दोलन की शुरूआत की, जो भूदान आन्दोलन कहलाया । तत्पश्चात ग्रामदान आंदोलन का भी पटाक्षेप उन्हीं के हाथों हुआ । लगभग 20 वर्ष तक वे भारतवर्ष में भ्रमण करते रहे। उनके प्रभाव से जमींदारों एवं भूस्वामियों ने गरीब व जरूरतमंदों में चालीस लाख एकड़ भूमि दान की । अप्रेल 18, 1951 को शुरू हुए आन्दोलन ने पूरे विश्व के मानचित्र पर भारत को केन्द्र में खड़ा कर दिया। प्रसिद्ध व ख्याति से दूर विनोबा ने न्यायप्रिय एवं समतामूलक समाज के निर्माण के लिए अपना अभियान जारी रखा। 1954 के पश्चात् विनोबा ने भूटान के स्थान पर ग्रामदान का अभियान तेज कर दिया. ये नई अवधारणा नहीं थी । अगर भूदान के माध्यम से जनता को अहिंसक क्रांति के लिए तैयार किया जा रहा था, तो विनोबा के लिए ग्राम दान ही अपने आप में क्रांति थी ।

ग्रामदान भूदान से अधिक क्रांतिकारी प्रोग्राम था। एक ग्रामदानी गांव में सारी भूमि का सामूहिक प्रोग्राम था। एक ग्रामदानी गांव में सारी भूमि का सामूहिक स्वामित्व कानूनी तौर पर

पूरे गांव का होता था, परन्तु वे आवश्यकतानुसार हर परिवार को आवंटित कर दी जाती । चूंकि परिवार भूमि को स्वयं बेच नहीं सकते थे, किराये पर नहीं दे सकते थे या गिरवी नहीं रख सकते थे इसलिये वे 'अपनी' भूमि से कभी 'बेदखल' नहीं हो सकते थे - जैसा कि सामान्यत: भूमि सुधार कार्यक्रम के समय मिली भूमि गरीबों के संकट के समय बेचनी पड़ जाती थी ।

गांव के मसलों के लिए गांव के वयस्क सदस्यों की एक ग्राम समिति बनाई जाती थी जो सर्वसम्मति से निर्णयों पर पहुंचती थी यानि हर व्यक्ति की सहमति से ही कोई निर्णय हो पाता था । ऐसा इसलिए किया गया ताकि सभी का सहयोग बना रहे एवं दूसरों की कीमत पर किसी व्यक्ति को लाभ की स्थिति न बने ।

विनोबा का मानना था कि समान भू-स्वामित्व एवं सहकारी निर्णय-निर्माण से आवश्यक एकता को प्राप्त किया जा सकता था । एक बार ये प्राप्त हो जाने पर "जनता की शक्ति" द्वारा समाज में वांछित परिवर्तन संभव हो सकते थे ।

8.3.4.2 उपलब्धियां एवं सीमाऐं

सरकारी आकड़ों के अनुसार 1970 तक लगभग 1,60,000 गांव ग्रामदानी घोशित हो चुके थे । पर शीघ्र ही ये दिखने लगा था कि ग्रामदान (भूदान इसमें बाद में शामिल सा ही माना जा सकता है) को घोषणाऐं जितनी सहजता से होती थी, उन्हें व्यावहारिक तौर पर ग्रामदानी बनाना आसान नहीं था ।1970 की शुरुआत तक बहुत से गांवों का भू-स्वामित्व ग्राम समिति को नहीं सौंपा जा सका था । जल्द ही ग्रामदान एक आंदोलन के रूप में समाप्त सा हो गया ।

फिर भी, ग्रामदान आंदोलन की उपलब्धियों को कम नहीं आंका जा सकता । भूमि सुधार कानून से जो प्राप्त किया जा सका था उससे कहीं अधिक इस आंदोलन ने कर दिखाया था । इसकी विशेषता यह भी थी कि ये सारा अहिसंक एवं शांतिपूर्ण ढंग से संपादित हुआ था । इस आंदोलन ने बहुत सारे ऐसे ग्रामदानी केन्द्र बना दिये थे, जहां इसका प्रभाव लम्बे समय तक रहा था व जहां गाँधीवादी कार्यकर्ता लम्बे विकास के कार्यक्रमों को चलाने हेतु बस भी गये । ये केन्द्र आज भारतीय गाँधीवादी शांति आंदोलन के ऊर्जा-स्त्रोत है । यहां गाँधीवादी कार्यकर्ता सक्रिय ढंग से गाँधीवादी तरीकों से सामुदायिक कार्यक्रम चला रहे हैं व अन्याय के विरूद्ध अहिंसक अभियान छेड़े हुए हैं । विचारों के फैलाव के साथ-साथ वास्तविक परिवर्तन से लोगों के विचारों पर सकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है ।

भारत की मूल आर्थिक समस्याओं यथा भू-संग्रहण एवं उनका भूमिहीनों के मध्य समतापूर्ण वितरण गाँधीवादी विचारों से किया जा पाना इस आंदोलन द्वारा संभव हो सका । इस प्रकार गाँधी के विचारों को पुनर्जीवित करने में यह आंदोलन सफल रहा । इसने कई तरह से भारतीय एवं विदेशियों के मन में, गाँधी के विचारों व उनकी प्रासंगिकता के प्रति संवेदना जगाने का कार्य भी किया ।

8.4 सारांश

इस प्रकार हमने यह देखा कि गाँधी दर्शन भारतीय जन जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त होते हुए कई प्रकार के शांति आन्दोलनों को जन्म देता है जिनको वर्णन ऊपर किया गया है, उनके अलावा कई अन्य प्रकार के शांति आन्दोलन यथा पंचायती राज आंदोलन, नशाबंदी आन्दोलन, आदिवासी आन्दोलन भी उल्लेखनीय है जो भारत में उपस्थित रहे हैं। ये सभी अलग अलग एवं सामूहिक रूप से शांति की स्थिति पैदा करके उसे बनाते एवं पोषित करते हैं, और इसलिए शांति आंदोलन के नाम से जाने जाते हैं ।

8.5 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधीवादी शांति आंदोलन से आप क्या समझते है?
2. भारत के शांति आंदोलनों की चर्चा कीजिए ।
3. चिपको आन्दोलन व खादी आंदोलन की उपलब्धियों एवं सीमाओं का उल्लेख कीजिए ।
4. भूदान, ग्रामदान आंदोलन व 'सेवा' आंदोलन की प्रासंगिकता पर निबन्ध लिखिए ।
5. शांति आन्दोलनों के ऐतिहासिक परिदृश्य को समझ सकेंगे ।
6. गाँधीवादी शांति आन्दोलनों को समझ सकेंगे ।
7. गाँधीवादी शांति आन्दोलनों की दार्शनिक आधारशिला की व्याख्या कर सकेंगे ।
8. गाँधीवादी शांति आन्दोलनों की चुनौतियों, लक्ष्यों व उपलब्धियों को समझ सकेंगे ।

8.6 संदर्भ ग्रंथ

1. मणिवन्नन, आर., "एन इन्ट्रोडक्शन टू द पीस मूवमेंट्स इन इण्डिया" गाँधी मार्ग, गाँधी पीस फाउन्डेशन, नई दिल्ली, अप्रेल जून 1986 ।
2. उम्मन, टी.के. प्रोटेस्ट एण्ड चैंज : स्टडीज इन सोशल मूवमेंट्स, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1990 ।
3. बरोज़, राबेर्ट जे., द स्ट्रेटजी ऑफ नॉन वायलेन्ट डिफेन्स : अ गांधियन अप्रोच, स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ एन वाय प्रेस, अल्बानी, 1996 ।

इकाई - 9

गाँधी - आश्रम

इकाई की रूपरेखा

9.0 प्रस्तावना

9.1 उद्देश्य

9.2 आश्रम की प्रेरणा एवं उद्देश्य

9.3 फोनिक्स आश्रम

9.4 टॉलस्टाय आश्रम

9.5 सत्याग्रह आश्रम

9.6 साबरमती आश्रम

9.7 आश्रम का सविनय अवज्ञा आन्दोलन में योगदान

9.8 सेवाग्राम

9.9 सारांश

9.10 अभ्यास प्रश्न

9.11 संदर्भ ग्रंथ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप.

- गांधी द्वारा कौन से आश्रम कब और कहीं स्थापित किए गए थे इसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- इन आश्रमों के उद्देश्य तथा संचालन के बारे में जान सकेंगे ।
- श्रेष्ठ व्यक्तित्व निर्माण तथा आदर्श समाज की स्थापना के सन्दर्भ में इनकी भूमिका को समझ सकेंगे ।
- स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए इनके द्वारा प्रदान किए गए योगदान का आंकलन कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

महात्मा गांधी ने अपने सक्रिय राजनीतिक जीवन में ऐसे आश्रमों की स्थापना की जहाँ उन्होंने अपने दर्शन को व्यावहारिक रूप प्रदान करने या उन्हें परीक्षण करने का प्रयास किया । जहाँ दक्षिण अफ्रीका में गाँधी ने 'फिनिक्स एवं टॉल्सटाय फार्म' की स्थापना की वहीं भारत में उन्होंने साबरमती आश्रम, सत्याग्रह आश्रम और विनोबा भावे के माध्यम से सेवाग्राम की स्थापना की थी । इन आश्रमों के माध्यम से गांधीजी आदर्श समाज की स्थापना के लिए ऐसे कर्मठ व्यक्तियों का निर्माण करना चाहते थे जो निस्वार्थ रूप से अपनी सेवायें प्रदान कर सकें । आश्रम से जुड़े ऐसे व्यक्तियों को सत्य, अहिंसा, स्वावलम्बन, स्वदेषी सत्याग्रह इत्यादि के

सन्दर्भ में प्रशिक्षण प्रदान करने का प्रयास किया गया । उन्हें सादगी, शारीरिक श्रम, चर्खा चलाना तथा अनेक रचनात्मक कार्यक्रम के सन्दर्भ में शिक्षा एवं प्रशिक्षण दिया गया । भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन तथा स्वतंत्र भारत में गाँधीवादी उद्देश्यों को साकार करने में इन आश्रम ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है ।

9.2 आश्रम की प्रेरणा एवं उद्देश्य

गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम ऐसी प्रयोगशालायें थी जहां वे और उनके सहयोगी जीवन-पद्धति के एक विकल्प के रूप में अहिंसा के साथ प्रयोग करते थे । आश्रम उनके विभिन्न आन्दोलनों को संचालित करने वाले सदस्यों के लिए आवश्यक अनुशासन एवं चेतना विकसित करने के साथ-साथ आर्थिक एवं नैतिक समर्थन भी उपलब्ध करवाते थे । गाँधीजी का विश्वास था कि पारस्परिकता, सादगी तथा कठोर परिश्रम पर आधारित आश्रम-जीवन एक ऐसे संयमवाद को विकसित करेगा जो समाज-सुधार के लिए उपयोगी सिद्ध होगा । उन्हें आश्रमों को स्थापित करने की प्रेरणा प्राचीन भारतीय गुरूकुलों, तपोवनों, दक्षिण-अफ्रीकी ईसाई ट्रेपिस्ट-संघों, स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशनों तथा गोखले के भारत सेवक-समाज से मिली थी । इस दिशा में वे हेनरी थोरो से भी अत्यधिक प्रभावित थे । गाँधीजी सत्य एवं अहिंसा पर आधारित एक ऐसी स्वच्छ एवं निष्पक्ष सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक-व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे जिसमें व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास कर सके । उनका मानना था कि ऐसी व्यवस्था की स्थापना की दिशा में प्रयास करने हेतु कुछ ऐसे व्यक्ति तैयार करने होंगे जो सामान्य व्यक्तियों को तैयार कर एक आदर्श-समाज की स्थापना करने में सहायक हो सके । गांधीजी ने ऐसे व्यक्तियों को तैयार करने के लिए एक औपचारिक प्रशिक्षणालय की स्थापना की दिशा में सोचा । भारतीय इतिहास, परम्पराओं एवं संस्कृति के अनुरूप ऐसे प्रशिक्षणालय को "आश्रम" के नाम से अभिहित करने का निर्णय लिया गया । आश्रम-व्यवस्था के माध्यम से गांधी कुछ लोगों को सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, स्वावलम्बी आदि के लिए तैयार करने हेतु औपचारिक प्रशिक्षण देने और ऐसे व्यक्ति प्रशिक्षण प्राप्त कर समाज के लोगों को इस दिशा की ओर प्रेरित व अग्रसर करने का उद्देश्य रखते थे ।

आश्रम व्यवस्था की स्थापना, आश्रम का संगठन, आश्रम में प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम एवं कार्यक्रम का निर्धारण, उनका समय-समय पर मूल्यांकन गांधीजी की प्रशासन एवं प्रबन्ध विज्ञान में रूचि, कौशल एवं परिज्ञान का परिचय देती है । आश्रम एक प्रकार से गांधी की प्रयोगशाला थी और आश्रमवासी उनके यंत्र ।

गांधीजी द्वारा स्थापित आश्रम-व्यवस्था का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर हम पायेंगे कि ये आश्रम "वसुधैव कुटुम्बकम" के सिद्धान्त पर आधारित हैं तथा इन आश्रमों में ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, जाति-प्रजाति आदि के लिए कोई स्थान नहीं था । आश्रम के जीवन का सार था-

"जात पांत पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई ।"

गाँधीजी एक संयुक्त परिवार के सदस्य थे और अपनी माता पुतली बाई के विचारों से अत्यंत प्रभावित थे । उनकी आश्रम सम्बन्धी व्यवस्था में उनकी माता का प्रभाव स्पष्टत: देखा जा सकता है यथा प्रार्थना, उपवास, एकादषी, प्रदोश-व्रत आदि, अल्पाहार, शाकाहार तथा ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन भी आश्रमवासियों के अनिवार्य व्रतों में से था ।

गाँधी द्वारा स्थापित "आश्रम" निःसंदेह पहले दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह से तथा बाद में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े हुए थे । गाँधीजी का विश्वास था कि समाज की सेवा का अर्थ "आत्मदर्शन" है और आश्रमवासियों का यह प्रमुख उद्देश्य था ।

गाँधीजी ने दक्षिणी अफ्रीका तथा भारत में आश्रम के द्वारा सत्याग्रहियों को प्रशिक्षण देकर भावी आन्दोलन में भाग लेने हेतु तैयार किया तथा सविनय अवज्ञा आन्दोलन को इससे निर्णयकारी नैतिक बल प्राप्त हुआ ।

गाँधीजी ने बचपन से ही आश्रम जैसे झाँकी अपने संयुक्त परिवार (पोरबन्दर) में देखी थी और उस सामुदायिक जीवन से गाँधीजी ने यह पाठ सीखा कि "हमें न केवल मनुष्यता के लिए जीना है परन्तु हमें मनुष्यता में जीना है ।" (Living not only for mankind but also living in mankind) गाँधीजी ने आश्रमों को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित किया । सभी आश्रमवासी एक परिवार के सदस्य की भांति वहाँ रहते थे अथवा आश्रम एक परिवार की भांति था । सभी आश्रमवासी यहां तक बच्चे भी कुछ कार्य करते थे । आश्रम में नौकर या सेवक नहीं रखे जाते थे।

कहा जाता है कि जहां सन्त रहते हैं वहीं आश्रम होता है, पर ऐसी बात नहीं है । सन्त तो पर्वत की गुफाओं में, एकान्त कुटियाओं में और खुले जगंलों में भी रहते हैं, लेकिन जहां पर संत के साधक अपनी साधना अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु करते हैं उसे भी आश्रम कहते हैं । आश्रम के अपने उद्देश्यों के साथ कुछ नियम भी होते हैं । इसी भावना से ओत-प्रोत दिखाई देते हैं गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम । गाँधीजी के अनुसार आश्रम का अर्थ सामूहिक धार्मिक जीवन से था और गाँधाजी के अनुसार आश्रम उनके स्वभाव में ही था ।

आश्रम स्थापना के पीछे गाँधीजी की भावना यही थी कि व्यक्ति स्वयं को पहचाने तथा सम्पूर्ण समाज को अपना ही परिवार समझे । प्रेम, अहिंसा, सत्य समानता एवं इन सबसे बढ़कर मानवता की भावना का विकास करें । उनकी मान्यता थी कि सभी प्राणी एक ईश्वर की संतान है, न कोई उच्च है न कोई निम्न, ईश्वर के लिए सभी प्राणी समान है, फिर मानव-मानव में भेद कैसा

9.3 फोनिक्स आश्रम

जब गाँधीजी सन् 1895 में दक्षिण-अफ्रीका आये तब वे न महात्मा थे न ही नेता तथा दक्षिण अफ्रीका के बारे में भी उन्हें तब तक कोई विशेष जानकारी नहीं थी । किन्तु दक्षिण-अफ्रीका की समस्याओं के सम्बन्ध में संघर्ष करते-करते उन्होंने अपने आपको दो दशकों के लम्बे प्रवास-काल में एक धनाढ्य वकील से एक सफल जनसेवक नेता बना लिया । गाँधीजी में सामुदायिक-जीवन बिताने का प्रयोग करने की अभिलाशा प्रारम्भ से ही विद्यमान थी । सन्

1903 के आसपास गाँधीजी के चारों ओर ऐसे लोग एकत्रित होने लगे थे जो उनकी योजनानुसार सहकारी-जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार थे । सन् 1903 में गाँधीजी ने "इण्डियन ओपिनियन" (Indian Opinion) के माध्यम से भारतीय समुदाय की सेवा करने तथा उसे संगठित करने का निर्णय लिया । जोहन्सबर्ग के पास प्लेग फैल जाने के कारण उन्हें रस्किन की पुस्तक "अनटू दिस लास्ट" में उल्लिखित रूपरेखा के आधार पर एक साम्यवादी-कृषि-समुदाय स्थापित करने का विचार आया । उन्होंने डरबन पहुंचने पर "इण्डियन ओपिनियन" को सहकारी आधार पर चलाने का निर्णय लिया और प्रेस तथा उसके कर्मचारियों के लिए एक कृषि-फार्म खरीदा । कर्मचारियों को प्रतिमाह अग्रिम वेतन दिया जाता था तथा वर्ष के अन्त में बचे हुए सम्पूर्ण लाभ को उनमें ही वितरित कर दिया जाता था । गाँधीजी ने इस क्रान्तिकारी योजना में सभी कर्मचारियों को सम्मानित किया और एक ओर "इण्डियन ओपिनियन" को प्रकाशित करने का खर्च कम किया तो दूसरी ओर कर्मचारियों के जीवन में गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास किया । नेटाल की उस सुन्दर भूमि को "गार्डन कॉलोनी" का नाम दिया गया जहां यूरोपीय एवं भारतीय कर्मचारी भाईचारे की भावना से रहते थे तथा एक दूसरे की सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभावित थे । प्रेस के सह-स्वामी "व्यावहारिक" को यह योजना पसन्द नहीं आई और उसने अपना हिस्सा (Share) गांधीजी को बेच दिया । इसके बाद डरबन से चौदह मील दूर फोनिक्स रेल्वे स्टेशन से अढाई मील दूर पीजंग नदी के किनारे एक सौ एकड़ भूमि खरीदी गई । इसके लिए गाँधीजी द्वारा प्रारम्भ में एक हजार पौण्ड तथा बाद में पांच हजार पौण्ड निवेश किये गये । उस स्थान को "फोनिक्स" नाम इस नये समुदाय के प्रयोगात्मक स्वरूप को देखते हुए दिया गया था । एक पौराणिक दन्तकथा है कि "फौनिक्स" पक्षी बार बार मरकर जीवित हो जाता है अर्थात् वह कभी नहीं मरता । गांधीजी भी अपने इस प्रयोग को इतिहास में अमर कर देना चाहते थे ।

सन् 1904 में अक्टूबर एवं नवम्बर माह में "इण्डियन-ओपिनियन" प्रेस को डरबन से फानिक्स में स्थानान्तरित करने का निर्णय लिया गया । फोनिक्स में भवन-निर्माण की सामग्री प्रदान की गई । कुछ ने टीन की चद्दरें तथा भवन-निर्माण की सामग्री प्रदान की । कुछ भारतीय कारीगरों तथा बढ़इयों, जिन्होंने गाँधीजी के साथ "बोअर युद्ध" में काम किया था, की सहायता से एक महीने के भीतर ही प्रेस के लिए भवन तैयार कर दिया गया । सांपों तथा जंगली घास से भरे सुनसान प्रदेश में यह कार्य अत्यन्त दुष्कर था । गाँधीजी कलात्मकता के बजाय कठोर संयम पर अधिक जोर देते थे।

डरबन से फोनिक्स तक भारी प्रेस मशीनों को ले जाने में तीन नदियों तथा उबड़-खाबड़ रास्ते के कारण कठिनाई हुई । उन्हें सोलह बैलों द्वारा खींचकर फोनिक्स तक पहुंचाया गया । बैस्ट नामक व्यक्ति ने तेल का इंजन लगाकर बिजली की आवश्यकता को पूरा किया क्योंकि उसके अभाव में चार आदमी मिलकर छपाई मशीन का हाथों से पहिया घूमाने के लिए आवश्यक थे । धीरे-धीरे समाचार पत्र के स्वरूप में भी सुधार किया गया । गाँधीजी उन लोगों से भी काम ले लेते थे जो थक चुके हों अथवा जिन्हें उस काम के सम्पादन का दायित्व नहीं सौंपा गया हो । बैस्ट ईश्वर से प्रार्थना करता था और सभी व्यक्ति इससे काफी प्रेरित होते थे । सम्पूर्ण

फोनिक्स आश्रम में सहयोग का ऐसा वातावरण बना कि अब समाचार-पत्र स्वालम्बन के आधार पर नियमित रूप से छपने लगा । भाड़े के व्यक्तियों तथा पशुओं से सहायता कभी-कभी ही ली जाती थी । यद्यपि अन्य स्त्रोतों तथा गाँधीजी की वकालत के पारिश्रमिक से होने वाली आय सन् 1909 तक कम पड़ने लगी फिर भी यह निर्णय लिया गया कि "इण्डियन-ओपिनियन" कम से कम एक पृष्ठ का तो छपता ही रहेगा । फोनिक्स आश्रम पर भी आन्तरिक दबाव बढ़ता चला गया ।

बन्दी-सत्याग्रहियों के बच्चों को भी वहां रखा गया जिनके कारण आश्रम-वासियों पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ बढ़ता चला गया । इस अवसर पर गाँधीजी ने ऐसे संघर्ष काल को अपनी आध्यात्मिक शक्ति तथा सेवा करने का उपयुक्त अवसर मानने का आह्वान किया । उनके अनुसार फोनिक्स न केवल अपने जीवन तथा समाचार पत्र के स्तर को सुधारने का अवसर ही था अपितु समाचार-पत्र के माध्यम से शिक्षा-प्रसार तथा जनहित से सम्बन्धित कार्यों के सम्पादन का भी अच्छा स्थान था । वे लोगों को आपस में झगड़ा न करने तथा उपलब्ध साधनों के दुरूपयोग न करने का परामर्श देते थे । जहां तक हो सके लोगों को अपने प्रयासों से आश्रम की आर्थिक स्थिति को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए ।

सत्याग्रह आन्दोलन में व्यस्त रहने तथा लन्दन में जाकर भारतीयों के हितों के लिए कार्य करने के कारण गाँधीजी आश्रम व्यवस्था पर अधिक ध्यान नहीं दे पाये । अत: उन्होंने पद से सम्बन्धित कार्य-भार अपने एक निकट सहयोगी मगनलाल गाँधी को सौंपा । गाँधी के अभाव में आश्रम अपना पूर्ववत् कार्य सम्पादन में सक्षम नहीं हो सका क्योंकि मूलत: आश्रमवासियों का आधार गाँधीजी के प्रति निष्ठा तथा भारतीय हितों के प्रति लगाव था, न कि प्रत्येक के लिए स्थान प्रदान करना । फिर भी एक समुदाय के रूप में फोनिक्स-आश्रम चलता रहा और उसने धीरे-धीरे एक छोटी बस्ती का स्वरूप धारण कर लिया । वहां रहने के लिए कुछ और जमीन खरीदी गई तथा कुछ नये मकानों का निर्माण किया गया । जॉन कोर्डिस ने वाष्प-स्नानागार का भी निर्माण किया । फोनिक्स आश्रम में विस्थापितों की संख्या निरंतर बढ़ती गई । गाँधीजी ने कस्तूरबा गाँधी तथा अपने भतीजे गोकुलदास को लम्बे समय तक वहां रखा । जोहान्सबर्ग पहुंचकर गाँधीजी ने पोलक को रस्किन की पुस्तक "अनटु दिस लास्ट" का उन पर पड़े प्रभाव के बारे में बताया । पोलक भी इससे बड़ा प्रभावित हुआ और इसके परिणामस्वरूप वह भी गाँधीजी की योजना में खुशी-खुशी शामिल हो गया । पोलक ने "ट्रान्सवाल क्रिटिक" के उप सम्पादक के पद को त्याग दिया और वह "इण्डियन ओपिनियन" के लिए कार्य करने लगा । पोलक बैस्ट के साथ उसके बंगले में रहने लगा और दोनों ब्रह्मचर्यत्व का पालन करते हुए अपना भोजन स्वयं पकाते थे और सादा जीवन व्यतीत करते थे । गाँधीजी के प्रभाव के अन्तर्गत दोनों का अविवाहित जीवन बदल गया । पोलक आराम और सामाजिक जीवन बिताने लगा तथा गाँधीजी ने उसे अपनी वकालत में सहायता देने हेतु बुला लिया । गाँधीजी ने ही दोनों को विवाह करने का परामर्श दिया था ।

बैस्ट की पत्नी श्रीमती पाईवेल (गांधीजी उसे ग्रेनी कह कर पुकारते थे) आश्रम की महिलाओं को सिलाई-बुनाई सिखाती थी । वही उनको संगीत आदि का भी अनौपचारिक शिक्षण

प्रदान करती थी । पोलक का विवाह सबके लिए अनुकरणीय हो गया और भारतीय आश्रम-वासी भारत से अपने परिवारों को बुलाने लगे । फोनिक्स आश्रम शनै: शनै: एक छोटे गाँव का स्वरूप धारण करता चला गया । उसमें निवास करने वाले परिवारों की संख्या बढ़ती चली गई । उस समय तक गांधीजी ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण पूर्णत: पुष्ट एवं विकसित नहीं कर पाये थे किन्तु सादगी एवं आत्मनिर्भरता पर उनका विश्वास सदैव बढ़ता चला गया । उन्होंने अपने स्वयं के ऊपर होने वाले व्यय को कम करने का प्रयास शुरू किया । वे अपने कपड़े स्वयं धोते थे । स्वयं ही अपने सिर के बाल काटते थे । जोहन्सबर्ग तक वे पैदल आते और पैदल ही जाते थे । अपना काम अपने हाथों से करना फोनिक्स आश्रम का प्रमुख सिद्धान्त था । आटा-पीसने के लिए हाथों से चलाई जाने वाली चक्की खरीदी गई । इस कार्य में आश्रम में रहने वाले बच्चों को भी कभी-कभी शामिल किया जाता था । इसे बच्चों की खेलकूद की एक प्रक्रिया का हिस्सा ही बना दिया गया था । प्रत्येक व्यक्ति को शौचालय भी साफ करने का दायित्व दिया गया था । कुल मिलाकर गाँधीजी की दृष्टि से अभी चरित्र निर्माण की प्रक्रिया ही चल रही थी । फोनिक्स की यह कहानी मुख्यत: गाँधीजी के एक सफल बेरिस्टर, सार्वजनिक कार्यकर्त्ता तथा भारतीय समुदाय के प्रवक्ता बन जाने से सम्बन्ध रखती है । वे "इण्डियन ओपिनियन" के छपने के लिए अधिकांश विषय-सामग्री को तो उपलब्ध करवाते ही थे साथ ही अपने पास से प्रतिवर्ष चार पांच हजार पौण्ड वित्तीय सहायता भी प्रदान करते थे । इस दौरान एक वकील तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में उनकी प्रतिष्ठा मे अत्यधिक वृद्धि हुई । इसी समय पाश्चात्य लोगों में भी उनका प्रभाव निरन्तर बढ़ता चला गया । इसी के फलस्वरूप एक जर्मन यहूदी वास्तुकार हर्मन केलनबाख तथा एक पादरी जोसफडाक ने अपना सर्वस्व गाँधीजी को सौंप दिया और गाँधीजी के साथ रहने लगे । इनके साथ गाँधीजी भगवद्गीता, ईसा के उपदेशों, मेटलैण्ड तथा टॉलस्टाय के उपदेशों पर लम्बी-लम्बी बहस करते थे । गाँधीजी अपनी सेवाओं के बदले में दी गई अनेक कीमती भेंटों को कस्तूरबा के घोर विरोध के बावजूद भी समुदाय को समर्पित कर देते थे ।

गाँधीजी के जीवनी लेखकों ने यह आरोप लगाया है कि फोनिक्स आश्रम सत्तावादी (Authoritarian) रीति से चलाया जाता था और एक सामन्त की भांति गाँधीजी ही उस समाचार-पत्र एवं कृषि-फार्म के स्वामी थे । किन्तु इस आलोचना से सहमत होना कठिन है क्योंकि गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्ति का उनके सहयोगियों पर बहुत प्रभाव था और वे आश्रम में नैतिक परामर्श तथा अनुनय के माध्यम से ही अपने साथियों का दिल जीत लेते थे । उनका आश्रम में सदैव कठोर संयम एवं कायिक श्रम, अहिंसा, अपरिग्रह तथा समभाव पर जोर रहता था । गाँधीजी पर लगाये गये इस आरोप से भी सहमत नहीं हैं कि उन्होंने अपनी पत्नी तथा पुत्रों की अवहेलना की । उनके द्वारा अपने आपको तथा अपने निर्णयों को सही मानने की प्रवृत्ति को भी उपयुक्त बताया गया है । गाँधीजी का नेतृत्व वस्तुत: करिश्मात्मक शैली का था और वे आत्म-त्याग एवं विशुद्ध सेवा भावना पर जोर देते थे, किन्तु वे अपने अनुयायियों में विवेकपूर्ण अनुशासन की भावना को विकसित करना चाहते थे । सन् 1906 से पहले भले ही उनकी जीवन-शैली उनके आदर्शों के उतनी अनुकूल नहीं रही हो किन्तु वे प्रारम्भ से ही गीता

द्वारा दृष्टव्य मार्ग पर आगे बढ़ते चले गये । उन्होंने सभी सहयोगी विदेशी तथा हिन्दू परिवारों में समभाव एवं निस्वार्थ-सेवा-भावना कूट-कूट कर भरने का प्रारम्भ से ही भरसक प्रयास किया और इस उद्देश्य में वे अत्यधिक सफल भी हुए । वे "फोनिक्स-आश्रम" को इन्हीं आदर्शों पर संस्थापित करते हुए उसे स्वास्थ्य, कृषि एवं शिक्षा का सर्वोत्कृष्ट केन्द्र बना देना चाहते थे । इसी का परिणाम यह हुआ कि फोनिक्स ने न केवल दक्षिण-अफ्रीका में गाँधीजी को सत्याग्रही दिये अपितु उनमें से अनेक गाँधीजी से पहले और बाद में भी उनके कार्यों एवं उद्देश्यों को आगे बढ़ाते रहे ।

9.4 टॉलस्टाय - फार्म

टॉलस्टाय फार्म को फोनिक्स-आश्रम योजना के पूरक के रूप में स्थापित किया गया था । दक्षिण-अफ्रीका में संचालित सत्याग्रह के द्वितीय चरण से सम्बन्धित निर्धन भारतीय परिवारों के निवास की समस्या आयी तो गाँधीजी ने उन्हें बसाने हेतु टॉलस्टाय-फार्म स्थापित कर उन्हें वहां बसाकर उनकी तत्सम्बन्धी समस्या का निवारण किया । इसे गाँधीजी ने ट्रान्सवाल में फोनिक्स आश्रम के ढंग पर एक ऐसे सहकारी-परिवार-मण्डल के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया था जहां सत्याग्रहियों के परिवार आत्म-निर्भर रहते हुए एक नवीन प्राकृतिक (प्रकृति से तादात्म्य स्थापित) सादा, निर्मल तथा स्वच्छ जीवन का निर्वाह कर सकें । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु केलनबाख ने जोहन्सबर्ग से इक्कीस मील दूर ग्यारह सौ एकड़ का फार्म खरीद कर गाँधीजी को सौंप दिया । गाँधीजी तथा सत्याग्रहियों को बिना किसी किराये तथा बिना किसी धन के 30 जून, सन् 1910 में तब तक के लिए दे दिया जब तक कि सत्याग्रह का संघर्ष समाप्त नहीं हो जाता । गाँधीजी फोनिक्स योजना के अनुभवों का लाभ उठाते हुए इसे एक सफल संस्था बनाना चाहते थे ।

9.5 सत्याग्रह आश्रम

जो लोग फोनिक्स आश्रम छोड़कर भारत आये और रवीन्द्रनाथ टैगोर के "शान्ति निकेतन" में आकर रहने लग गये थे, गाँधीजी ने भारतवर्ष पहुंचकर उन पर शान्ति निकेतन पद्धति से भिन्न अपने नवीन शैक्षिक-प्रयोग करने शुरू कर दिये । उन्होंने अहमदाबाद के समीप आश्रम स्थापित करने का निर्णय लिया । यह नवीन आश्रम सत्याग्रह-आश्रम के नाम से अभिहित किया गया । उन्होंने 25 मई सन् 1915 को इसकी आधारशिला रखी । स्वयं गाँधीजी ने भी यह अनुभव किया कि वे अपने "जन्म स्थान" वाले प्रान्त में रहकर अपनी मातृ-भाषा के माध्यम से देशवासियों की अधिक सेवा कर सकते हैं । अहमदाबाद बुनाई-कताई के लिए प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है । वित्त की कमी को वहां के गुजराती धनिकों ने पूरी कर दी थी । वस्तुत: पहले आश्रम अहमदाबाद के निकट "कोचरब" नामक गांव में स्थापित किया गया था । अहमदाबाद के एक वकील जीवनलाल देसाई ने गाँधीजी एवं उनके पच्चीस स्त्री-पुरूष साथियों को अपना बंगला भेंट कर था । सब लोगों ने उसके नामकरण हेतु सेवाश्रम, सेवामन्दिर और

तपोवन आदि अनेक नाम सुझाये लेकिन गाँधीजी ने उसका नाम "सेवाश्रम" रखना इस आधार पर पसन्द किया कि यह नाम किसी पद्धति विशेष से सम्बन्धित नहीं था । गाँधीजी ने शीघ्र ही आश्रम के लिए एक संविधान के रूप में आचरण के नियम बनाये तथा उन्हें अपने मित्रों के मध्य विचार विमर्श हेतु रखे । गाँधीजी ने वस्तुत: पहली बार अपने इस प्रयोग को आश्रम - "धार्मिक पुरूषों का समुदाय" कहा है । "धर्म" शब्द से उनका तात्पर्य सत्य एवं अहिंसा में दृढ़ विश्वास से था जिन्हें सत्याग्रह के प्रयोग के लिए अत्यावश्यक माना गया है ।

कोचरब में स्थापित सेवाश्रम में कोई नौकर आदि की व्यवस्था नहीं थी । सभी को शाकाहारी भोजन, कायिक श्रम, समाज सेवा, ब्रह्मचर्य, प्रार्थना आदि का कठोरतापूर्वक पालन करना होता था । आश्रमवासियों को नौ संकल्प लेने होते थे जो कठोर संयमवाद के प्रतीक थे । यथा-सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, विदेशी वस्तु-बहिष्कार, अभय एवं अस्पृश्यता । इन संकल्पनाओं का विवेकपूर्ण एवं रचनात्मक ढंग से पालन करना आवश्यक था । गाँधीजी के अनुसार इन्हें हिन्दू-परम्परावाद की अभिव्यक्ति नहीं माना जाना चाहिए । गाँधीजी अस्पृश्यता, जाति-प्रथा तथा ऐसी ही अनेक अन्य सामाजिक बुराईयों जैसे बाल विवाह, देवदासी प्रथा, पशुबलि आदि के सभी सख्त विरोधी थे । वहां बच्चों एवं वयस्कों के साथ समान व्यवहार किया जाता था । सबको समान रूप से कताई-बुनाई, कृषि, गोपालन आदि से सम्बन्धित कार्य करने होते थे । बच्चों को धन एवं सुख सुविधाओं की तृष्णा एवं भूख से दूर रखा जाता था । गांधीजी ने अपने में जब अछूतों को सम्मिलित किया जो उसका वहां जबर्दस्त विरोध किया गया । किन्तु वे अपने सिद्धान्तों पर अड़िग रहे । अस्पृश्यता का विरोध करने के लिए गाँधीजी ने कष्ट सहन करते हुए विरोधियों का हृदय जीतने का प्रयास किया । स्वयं गाँधीजी के परिवार अर्थात् कस्तूरबा भी उनसे असहमत थी परन्तु सभी को अन्तत: गाँधीजी के विचारों से सहमत होना पड़ा । इस प्रकार गाँधीजी ने विचार एवं व्यवहार दोनों के द्वारा समस्त विश्व के समक्ष अस्पृश्यता के विरूद्ध बिगुल बजाया ।

यद्यपि लगातार पांच वर्षों तक किसी भी प्रकार के सत्याग्रह करने का अवसर नहीं आया किन्तु जब भी ऐसा अवसर आया आश्रमवासियों ने अपनी असाधारण प्रतिज्ञा का परिचय देते हुए आश्रम में प्राप्त शिक्षा एवं अनुभव के आधार पर क्रान्तिकारी काम करके दिखा दिया ।

9.6 साबरमती - आश्रम

कोचरब में अत्यधिक सफाई का ध्यान रखते हुए भी प्लेग फैल गया और आश्रमवासियों के बच्चों की सुरक्षा कठिन हो गई। यह सोचकर गाँधीजी ने पंजाभाई हीराचन्द की सहायता से साबरमती जेल के समीप, कोचरब से तीन चार मील दूर साबरमती नदी के किनारे एक अन्य महत्वपूर्ण स्थान देखा । यह स्थान गाँधीजी को बहुत पसंद आया । इस नये स्थान पर कच्चे मकान, पाठशाला, भोजनालय, रसोईघर, पुस्तकालय तथा हथकरघा हेतु बनातशाला आदि मगनलाल गाँधी के निरीक्षण तथा देखरेख में बनवाये गये । गाँधीजी के परिवार के लिए निवास स्थान नदी के समीप मुख्य स्थान से थोड़ा सा पीछे बनाया गया । जो भी स्त्री, पुरूष बालक आश्रम में रहते थे उन्हें गाँधीजी ने सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, शरीर श्रम आदि आश्रम-व्रतों की दीक्षा दी जाती थी । भारत के दलित-पीड़ित मानव-समाज की सेवा

के लिए तैयार किया और उन सबको अपने कटुम्बी-जन मानकर प्रेम, करूणा, ममता तथा वात्सवल्य की अमृतवर्षा की ।

आश्रम से सेवा का और सेवा की पद्धति का भाव सहज ही प्रकट होता है । साबरमती आश्रम में उस समय कुछ बहन-भाई व बच्चे मिलाकर लगभग एक सौ पचास थे । आश्रम में विभिन्न प्रकार के और विभिन्न प्रान्तों के लोग थे । आश्रमवासियों में मेल-मिलाप आपसी भाई चारे व प्रेम भावना का विकास व व्यवस्था बनाये रखना आश्रम, की महत्वपूर्ण उपलब्धि थी ।

आश्रम निश्चित कार्य-पद्धति एवं नियमावली के अनुरूप कार्य करता था । आश्रम की दिनचर्या प्रात: चार बजे जगने की घण्टी से प्रारम्भ होकर रात नौ बजे सोने की घण्टी तक सुव्यवस्थित तरीके से चलती थी । प्रात: 4:20 से 5:00 बजे तक सर्व धर्म प्रार्थना, आश्रम भजनावली एक भजन और रामधुन तथा सात दिन में एक बार गीता-पारायण होता था । शाम की प्रार्थना में गीता के दूसरे अध्याय के अंतिम 19 श्लोक, भजन और रामधुन गायी जाती थी । गाँधीजी के अनुसार सुबह-शाम की ये प्रार्थनायें आश्रम की सबसे बड़ी खुराक एवं औषधि थी । गाँधीजी भोजन के बिना जिन्दा रह सकते थे, लेकिन प्रार्थना के बिना जिन्दा रहना उनके लिए असम्भव था । उनके दूसरे कामों में भंग पड़ सकता था, लेकिन प्रार्थना में भंग पड़ना सम्भव नहीं था । अपने जीवन के अंतिम दिन (30 जनवरी, 1948) मई प्रार्थना में वे थोड़ी देर से आये थे अगर उनको बोलने का अवसर मिला होता तो वे यही कहते कि "मैं प्रार्थना में देर से आया उसकी यह सजा या चेतावनी भगवान ने मुझे दी हैं ।"

सुबह-शाम की प्रार्थना तो उनकी आत्मा को सात्विक पोषण देने वाली खुराक ही थी । उनका कहना था - "रात की जड़ता और निद्रा में बुरे स्वप्न भी देखे हों तो उन्हें धोने के लिए प्रार्थना साबुन का काम करती है और हमारा नया जीवन-कार्य प्रार्थना से आरम्भ होता है । प्रार्थना दिन की थकान को दूर करने और दिन के व्यवहार में हमसे कुछ भूलें हुई हों तो उनका प्रायश्चित करने तथा प्रार्थना के बाद हम भगवान का नाम रटते हुए निद्रा देवी की गोद में शांतिपूर्वक सो सकें, इसके लिए अमोघ औषधि के समान है ।"

आश्रम में नौकर रखने का रिवाज था ही नहीं । टट्टी-सफाई से लेकर भोजनालय तक का सारा काम आश्रम-वासी बहन-भाई ही करते थे । बीमारी को छोड़कर किसी काम के लिए कोई अपवाद नहीं था । गाँधीजी स्वयं इन कार्यों में हिस्सा लेते थे । कताई, बुनाई, धुलाई, खेती, गौशाला, चर्मालय शिक्षण आदि काम सभी आश्रमवासी करते थे । कोई काम छोटा और बड़ा नहीं था । जो काम जिसको सौंपा जाता था वह उसे बड़े ही आत्मीय भाव से सम्पन्न करता था । यहां तक कि वर्षों साथ में रहने पर भी एक दूसरे की जाति तक जानने का विचार किसी के मन में नहीं आता था ।

हरिजनों का प्रवेश आश्रम में निशिद्ध नहीं था । उनके लिए आश्रम के द्वारा खुले थे, दूदाभाई, उनकी पत्नी, दानी बहन और दूध पीती लक्ष्मी को आश्रम के नियमों के पालन करने की स्वीकृति देने पर आश्रम में प्रवेश दिया गया । दूदाभाई के आश्रम में प्रवेश करने से पूरे अहमदाबाद में खलबली मच गई और नौबत यहां तक आई कि आश्रम को मिलने वाली आर्थिक मदद बंद हो गई । आश्रम की अन्य बहनें भी दानीबहन को घृणा की दृष्टि से देखती थी ।

गाँधीजी ने दोनों को धीरज से काम लेने को कहा । गाँधीजी ने हरिजन बस्ती में जाने की सोची परन्तु ठीक समय एक सेठ तेरह हजार रूपये सहायता हेतु थमा कर चला गया । तत्पश्चात् अनेक हरिजन आश्रम में आये और लोगों का विरोध भी शांत हो गया ।

गाँधीजी एक पिता की भांति आश्रमवासियों के लिए थे तक आश्रम की सारी समस्याओं का समाधान भी वे एक मुखिया की भांति करते । इस तरह आश्रम एक परिवार की तरह हो गया । खाने की बात किसी को समझानी हो तो गाँधीजी उसमें घण्टों लगा देते थे । अपने हाथ से बीमार को दवा देते, एनिमा देते और स्पंज करते । कुष्ठरोगी जैसे भयंकर रोगी की मालिश करते । बीमारों को नित्य देखते और उनके खान-पान, नींद व आराम के समाचार जानकर आगे की सब बातें बता देते । अपने हाथ से माँ की तरह परोसकर खाना खिलाते । आश्रम-परिवार अपने ही डग का अनोखा परिवार था । आश्रम जीवन की अपनी निराली विशेषता थी । जिसको उसका रंग लगा उसने पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा । गाँधीजी "आश्रम" के द्वारा "विश्व-कुटुम्ब" की भावना सिद्ध करना चाहते थे । इसीलिए आश्रम के द्वारा सभी बहन-भाइयों के लिए खुले थे और सभी को आश्रम में स्थान मिलता था ।

चरखे का स्थान आश्रम में महत्वपूर्ण था क्योंकि "हिन्द स्वराज्य" में भी गाँधीजी ने यह माना था कि चरखे के जरिये हिन्दुस्तान की कंगालियत मिट सकती है । जिस रास्ते भुखमरी मिटेगी उसी रास्ते स्वराज्य मिलेगा । आश्रम के खुलते ही उसमें करघा शुरू किया गया था, करघा प्रयोग से आश्रमवासी अपरिचित थे । काठियावाड़ और पालनपुर से ही करघा मिला और वहीं से सिखाने वाले मिले । मगनलाल गाँधी ने बुनने की पूरी कला सीख ली थी । फिर आश्रम में एक के बाद एक नये-नये बुनने वाले तैयार हुए । आश्रमवासियों ने मिल के कपड़े पहनना बंद कर दिया और निश्चय किया कि हाथकरघे पर देशी मिल के सूत का बुना हुआ कपड़ा ही पहनेंगे ।

गाँधीजी ने चरखे को राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक स्वतंत्रता का सर्वश्रेष्ठ साधन माना है, परन्तु करोड़ों ने उसे नहीं अपनाया है । अगर अहिंसा का प्रतीक समझकर चरखे को देश ने अपनाया होता, तो आज की विषम स्थिति नहीं होती ।

इमामसाहब ने, जो दक्षिण अफ्रीका से ही गाँधीजी के साथी थे तथा अपनी पुत्री अमीनाबहन और दामाद गुला मरसूत कुरेशी के साथ साबरमती-आश्रम में रहते थे, खादी का महत्व हिन्दू और मुसलमान तथा अन्य सभी के लिए बताते हुए कहा "खादी तो हिन्दु, मुसलमान, पारसी, सिक्ख, ईसाई सभी के लिए एक सी है । हिन्दू स्त्रियां तो बाहर निकल कर दूसरे काम भी कर सकती हैं लेकिन मुसलमान स्त्रियां तो वह भी नहीं कर सकती । मुसलमान पर्दानशीन औरतों के लिए तो चरखा रोजी का बहुत ही अच्छा साधन है । मुसलमान जुलाहे बुनते धुनते हैं । अगर हिसाब निकाला जाए तो खादी से मुसलमानों को पहुंचने वाला फायदा हिन्दुओं से कम नही पाया जाएगा।

गाँधीजी कहते थे कि आश्रम एक महाशाला है, जिसमें एक निश्चित समय ही शिक्षा के लिए नहीं होता बल्कि सारे समय शिक्षा का कार्य चलता रहता है । ऐसा हर आदमी, जो

आत्मदर्शन, संयमदर्शन की भावना से आश्रम में रहता है शिक्षक भी है और विद्यार्थी भी है । जिस काम में वह कुशल है उसका शिक्षक है जो काम उसे सीखना है उसका वह विद्यार्थी है ।

9.7 आश्रम का सविनय अवज्ञा आन्दोलन में योगदान

जिस प्रकार दक्षिण-अफ्रीका के आश्रमों ने दक्षिण-अफ्रीकी-सत्याग्रहों में योगदान किया था उसी प्रकार सन् 1930 के सविनय-अवज्ञा आन्दोलन ने साबरमती-आश्रम को इतनी प्रतिष्ठा दिलाई कि भ्रष्टाचार एवं अनैतिकता के सारे दाग स्वत: ही समाप्त हो गये । इसके पहले भी साबरमती के कार्यकर्त्ताओं ने चम्पारन, अहमदाबाद और बारदोली के आन्दोलनों में भाग लेकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी । सविनय अवज्ञा आन्दोलन अथवा नमक सत्याग्रह के स्वरूप एवं संचालन का सम्पूर्ण भार गाँधीजी पर ही था । 12 मार्च सन् 1930 से प्रारम्भ होने वाले डाण्डी-अभियान ने स्वराज के महान् आदर्श हेतु आश्रम के 78 सदस्यों को यह अवसर प्रदान किया कि वे अपनी निष्ठा एवं क्षमता का प्रदर्शन कर सकें । गाँधीजी ने इन सभी के नाम "यंग इण्डिया" में पहले ही प्रकाशित कर दिये थे । 24 दिन के लम्बे प्रयास में 241 मील की यात्रा की गई । गाँधीजी ने घोषणा की कि "हम ईश्वर के नाम पर यह अभियान शुरू कर रहे हैं ।" गांधीजी ने इन साथी सत्याग्रहियों के माध्यम से भारतीय जनजीवन से सम्बद्ध कर्मशीलता विजय-श्री का वरण किया । सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय खुले आकाश के नीचे प्रार्थनाएं की जाती थी तथा सभी आश्रमवासी प्रतिदिन एक घण्टा कताई करते थे और अपनी डायरी लिखते थे । इस यात्रा की आंधी में अनेक स्थानीय प्रशासन धराशायी हो गये क्योंकि तीन सौ नब्बे गांवों के सरपंचों ने अपने पदों से त्यागपत्र दे दिये थे । धीरे-धीरे अभियान-कर्त्ताओं की संख्या सैकड़ों से हजारों हो गई जिनमें व्यापारी, स्त्रियां आदि भी शामिल थी । सम्पूर्ण विश्व का ध्यान गांधीजी तथा इन विविधतापूर्ण सत्याग्रहियों पर केन्द्रित हो गया । समुद्र किनारे स्थित डाण्डी पहुंचकर गाँधीजी ने गैर-कानूनी ढंग से नमक चुनते हुए नमक कानूनों को तोड़ दिया और इसके बाद सामूहिक असहयोग आन्दोलन, जिसमें गैर-कानूनी ढंग से व्यापक स्तर पर नमक बनाने तथा विदेशी वस्त्रों एवं शराब की दुकानों का बहिष्कार प्रारम्भ हुआ । इस आन्दोलन में लाठियों एवं डण्डों की मार खाते हुए आश्रम की अनेक महिलाओं ने शौर्य एवं साहस का प्रदर्शन किया । ज्यों-ज्यों आन्दोलन आगे बढ़ा तो गाँधीजी को बन्दी बना लिया गया और हजारों सत्याग्रहियों को बहुत बुरी तरह से मारा गया और पीटा गया और अन्तत: जेल में बंद कर दिया गया । गाँधीजी को यह जानकर अत्यन्त खुशी हुई कि आश्रमवासियों ने इतना महान् त्याग एवं कष्ट-सहन का प्रदर्शन किया है तथा उन्हें जबर्दस्त तरीके से पीटा गया है और जेल में बन्द कर दिया गया है । गाँधीजी ने कहा कि यह तो बहुत ही मान-सम्मान की घड़ी है । उन्होंने इसे अपनी पद्धतियों एवं आदर्शों की विजय बताया । अनेक आश्रमवासी भारत को स्वराज दिलाये बिना आश्रम जाने को तैयार नहीं थे । जिन लोगों को गाँधीजी के साथ जेल जाने का मौका नहीं मिला वे रास्ते में आने वाले गाँवों में ही रहकर जनता की सेवा में संलग्न हो गये । इस प्रकार गाँधीजी का रचनात्मक कार्यक्रम स्थान-स्थान पर साकार रूप लेने लगा ।

9.8 सेवाग्राम

मध्य-भारत में वर्धा नामक स्थान पर रमणीकलाल मोदी ने 14 जनवरी सन् 1921 को जो आश्रम स्थापित किया था उसे गांधीजी के निर्देश पर विनोबा भावे ने सम्भाला । विनोबा भावे ही गाँधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी कहे जाते हैं । विनोबा भावे "कोचरब आश्रम" के महत्वपूर्ण सदस्य थे । विनोबा भावे ने कोचरब एवं साबरमती से प्रेरणा एवं प्रशिक्षण लेकर से गांव (बाद में सेवाग्राम) में सत्याग्रह-आश्रम की स्थापना की । इस आश्रम का उद्देश्य गाँधीजी ने ग्राम सेवा तथा ग्राम विकास रखा । उन्होंने कहा कि यह आश्रम मौलिक रूप से रचनात्मक कार्यों के सम्पादन से सम्बन्धित होगा । राजनीति आदि के लिए इसमें कोई स्थान नहीं होगा । गाँधीजी ने कांग्रेस-जनों पर रचनात्मक कार्य करने के लिए अत्यधिक जोर दिया था । उन्होंने कहा था कि उसके अभाव में वे एक दिन भी देश का शासन चलाना नहीं सीख सकते । सन् 1930 के बाद में सामूहिक कार्यों के बजाय स्थानीय सुधारों एवं ग्रामोन्नति की गतिविधियों में व्यक्तिगत प्रयासों पर जोर देने लगे । फिर भी कांग्रेसियों ने गाँधीजी के कार्यक्रमों के प्रति केवल मौखिक-प्रशंसा का भाव ही जताया । कांग्रेस की विभिन्न समितियों ने राजनीति में रूचि रखने वाले छोटे-छोटे ठेकेदारों से अथवा स्थानीय सत्ताधीशों से ही सम्बन्ध रखा । इन गतिविधियों से गाँधीजी ने आत्म-पीड़ा महसूस की । उन्होंने राजनीति के बाहर ऐसे व्यक्तियों से सम्पर्क करना शुरू किया जो ग्राम-सेवी के कार्यों में संलग्न होने को तैयार हों । इस दिशा में उनका एक समृद्ध मारवाड़ी उद्योगपति जमनालाल बजाज से सम्पर्क हुआ जिसने साबरमती तथा अन्य रचनात्मक कार्यक्रमों में भारी वित्तीय सहायता की थी । वह गांधीजी द्वारा स्थापित बीस समाज सुधार संगठनों में से तेरह का सदस्य था । इस तरह इसी मार्ग पर चलते हुए गाँधीजी ने स्वयं के कार्यक्रमों को राजनेताओं के प्रभाव से बचाया । गाँधीजी ने यह पहले ही अनुभव कर लिया था कि सन् 1922 जैसी घटनाओं, जिसमें सत्याग्रह के समाप्त होते ही जनता का जोश ठण्डा पड़ गया था, बचा जा सके । उन्होंने सन् 1933 में हरिजन-सेवक संघ की स्थापना की जिससे सवर्णों को अछूतों की सेवा के लिए संगठित किया जा सके । किन्तु हरिजन सेवा का कार्य खादी-कार्यक्रम जैसे विशाल कार्यक्रमों की भांति नहीं किया जा सका । उनका उच्च तथा परम्परागत समुदायों द्वारा विरोध किया गया । हरिजन-सेवक-संघ उच्च जाति के हिन्दुओं को अधिक उन्नत सफाई पद्धतियों में दीक्षित भंगियों के रूप में तैयार करना था जो शौचालय साफ करने, हरिजनों के लिए मन्दिर, तालाब, स्कूल आदि खोलने का कार्य करता था । चारों तरफ से इसके लिए गाँधीजी का विरोध हुआ लेकिन उनके भारी प्रचार एवं प्रसार ने अन्ततोगत्वा सफलता को समीप ला दिया ।

सन् 1934 में कांग्रेस छोड़ने से पूर्व गाँधीजी ने अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ (All India Village Industries Association) की स्थापना की थी । गाँधीजी द्वारा कांग्रेस छोड़ने के कदम से नेहरूजी व्यक्तिगत रूप से बहुत दुःखी थे किन्तु गाँधीजी निःस्वार्थ ग्राम सेवा के कार्यक्रमों को अपनाना चाहते थे जिसके लिए कांग्रेसी तैयार नहीं हुए तो स्वयं उन्होंने ही कांग्रेस छोड़ दी । हरिजन-सुधार एवं ग्राम सेवा, ग्राम-विकास का कार्य भी गाँधीजी की उपस्थिति

एवं प्रेरणा से ही सम्भव हो सकता था । गाँधीजी ने स्वयं को कांग्रेस से दूर रखकर ग्राम-सेवा का संकल्प लिया ।

सन् 1933 में साबरमती-आश्रम को बन्द कर दिये जाने के पश्चात् वहां के अनेक आश्रमवासी वर्धा में विनोबा भावे द्वारा स्थापित सत्याग्रह आश्रम में रहने लगे । उस समय गाँधीजी हरिजन-सेवा एवं ग्रामोद्योगों के विकास आदि कार्यों में संलग्न थे । गाँधीजी ने घोषणा की कि उनका साबरमती के पद-चिन्हों पर चलते हुए वैसे आश्रम की स्थापना का कोई इरादा नहीं है । वहाँ गुजरात विद्यापीठ के अध्यापकों ने उनकी प्रेरणा से जनता को शिक्षित करने के लिए गांव को अपनाया (गोद लिया) था । सन् 1934 में जमनालाल बजाज के परामर्श पर गांधीजी ने अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ के मुख्यालय के रूप में वर्धा का चयन किया था । इस स्थान के चयन के अनेक कारण थे, किन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण यह था कि इस जिले में जमनालाल स्वयं बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति थे और वे ही वर्धा आश्रम के प्रमुख वित्तीय प्रायोजक थे । इसके अतिरिक्त जमनालाल बजाज ने मगनलाल गाँधी की स्मृति में गाँधीजी को नारंगियों की बीस एकड़ क्षेत्रफल वाला बगीचा दान किया था । इसका नया नामकरण "मगन-बाड़ी" नाम से किया गया जो अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का प्रशासनिक मुख्यालय बन गया । अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का प्रबन्ध प्रसिद्ध गांधीवादी अर्थशास्त्री जे.सी. कुमारप्पा के हाथ में था । यह एक विचित्र संयोग है कि सेवाग्राम के स्थान चयन के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी व्यक्ति अंग्रेज महिला मेडम स्लैट (मीरा बहन) थी । उसी ने गाँधीजी के ग्राम-योजना की प्रयोगशाला के रूप में इस स्थान का चयन किया था । गांधीजी के साथ मगन-बाड़ी में रहते समय वह एक सिण्डी (Sindi) नामक ग्राम के बीच से गुजरा करती थी । इस गांव में भयानक गन्दगी थी । "हरिजन" के नये सम्पादक महादेव देसाई के सहयोग से मीरा बहन ने सिण्डी में सफाई कार्यक्रम शुरू किया । फिर भी गांव वाले गन्दगी फैलाने से बाज नहीं आये । इस असफलता पर गांधीजी ने दो-तीन स्वयंसेवकों की सहायता से मीरा बहन को प्रतिदिन सुबह-सुबह गाँव की सड़कें साफ करने का निर्देश दिया । स्वयं गाँधीजी एक दिन सुबह सफाई-दल के साथ गये और गाँव वालों के समक्ष सादे मिट्टी के शौचालय बनाने का प्रस्ताव रखा । उन्होंने इन कार्यों के द्वारा उत्पन्न खाद को पैदावार बढ़ाने तथा पूरे वर्ष सब्जी आदि उगाने के काम में लिये जाने का आग्रह किया । सन् 1935 के अन्त में उच्च-रक्त चाप के कारण गाँधीजी का स्वास्थ्य गिर गया । उन पर मगन-बाड़ी के परिवेष का तथा सिण्डी में कोई प्रगति नहीं होने का भी अत्यधिक बुरा प्रभाव पड़ा । उन्होंने सिण्डी में अकेले ही रहने का निर्णय किया । इसके लिए वहां गाँधीजी तथा मीरा बहन के लिए ईटों का एक कोटेज बनाया गया । गांव के अधिकांश लोग अछूत कहलाने वाले महार-जाति के थे । महारों के अलावा एक दो सवर्ण परिवारों को छोड़कर सभी और भी अधिक निम्न कहलाने वाले लोग रहते थे । शीघ्र ही इस गाँव से मीरा बहन को पानी प्राप्त करने की कठिनाई आई । हरेक जाति का अपना अलग कुआ था । एक दिन घूमते समय जब मीरा ने निम्नतम समझे जाने वाले अछूत से पानी ग्रहण कर लिया तो अन्य सभी जातियों ने उसके लिग अपने कुएं का पानी बन्द कर

दिया किन्तु अपने कार्य की प्रगति एवं सेवा-सफाई के आधार पर मीरा ने शीघ्र ही गाँव वालों का विश्वास जीतने में सफलता अर्जित कर ली ।

जमनालाल बजाज वर्धा जिले के एक प्रसिद्ध व्यापारी ही नहीं थे अपितु वे (बाद में सेवाग्राम) के मालगुजार (मराठा राजस्व-प्रबन्धक) अथवा बड़े जमींदार भी थे, उनको सेगांव की मालगुजारी का 75 प्रतिशत तथा स्थानीय बाबा साहब देशमुख को 25 प्रतिशत माजगुजारी मिलती थी । गांव की कुल जमीन 1550 एकड़ में से 220 एकड़ मालगुजारों के पास थी और शेष 60 छोटे जमीदारों में बंटी हुई थी । प्रारम्भ में, मीरा बहन ने जमनालाल बजाज द्वारा दिये गये एक खाली गौशाला के स्थान में रहना शुरू किया । सिण्डी में उसके स्थान पर मगन बाड़ी से आया कार्यकर्त्ता गजानन नामक व्यक्ति कार्य करने लगा । मीरा बहन अपनी इस नई जीवन-शैली के प्रति अति उत्साहित थी । उसने कहा कि "गांव जीवन और सुन्दरता का स्त्रोत है ।" शीघ्र ही उसका उत्साह ठण्डा पड़ गया । इसका कारण यह था कि स्वयं उसका स्वास्थ्य गाँधीजी से विछोह के कारण गिर गया । उसकी सदैव यह तीव्र इच्छा रहती थी कि वह गाँधीजी के पास ही रहे । जब उसने सुना कि गाँधीजी का रक्तचाप बढ़ गया है तो उसके स्वास्थ्य को और भी अधिक गहरा आघात लगा । गाँधीजी को सेगांव के पास एक आश्रम में ले जाया गया किन्तु जमनालाल बजाज ने आगन्तुकों एवं आश्रमवासियों के द्वारा उनसे सम्पर्क करने पर पूर्णतया रोक लगा दी । इससे मीरा बहन को गहरा आघात पहुंचा । अन्ततः उसे गाँधीजी से मिलने की अनुमति मिली किन्तु उसे गाँधीजी के द्वारा बताया गया कि उनका रक्तचाप और भी अधिक बढ़ जायेगा यदि वह गांव में नहीं रहेगी । गांधीजी के स्वास्थ्य में सुधार हुआ और वे डॉक्टरों के परामर्श पर कुछ समय के लिए अहमदाबाद में रहने लगे । परन्तु मीरा बहन ने यह पाया कि गाँधीजी और उसके बीच में एक कृत्रिम दीवार खड़ी हो गई है । इसका कारण यह था कि उसमें गाँधीजी पर एकाधिकार करने की तीव्र भावना उत्पन्न हो गई थी और यही उसकी पीड़ा का मुख्य कारण था । उसे पुनः मगनबाड़ी चले जाने के लिए कहा गया । गाँधीजी ने अपने स्वास्थ्य के गिर जाने पर भी सेगांव में ही रहने का निश्चय किया । यद्यपि उनके इस निर्णय का जमनालाल बजाज ने विरोध किया पर गाँधीजी के तर्कों के सामने उनकी एक भी नहीं चली । बजाज ने भी सभी प्रकार से गाँधीजी को सहायता देने का कार्यक्रम बनाया । सेगांव में उनके लिए झोपड़ा बनाया गया । उन्होंने अपने स्वास्थ्य की कोई गरवाह नहीं की । उनका झोंपडा लकड़ी एवं बांस से बनाया गया । सेगांव में 118 डिग्री तक पारा पहुंच जाया करता था । डॉक्टरों ने उनके उच्च रक्तचाप को देखते हुए उन्हें ठण्डे स्थान पर जाने का परामर्श दिया । जब वे दक्षिणी भारत की "नन्दी पहाड़ी" विश्राम हेतु गये तब उनकी अनुपस्थिति से "सेगांव" का आश्रम के रूप में विकास होने लगा था । यह सबको ज्ञात ही था कि सेगांव का गाँधीजी ने ग्रामीण-जीवन का आदर्श विकसित करने का निर्णय ले रखा है किन्तु वे यह नहीं चाहते थे कि उसकी सफलता केवल उनके निजी विश्वास पर हो । वे स्वयं ग्रामीणों में चेतना जागृत कर यह कार्य सम्पन्न करना चाहते थे । इस प्रयोग की सफलता का आधार वास्तविक रूप में किया गया सुधार था । गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व के ऊपर भरोसा करके ही उनके सहयोगी कार्य करते थे । गाँधीजी यह बिल्कुल भी नहीं चाहते थे कि उनके व्यक्तिगत करिश्मा पर आश्रित रह कर काम किया जाये । फिर भी गाँधीजी इस करिश्मा के शिकार बनते चले गये ।

अल्पकाल में ही सेगांव सेवाग्राम बन गया और गाँधी जी के इर्द-गिर्द फिर से एक नया आश्रम उठ खड़ा हुआ । वें प्रयास करते रहे कि वहां उनसे मिलने कोई भी नहीं आये । वहां आने वालों के लिए ठहरने एवं खाने की कोई व्यवस्था नहीं की गई फिर भी भारत के वायसराय सहित सभी वर्गों के लोगों के आने जाने वालों का तांता लगा रहता था । सन् 1940 तक वर्धा से सेवाग्राम तक टखनों तक के कीचड़ से भरे रास्ते को पार करके आना पड़ता थी । इस तरह गाँधीजी आगन्तुकों को आने से रोक पाने में असमर्थ थे । मीरा बहन के लिए एक मील दूर बरेड़ा गांव में एक झोपड़ी बना दी गई । केवल बलवन्त सिंह तथा मुन्नालाल शाह को सेवाग्राम में रहने की अनुमति मिल पायी । इस प्रकार गाँधीजी का गांव में अकेले रहने का संकल्प कभी पूरा नहीं हुआ । आशा के विपरीत उनकी झोपड़ी में भीड़ सी इकट्ठी हो जाती थी । फिर और अलग से गाँधीजी के लिए "बापू-कुटीर" नामक झोपड़ी बनाई गई । ऐसी ही व्यवस्था गांधीजी के सचिवों महादेव देसाई तथा प्यारेलाल के लिए की गई । गाँधीजी ने भी सन् 1932 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने वाले -परचुरे नाम के एक सत्याग्रही के झरते हुए कोढ़ का इलाज करने का काम अपने हाथ में लिया । अन्य डरे हुए लोगों ने भी गाँधीजी को देखकर परचुरे की सेवा तथा मालिश आदि काम अपने हाथ में लिये । परचुरे ठीक होने लगा और उसने गाँधीजी के निर्देश पर हरिजन एवं सवर्ण हिन्दुओं में परस्पर विवाह कराने सम्बन्धी कार्य करने से शुरू किये । सन् 1942 तक तो आगन्तुकों की संख्या और भी अधिक बढ़ गई और जाल-भाई-रूस्तम जी ने आश्रम के बढ़ते हुए भवनों की संख्या में एक भवन और जोड़ दिया । इस प्रकार गाँधीजी का सेवाग्राम जे.सी. कुमारप्पा के शब्दों में "भारत की यथार्थ में राजधानी" बन गया । गाँधीजी ने अपने भारी भरकम पत्राचार को भी संक्षिप्त करना चाहा और इस कार्य में उन्होंने महादेव देसाई की सहायता ली । सेवाग्राम में डाकघर तक भी नहीं था । गाँधीजी "हरिजन" के लिए लेख भी लिखते थे और सभी छोटे-बड़े आगन्तुकों से भेंट भी करते थे । उनका अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ सम्बन्धित कार्य भी बढ़ता गया । वे स्वयं कई अवसरों पर अत्यधिक दुःखी भी हो जाते थे कि सेवाग्राम तथा आस पास के गाँवों में स्वयं अपने हाथों से कोई काम नहीं कर पा रहे हैं और विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रशासनिक कार्यों में ही उलझे हुए रहते हैं । सन् 1936 तक वे 68 वर्ष के हो चुके थे और उनमें स्वाभाविक रूप से एक स्वस्थ व्यक्ति जैसी शक्ति नहीं रह गई थी । राजनीति तथा अन्य कार्यों में उलझे हुए होने के कारण उनका घूमना-फिरना भी बहुत कम हो गया था । उधर सेवाग्राम में भंसाली जैसे पागल अधपागल व्यक्ति भी एकत्रित होते जा रहे थे । चिमनलाल के अनुसार साबरमती में गाँधीजी आश्रम-समुदाय के "पिता" थे किन्तु सेवाग्राम की वे "माता" थे । गाँधीजी इस ग्राम जीवन एवं ग्राम सेवा को दिन-प्रतिदिन के सामुदायिक जीवन के अनुभवों से विकसित करना चाहते थे । अतएव उनका मानना था कि वहां ऊपर से थोपे हुए नियम-उपनियम व निर्देशन नहीं होने चाहिए ।

संक्षेप में एक आश्रम के रूप में सेवाग्राम का विकास एक योजनाबद्ध कार्यक्रम के स्थान पर राष्ट्रीय मामलों में गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व के प्रभाव का परिणाम था । उनके इस प्रयोग ने ग्राम पुनर्निर्माण के विषय में गाँधीजी के विचारों को जो कि मूलत: मानवतावादी

थे, प्रयोगात्मक स्वरूप प्रदान करने का अवसर दिया । नीरस एवं थोथे आकड़ों के बजाय गाँधीजी प्रत्येक गांव में रहने वाले निम्नतम व्यक्ति की आवश्यकताओं के संदर्भ में काम करते थे । उनके लिए व्यक्ति ही गांव की आधारशिला था । वे सीधे व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं से जुड़े हुए थे । उनकी मान्यता थी कि ग्राम-सुधार का दायित्व स्वयं व्यक्ति के कन्धों पर डाला जाना चाहिए । उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का यह अधिकार है कि उसका पूर्ण आध्यात्मिक, बौद्धिक तथा नैतिक विकास किया जाये और यह केवल अपने साथी-व्यक्तियों की सेवा के द्वारा ही किया जाना सम्भव था । समाज के प्रति अपने दायित्वों को सम्पादित करने की भावना गीता से ग्रहण की जानी चाहिए । उसके विचार जवाहर लाल नेहरू से भिन्न थे । नेहरू मशीनों द्वारा उत्पादन, भारी उद्योगों के केन्द्रीयकरण, नियोजन, समाजवाद आदि में विश्वास करते थे । गाँधीजी के अनुयायी इन आश्रमों का विकास करने में असमर्थ रहे । इसका प्रमुख कारण था कि स्वयं गाँधीजी अपने करिश्मात्मक व्यक्तित्व के दुष्प्रभावों का प्रतिरोध करने में असमर्थ रहे । आश्रम के अधिकांश स्त्री-पुरूष केवल गाँधीजी के प्रति ही समर्पित थे । यहीं कारण है कि "साबरमती" तथा "सेवाग्राम" दोनों ही मात्र संग्रहालय तथा राष्ट्रीय तीर्थों के रूप में रूपान्तरित होकर रह गये ।

गाँधीजी रूढ़िवाद से सदैव दूर रहते थे । वे अपने चिन्तन एवं दर्शन की गतिशील तथा विरासात्मक व्याख्या करने के पक्ष में थे । वे अपने विचारों एवं व्यवहारों का "पवित्रीकरण" नहीं चाहते थे । इसी कारण उन्होंने कहा था कि "गाँधीवाद जैसी कोई चीज नहीं है तथा मैं अपने पीछे कोई भी सम्प्रदाय बनाकर नहीं छोड़ना चाहता । मैंने सरल ढंग से अपने दैनिक-जीवन एवं समस्याओं पर लागू हो सकने वाले शाश्वत-सत्यों को ही अपनी शैली में लागू किया है ।" किन्तु आज उनके सभी आश्रम बदलती हुई परिस्थितियों एवं आकांक्षाओं का नेतृत्व करने में असमर्थ प्रस्तर-प्रतिमायें मात्र बन कर रह गये हैं । उनके पौत्र अरूण गांधी ने ही लिखा है कि "वे आश्रम जहां बापू रहते थे, जहां उन्होंने काम किया तथा जहां से उन्होंने चालीस करोड़ लोगों को प्रेरणा प्रदान की है वे आज दिखावे की वस्तुएं मात्र बन कर रह गये हैं । उनमें किसी भी प्रकार का कोई गाँधीवाद नहीं है ।" गांधीजी का आन्धानुकरण करने वाले संयमवादियो चरखा कातनेवालों तथा उपवास करने वाले लोगों में गाँधीजी की तरह आम जनता से सम्प्रेषण करने की क्षमता नहीं है तथा वे उनकी गतिविधियों में समन्वयन करते हुए चेतना का विकास करने में असमर्थ हैं । राष्ट्र जिस दिशा में जा रहा है उसमें गांधीय-लक्ष्यों एवं गतिविधियों के प्रति सम्मान का अभाव पाया जाता है ।

9.9 सारांश

गाँधीजी के सभी आश्रमों में अहिंसा के विकासमान सिद्धान्त के आधार पर गाँधीजी के समुदायवाद का विश्लेषण किया गया है । मानव के आदर्श सम्बन्धी गाँधीय धारणा क्रान्तिकारी तथा मानवीय थी । किन्तु उसका मूल आधार कठोर संयमवाद था जिसका लक्ष्य मानव में सरलता, आन्तरिक शक्ति, तथा सांसारिक महत्वकांक्षाओं के प्रति विरक्ति था । वे आत्म-साक्षात्कार के द्वारा मानव की पूर्णता में अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति में विश्वास करते थे । उनके

अनुसार मनुष्य की प्रकृति तथा बाह्य परिवेश से उसका सम्बन्ध एक सावयवी समग्र था जिसको अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता । मानव और प्रकृति की इसी एकता का अनुभव करते हुए मानव अपनी निहित क्षमताओं का साक्षात्कार कर सकता है । उन्होंने अपने आश्रमों में वही सब करने-कराने का प्रयास किया । दूसरे शब्दों में, शुद्ध-भोजन, शुद्ध-विचार और शुद्ध-कार्य ही व्यक्ति में नैतिकता का विकास तथा अन्ततोगत्वा न्यायपूर्ण समाज का सृजन कर सकते हैं ।

आधुनिक राज्य की केन्द्रीयकृत प्रवृत्तियों के विरूद्ध गाँधीजी ने सहकारी, सामंजस्यपूर्ण और स्वावलम्बी समाज की रचना का सन्देश दिया । उनके मानवतावादी विचार हॉब्स की मान्यताओं का प्रत्युतर थे । शाकाहारिता, धार्मिक-परम्परा, निष्कम-कर्म, आत्मत्याग, सेवा आदि उनकी अहिंसा के अंग उपांग थे । इनका ही प्रयोग करके उन्होंने न्यायपूर्ण समाज के निर्माण की सम्भावनाओं को बताया । दक्षिण-अफ्रीका में गाँधीजी के सत्याग्रह एवं आश्रमों का लक्ष्य भारत के दलितों के जीवन को ऊँचा उठाना था । किन्तु उनको भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति मात्र से परे जाकर सामाजिक रूप से विभाजित देश में एक समग्र सामाजिक-क्रान्ति का सृजन करना था । इसके लिए उन्होंने केवल हिन्दू जन समाज की शब्दावली का ही प्रयोग न कर ईसाई, मुसलमान, पारसी आदि सभी से विचार एवं भाव ग्रहण किये । उन्होंने यह सब अपने अस्पृष्यता-निवारण, सफाई सुधारों, महिला उत्थान, सह-शिक्षा आदि कदमों को उठाकर बताया ।

9.10 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी द्वारा स्थापित किए गए विभिन्न आश्रमों का संक्षिप्त परिचय दीजिए ।
2. आश्रमों की स्थापना के पीछे गाँधी की प्रेरणा तथा उद्देश्यों की विवेचना कीजिए ।
3. दक्षिण अफ्रीका में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी गतिविधियों की विवेचना कीजिए ।
4. भारत में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी गतिविधियों की विवेचना कीजिए ।
5. स्वतंत्रता आन्दोलन में गांधी द्वारा स्थापित किए गए आश्रमों की भूमिका का विश्लेषण कीजिए ।

9.11 संदर्भ ग्रंथ

1. गाँधी एम.के., सत्य के साथ मेरे प्रयोग, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1957
2. सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, वी.जी. देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1972
3. एन.के. गांधी : एन इंडियन पेट्रिऑट इन साऊथ अफ्रीका, नटेशन एण्ड कम्पनी, मद्रास, 1909
4. द इयर ऑफ फिनिक्स, टी.के. महादेवन, आरनोल्ड हैनेमेन, नई दिल्ली, 1982

अध्याय - 10

गाँधी एवं राजस्थान

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 गाँधी से पूर्व की राजनीतिक गतिविधियाँ

10.3 राजस्थान में गाँधी

10.3.1 बिजौलिया आन्दोलन एवं गाँधीजी

10.3.2 असहयोग आन्दोलन एवं राजस्थान

10.3.3 राजस्थान में गाँधीजी की यात्राऐं

10.3.4 राजस्थान में भील आन्दोलन एवं गाँधीजी

10.3.5 निमुचणा त्रासदी एवं गाँधीजी

10.3.6 नमक सत्याग्रह एवं राजस्थान

10.4 हरिपुरा काँग्रेस अधिवेशन एवं भारतीय राज्य

10.5 प्रजामण्डल आन्दोलन एवं गाँधीजी

10.6 भारत छोडो आन्दोलन एवं राजस्थान

10.7 गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रम एवं राजस्थान

10.7.1 राजस्थान में खादी का प्रसार

10.7.2 बिजौलिया परीक्षण

10.7.3 रींगस में खादी कार्य

10.7.4 अछुतों का उत्थान

10.7.5 शिक्षा एवं प्रेस

10.7.6 अन्य रचनात्मक कार्य

10.8 निष्कर्ष

10.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.10 अभ्यास प्रश्न

10.0 उद्देश्य

यह अध्याय गाँधी एवं राजस्थान से सम्बन्धित है, जिसके अध्ययन के पश्चात् आप -

- राजस्थान में गाँधी से पूर्व की राजनीतिक गतिविधियों को जान सकेंगे,
- राजस्थान में गाँधीजी की स्वतन्त्रता आन्दोलन सम्बन्धी गतिविधियों में भूमिका को जान सकेंगे, और
- राजस्थान में गाँधी के रचनात्मक कार्यक्रमों में योगदान को समझ सकेंगे ।

10.1 प्रस्तावना

जब ब्रिटिश भारत में राजनीतिक गतिविधियों की लहरें चल रही थी तथा 19वीं सदी के अन्तिम वर्षों में व 21वीं सदी के शुरूआत में देश के अन्य भागों में भी, जिसमें राजस्थान के राजसी राज्य भी शामिल थे । जिसके देशभक्तों के मनोवेगों ने लोगों के लिए राजनीतिक अधिकारों की माँग की और विदेशियों को भगाने की भी मांग को सुलगाया । उनमें शामिल प्रमुख देशभक्त थे - अर्जुनलाल सेठी, प्रतापसिंह बारेठ, केसरीसिंह बारेठ, जोरावरसिंह बारेठ, श्यामजी कृष्ण वर्मा, रामनारायण चौधरी आदि । स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रभाव ने भी लोगों को अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अथक प्रयास करने को प्रेरित किया ।

इसी दौरान भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के गठन ने भी राजस्थान पर काफी प्रभाव डाला । सन् 1889 में ए.ओ. ह्यूम (भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के जनक) ने जयपुर के महाराजा को एक पत्र में लिखा कि "काँग्रेस का वास्तविक उद्देश्य" विस्तृत साम्राज्य पर निवास करने वाली सभी नस्लों, जातियों एवं पंथों के सभी लोगों के सदस्यों के बीच राजाओं के समान समृद्धता को बढ़ाना है । हालांकि महाराजा ने इस पत्र को नजर अन्दाज कर दिया । इन राजाओं ने तब यह नहीं सोचा था कि ऐसा समय से परे का विचार भी प्राप्त किया जा सकता था ।

10.2 गाँधी से पूर्व की राजनीतिक गतिविधियाँ

सन् 1885, 1886 एवं 1889 के काँग्रेस के अधिवेशनों के संदेश जब अजमेर पहुंचे और अजमेर की सरकारी कॉलेज के कुछ छात्रों ने एक काँग्रेस कमेटी बनायी, जिसने सन् 1888 के काँग्रेस अधिवेशन में स्वयं का प्रतिनिधित्व किया । 'गोविन्द गिरि' और उसकी 'सम्प सभा' ने बांसवाड़ा, सिरोही एवं डूंगरपुर के क्षेत्रों में 'स्वदेशी' की भावना को प्रचारित किया जो देश में हुए 1905 ई. के स्वदेशी आन्दोलन से बहुत पहले थी ।

सन् 1913 में राज्यों एवं उसके लोगों के हितों की सुरक्षा के लिए 'राजपुताना-मध्य भारत सभा' की स्थापना की गई । चम्पारण सत्याग्रह के दौरान जमनालाल बजाज गाँधीजी के सहयोगी बने जो जीवन भर उनके साथ रहे । गाँधीजी ने उसको पाँचवा पुत्र माना और वह बजाज ही था जिसने ने राजस्थान में गाँधीजी के विचारों को प्रचारित किया । सन् 1919 में वर्धा में स्थापित 'राजस्थान सेवक संघ' को 1920 में अजमेर में हस्तान्तरित किया गया ।

10.3 राजस्थान में गाँधीजी

10.3.1 बिजौलिया आन्दोलन एवं गाँधीजी

बिजौलिया आन्दोलन मेवाड़ राज्य के किसानों द्वारा बिजौलिया ठिकाने के जागीरदारों द्वारा उनके ऊपर लगाये गये कुछ करों एवं बेगारों के विरूद्ध शुरू किया गया था । इस आन्दोलन का नेतृत्व विजयसिंह पथिक द्वारा किया गया था जो कि सम्भवत: गाँधीजी के अहिंसक प्रतिरोध की पद्धति को देश में अनुप्रयोग करने वाला प्रथम व्यक्ति था । इस आन्दोलन को तरूण राजस्थान जैसे समाचार-पत्रों ने पर्याप्त रूप से प्रकाशित किया था ।

सन् 1918 में पथिक गाँधीजी से बम्बई में मिले । इसके बाद बिजौलिया मामले की जाँच हेतु महादेव देसाई को भेजने का निर्णय लिया गया । जब गाँधीजी ने जाँच के तथ्य को संतोषजनक पाया तब उन्होंने उदयपुर के महाराणा को समझौते के लिए याचना की और पथिक को वचन दिया कि यदि महाराणा द्वारा सभी शिकायतों का पर्याप्त निराकरण नहीं किया जाता तो वह व्यक्तिश: आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान करेंगे । गाँधीजी ने पथिक के समर्पण व प्रतिबद्धता से प्रभावित होकर लिखा है - "मैं तुम्हें पथिक के बारे में बता दूँ । वह एक कार्यकर्ता है जबकि अन्य बातुनी है। वह एक सैनिक, साहसी व विवेकी है, लेकिन जिद्दी भीकृ और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बिजौलिया की जनता उसमें अन्धा विश्वास रखती है । उन्होंने राजस्थान के कुछ कार्यकर्ताओं को सलाह दी, जो उनसे 1918 में खादी के प्रचार के दौरान मिले थे, कि शराब का निषेध तथा शिक्षा का प्रसार करो ।" इस प्रकार गाँधीजी 1918 से पहले, राजाओं के राज्यों में लोगों को उनके नागरिक अधिकारों के प्रति जागरूक बनाने के क्रम में रचनात्मक कार्य शुरू करना चाहते थे ।

सन् 1920 के नागपुर सत्र के दौरान पथिक गाँधीजी से पुन: मिले । गाँधीजी ने अंग्रेजों के विरूद्ध असहयोग आन्दोलन शुरू करने की घोषणा कर दी थी । उन्होंने पथिक से कहा- पथिक जी मैंने असहयोग आन्दोलन शुरू कर दिया है, लेकिन मैंने पूर्व में आपसे बिजौलिया आन्दोलन का नेतृत्व करने का वादा कर चुका हूँ मुझे बताओ, मुझे आपका सहयोग करना चाहिए या असहयोग आन्दोलन का नेतृत्व करूं । पथिक जी ने गाँधीजी को असहयोग आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए कहकर अभिभूत किया । उसने बापू, को बताया कि बिजौलिया उसके अनुयायियों द्वारा संचालित किया जा सकता है । जब सन् 1921 के काँग्रेस अधिवेशन में बिजौलिया के किसानों के प्रतिनिधि उपस्थित हुए तब गाँधीजी ने सार्वजनिक रूप से उनकी बहुत तारीफ की ।"

राजस्थान सेवा संघ की मध्यस्थता के साथ बिजौलिया के किसानों और सरकार के प्राधिकारियों के बीच एक समझौता सम्पन्न हुआ जो कि अन्तिम नहीं था क्योंकि प्राधिकारियों के रूप में उन्होंने समझौते की शर्तों की अनुपालना नहीं की । इस परिस्थिति में गाँधीवादी नेता हरिभाऊ उपाध्याय ने हस्तक्षेप किया और अक्षय तृतीया के अवसर पर (अप्रेल 1931) खेतों को जोतकर, जो कि पहले प्राधिकारियों को समर्पित किए जा चुके थे, के 'सत्याग्रह' का संचालन किया । सरकार ने पूरी शक्ति के साथ आन्दोलन को दबा दिया । गाँधीजी ने अपना संदेश भेजा कि "यदि किसान अहिंसक बने रहे तो उनकी ही जीत होगी" आगे 'सत्याग्रह' बापू की सलाह पर स्थगित कर दिया गया । जमनालाल बजाज और हरिभाऊ उपाध्याय की मध्यस्थता से एक समझौता सम्पन्न आ । इस आन्दोलन ने बेगू, बूँदी और शेखावाटी के किसानों को गाँधीजी की शान्तिपूर्ण एवं अहिंसक सत्याग्रह की पद्धतियों के प्रयोग करने को प्रेरित किया ।

10.3.2 असहयोग आन्दोलन एवं राजस्थान

हालांकि असहयोग आन्दोलन ब्रिटिश भारत में अपने चरम पर था, लेकिन राजा-महाराजा निश्चित थे कि यह आन्दोलन प्रत्यक्षत: उनके विरूद्ध नहीं था । महात्मा गाँधी की

नीति यह बनी हुई थी कि "शासक और शासितों को सच्ची प्रसन्नता दोनों के हार्दिक सहयोग में ही छुपी है तथा ऐसा कुछ भी अशुभ नहीं होगा जब भारतीय राज्यों में असहयोग के हमारे कार्यक्रम लाग किए जाएगें।" लेकिन ऐसी जनता की लहर भारतीय राज्यों एवं उसके राजनीतिक कार्यकर्ताओं पर प्रभाव छोड़ने को मजबूर थी । जमनालाल बजाज ने गाँधीजी के कहने पर सन् 1921 में उसकी 'राय बहादुर' की उपाधि वापिस को लौटा दिया ।

राजस्थान के राजनीतिक कार्यकर्ता काँग्रेस को अपने पक्ष में करने की मानसिकता के कारण उनकी शिकायतों व सम्बन्धित राज्य में प्रचलित कुशासन को प्रदर्शित करना चाहते थे । इसलिए नागपुर सत्र के दौरान, राजपुताना-मध्य भारत सभा के एक सत्र में एक प्रदर्शिनी का आयोजन किया जिसमें राज्यों के कुशासन के दमनकारी तथा बर्बरतापूर्ण कृत्यों को प्रदर्शित किया गया ।

जब से अजमेर-मेरवाड़ा राजपुताना के देशी राज्यों के बाहर एक अकेला क्षेत्र बना । तब से यह सक्रिय राजनीतिक कार्यक्रमों का केन्द्र बना हुआ था । अर्जुनलाल सेठी जब से अपने आपको क्रान्तिकारी गतिविधियों से अलग रखा, तब से शराब की एवं विदेशी वस्त्रों की दुकानों के आगे धरने का कार्यक्रम तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता का कार्यक्रम अजमेर में सफलता पूर्वक चला, इसलिए गाँधीजी ने उसकी प्रशंसा की । पंडित गौरीशंकर भार्गव ने विदेशी वस्त्रों के बहिश्कार का नेतृत्व किया।

बजाज ने तिलक स्वराज फण्ड में एक लाख रूपये की राशि का योगदान किया ।

10.3.3 राजस्थान में गाँधीजी की यात्राऐं

शोभालाल गुप्ता के अनुसार, गाँधीजी अक्टूबर 1921 में काँग्रेस के अहमदाबाद अधिवेशन से ठीक पहले, प्रथम बार अजमेर आये थे । वे श्री शेरसिंह द्वारा आमन्त्रित किए गए थे जो उस समय अजमेर की काँग्रेस गतिविधियों का संचालन करते थे ।

अहिंसा गाँधीजी के असहयोग आन्दोलन की नींव का पत्थर थी । मार्च 1922 के प्रथम सप्ताह में बहुत से राष्ट्रीय नेता जमात-उल-उलेमा एवं जमात-ए-तुलह, क्षेत्रीय राजनीतिक सम्मेलन एवं खिलाफत बैठकों में भाग लेने के लिए अजमेर में इकट्ठा हुए । इस बैठक के दौरान मुल्ला अब्दुल बारी भाषण के दौरान हिंसक हो गए । हालांकि उसको डॉ. अंसारी ने फटकारा भी, लेकिन फिर भी उसका संशोधित वक्तव्य गाँधीजी की अहिंसक भावना से उस समय तक मेल नहीं खा पाया था । गाँधीजी बिना किसी तय कार्यक्रम के 9 मार्च, 1922 को कुमारनन्दा के आमन्त्रण पर अजमेर की यात्रा की, तब उन्होंने उस घटनाचक्र के बारे में सुना । केवल अब्दुल बारी को ही अपने भाषण से नहीं रोका गया बल्कि दुसरे नेता हसरत मोहानी को भी स्वराज-पूर्ण आजादी के रूप में, के प्रस्ताव को पुन: परिभाषित करने की इजाजत नहीं दी गई । गाँधीजी ने अजमेर दरगाह शरीफ की यात्रा भी की । इस यात्रा में कार्यकर्ताओं को अनुशासन और आत्मसंयम तथा अहिंसक भावनाओं का पाठ पढ़ाया गया ।

गाँधीजी की तीसरी अजमेर यात्रा 5 जुलाई, 1934 को हरिजन उद्धार के कार्यक्रम को बढ़ावा देने के क्रम में हुई । इस समय वे राजपुताना हरिजन सेवक संघ द्वारा आमन्त्रित किए

गए । उन्होंने हरिजन सेवकों और महिलाओं को सम्बोधित किया । बाबा बालनाथ ने उनका घोर विरोध किया । तब ही उन पर आक्रमण भी हुआ । गाँधीजी ने 7 से 14 अगस्त, 1934 को व्रत के द्वारा तप किया । गाँधीजी अर्जुनलाल सेठी के निवास पर भी गये उन्होंने अपने को सक्रिय राजनीति से अलग कर लिया था । गाँधीजी ने उनसे पुन: सक्रिय राजनीति में आने का आग्रह किया । यह यात्रा गाँधीजी की सक्रिय एवं समर्पित कार्यकर्ताओं के लिए चिन्ता को दर्शाती है तथा उनकी निःस्वार्थ सेवा भावना के मूल्य को भी ।

10.3.4 राजस्थान में भील आन्दोलन एवं गाँधीजी

राजस्थान में भील आन्दोलन भीलों के परम्परागत अधिकारों के संरक्षण एवं उनके बीच सामाजिक सुधारों से जुड़ा हुआ था । वे मेवाड़, डूंगरपुर, बांसवाड़ा एवं सिरोही राज्यों की जनसंख्या का बहुत बड़ा हिस्सा थे । श्री मोतीलाल तेजावत ने सन् 1922 में समान कर व्यवस्था की मांग के क्रम में एक आन्दोलन का नेतृत्व किया । जब गाँधीजी ने इस आन्दोलन के बारे में सुना तब उन्होंने मणिलाल कोठारी को तथ्य-अन्वेशण मिशन पर भेजा उन्होंने तेजावत और मि. हालैण्ड, जो कि समझौते के लिए राजपुताना का गवर्नर जनरल का एजेन्ट था, को सफलता पूर्वक समझाया । लेकिन सरकार ने कोई संवेदनशील प्रयास नहीं किए और भीलों के शान्तिपूर्ण आन्दोलन पर गोलीबारी करवायी गई । 11 फरवरी, 1922 को श्री तेजावत ने गाँधीजी को उनकी सहायता और निर्देशन हेतु लिखा । गाँधीजी ने तेजावत को 26 फरवरी, 1922 के नवजीवन में जवाब देते हुए सलाह दी कि 'अंग्रेज शासकों का सहयोग पाने के लिए जरूरी है कि उनके साथ बिलकुल भी सहयोग नहीं किया जाए ।' जब तेजावत गिरफ्तार कर लिए गए, तब मणिलाल कोठारी की प्रार्थना पर गाँधीजी ने मेवाड़ के महाराणा से अपील की कि 'तेजावत को भीलों के तथा साथ में राज्य के कल्याण के लिए मुक्त कर दिया जाए ।' यह अपील 5 सितम्बर, 1929 के नवजीवन में प्रकाशित हुई थी । लेकिन इस अपील का मेवाड़ सरकार पर कोई असर नहीं हुआ । 23 अप्रेल, 1936 तक तेजावत को रिहा नहीं किया गया था । इस घटना ने स्पष्ट कर दिया कि राज्य की दमनकारी व तानाशाही नीतियाँ जनमत व लोकतन्त्र की भावना के विरूद्ध थी ।

10.3.5 नीमुचाणा त्रासदी एवं गाँधीजी

14 मई, 1925 को अलवर के शासक - सवाई जयसिंह ने नीमुचाणा के कृषकों की शान्तिपूर्ण सभा पर गोलीबारी के आदेश दिये । उसके बाद कोर्ट केस व गिरफ्तारियाँ हुई । राष्ट्रीय समाचार पत्रों ने इस घटना को जलियावाला बाग हत्याकाण्ड के साथ तुलना की । राजस्थान सेवा संघ ने तथ्यों को जुटाया और उनको गाँधीजी के पास भेज दिया । 24 फरवरी, 1929 के 'यंग राजस्थान' में गाँधी ने टिप्पणी करते हुए कहा कि ''यदि सभी रिपोर्ट्स जो कि प्रकाशित हुई है, सही है, तो ये सभी दोहरे हत्याकाण्ड के प्रमाण है... अभी इसके लिए मेरे पास अभी कोई उपचार नहीं है ।'' जो समाचार पत्र ऐसे कठोर आरोपों की गहन छानबीन कर रहे हैं वह सराहनीय कदम है । उन्होंने अपने प्रयासों से कॉंग्रेस के नागपुर अधिवेशन के दौरान प्रजा

परिषद् सम्मेलन में एक प्रस्ताव पारित कर नीमुचाणा की अमानवीय घटना पर तथा राज्य सत्ता द्वारा मुक्त तथा उचित जाँच को रोकने में सत्ता दुरूपयोग एवं अत्याचार पर दुःख जताया ।

उन्होंने उन प्रभावित लोगों को हिन्दी में एक सन्देश भेजा कि 'कोई भी अत्याचारी तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसे पद्दलित उत्पीड़ित की सहायता नहीं मिल जाए । यदि लोग इसको समझ जाते हैं तो यह सबसे बड़ी सहायता मानी जाएगी ।

हालांकि काँग्रेस ने घटना से प्रभावित लोगों के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त की लेकिन वह राज्य के आतंक के विरूद्ध कोई प्रस्ताव पारित नहीं करवा सकी । इसके पीछे विद्यमान कारण राज्य के आन्तरिक मामलों में अहस्तक्षेप की नीति को अपनाना था । महात्मा गाँधी ने 30 जुलाई, 1925 के 'नवजीवन' के हिन्दी संस्करण में काँग्रेस के अहस्तक्षेप की नीति का औचित्य बताया कि "पिछले कुछ वर्षों से काँग्रेस की देशी राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करने की परम्परा रही है । काँग्रेस के सदस्य सोचते थे कि यह परम्परा उनके लिए शुभ है तथा इसको तोड़ना मुर्खता होगी । बजाज ने अलवर जनसंहार की जाँच हेतु बोर्ड के गठन के प्रस्ताव को वापिस ले लिया । लेकिन मैंने बजाज से मेरे व्यक्तिगत विचारों को प्रकट करने का वादा किया कि क्यों नहीं काँग्रेस को राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करना चाहिए । कुछ लोग इसे समय के अनुकूल, उचित व सहायक नीति मानते थे । लेकिन यह इन दोनों से भी कुछ ज्यादा थी । अब यह खुले रूप से स्वीकार किया जाने लगा था कि काँग्रेस के पास ब्रिटिश भारत में विद्यमान अंग्रेजी सत्ता के समान अपने आदेशों को देशी राज्यों में क्रियान्वयन की सत्ता नहीं है । इसलिए दूरदृष्टि निष्क्रिय बने रहने में ही जो कि प्रभावी और दूरदृष्टिता दोनों ही दृष्टि से पूर्ण है । काँग्रेस का उद्देश्य देशी राज्यों को कमजोर या नष्ट करने का नहीं है, बल्कि उसकी इच्छा उनमें सुधार करने की है । यह भी ध्यान रहे कि काँग्रेस का निष्क्रिय एवं असंलग्न रहने का तात्पर्य यह नहीं है कि काँग्रेस चुप बैठी रहेगी । क्षेत्रीय एवं स्थानीय संस्थाऐं तब तक उत्पीडित की सहायता व संरक्षण कर सकती है तब तक कि सत्ता के साथ कोई टकराव न हो । लेकिन उनका कार्य अस्त-व्यस्त या काँग्रेस की गतिविधियों से जुड़ा हुआ नहीं होना चाहिए । क्या देशी राज्यों को काँग्रेस जैसे राष्ट्रीय संगठन से सहायता की मांग नहीं करनी चाहिए? वे प्रत्यक्ष रूप से उससे सहायता की आशा नही रखते थे, लेकिन ही, वे अप्रत्यक्ष सहायता की आशा कर सकते हैं क्योंकि एक शक्तिशाली काँग्रेस देशी राज्यों को बहुत हद तक प्रभावित कर सकती है ।" "मुझे विश्वास है कि अलवर के दुःखी लोग यह समझते हैं कि यदि काँग्रेस प्रत्यक्षत: उनकी सहायता नहीं कर सकती है तो वह इच्छा शक्ति की वजह से नहीं बल्कि योग्यता व अवसर की अनुपस्थिति के कारण वह ऐसा नहीं कर सकती ।"

गाँधीजी का यह लम्बा वक्तव्य स्पष्ट रूप से एक ऐसी अनिश्चित परिस्थिति को दिखाता है जिसमें काँग्रेस अपने आपको पाती थी । जिसमें देशी राज्यों के कार्यकर्ता श्रद्धापूर्वक उससे सलाह एवं निर्देश लेते थे, लेकिन यह संगठन उनकी आशाओं की हद तक पहुँचने में असफल रहा । इसके पीछे प्रचलित राजनीतिक दशाऐं परमोच्च सत्ता के साथ सम्पन्न समझौतों से शासकों की बढ़ी हुई संवैधानिक स्थिति जिम्मेदार थी । 1939 में जाकर काँग्रेस राज्यों के दमनकारी कार्यों की आलोचना हेतु प्रस्ताव पास करवा सकी थी ।

यह वक्तव्य गाँधीजी की उस आशा को भी दिखाता है कि शायद क्षेत्रीय व स्थानीय संगठनों को आवश्यकता से ज्यादा करना चाहिए था । अन्त में, गाँधीजी का वक्तव्य 'देशी राज्यों के मामलों में काँग्रेस की निम्न स्थिति को दिखाता है । राज्य के लोगों के हितों के संवर्द्धन हेतु गाँधीजी ने सन् 1929 में रामनारायण चौधरी के समक्ष 'द प्रिंसेज एण्ड पिपलन सर्विस सोसाइटी' नामक संगठन की स्थापना का प्रस्ताव रखा । गाँधीजी ने स्वयं इसका संविधान तैयार किया और इस संगठन का पथ-प्रदर्शन करने को सहमत हुए । लेकिन इसकी क्रियान्विति के स्तर पर कुछ मतभेदों के चलते यह योजना मूर्त रूप नहीं ले सकी ।

10.3.6 नमक सत्याग्रह एवं राजस्थान

महात्मा गाँधी द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन की घोषणा के साथ ही एक बार पुन: राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक जीवन में हलचल शुरू हो गई । ब्रिटिश सरकार ने देशी राज्यों को अपने सम्बन्धित राज्यों में इस आन्दोलन के फैलने की चेतावनी दी । सविनय अवज्ञा आन्दोलन की शुरूआत अजमेर से हुई । यहाँ बड़ी-बड़ी बैठकों का आयोजन हुआ एवं धरने दिए गए । अजमेर की सरकारी कॉलेज के विद्यार्थियों ने भी सत्याग्रह आन्दोलन चलाया । हट्टूण्डी (अजमेर के पास) में नमक सत्याग्रह के लिए काँग्रेस सेवा दल के कैम्प का आयोजन हुआ और दुर्गाप्रसाद चौधरी को इसका कप्तान बनाया गया । स्थानीय संगठनों ने निरन्तर अपने-अपने राज्यों में उदार-लोकतान्त्रिक एवं उत्तरदायी सरकार बनाने के लिए निरन्तर विरोध-प्रदर्शन जारी रखा ।

धीरे-धीरे गाँधीजी ने महसूस किया कि ये देशी राज्यों के शासक सभी जुल्मों से ब्रिटिश सरकार के समर्थन के कारण बिना किसी नुकसान के बच निकलते हैं । एक अंग्रेज संसद सदस्य को गाँधीजी ने जवाब देते हुए टिप्पणी की कि "देशी राज्यों में स्थिति ब्रिटिश भूभाग से ज्यादा खराब है । लेकिन इसके लिए आप जिम्मेदार है । यदि आप उनसे अपना समर्थन वापिस ले लेते हो तो, या तो शासक स्वयं अपने आपको सुधार लेंगे या हम इन मामलों की व्यवस्था देखेंगे ।"

गाँधीजी ने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में राजशाही हेकड़ी को तब देखा था जब उन्होंने राजाओं से अपील की कि किसी भी योजना में लोगों को स्थान दिया जाए ताकि वे सक्षम बन सके । लेकिन बीकानेर के महाराजा गंगासिंह ने संघीय सभा के लिए प्रतिनिधियों के चुनाव की मांग का घोर विरोध किया और कहा कि शासक ही उनके लोगों के अकेले प्रतिनिधि हो सकते हैं । इसने अपने राज्य में गाँधीजी की पुस्तक 'हिन्द-स्वराज' पर प्रतिबन्ध लगाया । जो कि किसी भी रूप में हानिकारक पुस्तकों में शामिल नहीं थी । गाँधीजी ने अपनी इस पुस्तक में लिखे निम्नलिखित गद्यांश के लिए स्पष्टीकरण दिया - आप अनेकों भारतीय राज्यों में जनता को प्रवेश दिलाऐंगे तो खाई भरेगी, देशी राज्यों के राजाओं ने लोगों को निर्दयता से कुचला है । उनका आतंक ब्रिटिश अत्याचार से ज्यादा व्यापक है और यदि आप भारत में तानाशाही या निरंकुशता चाहते हैं तो हम कभी भी सहमत नहीं होंगे । मेरी देशभक्ति मुझे लोगों को राजाओं की एडियों के नीचे कुचले जाने की इजाजत देने की शिक्षा नहीं देती है । यदि अंग्रेज पीछे हट

जाते हैं, और मुझे अंग्रेजों जितनी शक्ति प्राप्त हो जाती है तो मुझे भारतीय राजाओं के अत्याचार का प्रतिरोध करना चाहिए।

सन् 1931 में जोधपुर युवा लीग ने स्वदेशी के लिए अभियान चलाया तथा शराब की दुकानों व विदेशी वस्त्रों की दुकानों के सामने धरने दिए ।

1935 की संघीय योजना में देशी राज्यों के शामिल नहीं होने की घटना ने उनके प्रति काँग्रेस की निष्क्रिय एवं अहस्तक्षेप की नीति को बदलने का मुख्य काम किया । काँग्रेस को विश्वास हो गया कि यदि राज्यों के जागरूक लोगों का उसने समर्थन नहीं किया तो देशी राज्यों की शक्ति स्वतन्त्र भारत से अलग हो सकती है । गाँधी ने इसको इस रूप में देखा कि राज्यों के लोगों के बीच राजनीतिक जागरूकता या राजनीतिक चेतना घर करती जा रही है जो प्रतिबन्धों को पूर्णत: समाप्त या आशिक कमी की ओर ले जा सकती है । परिणामत: राज्यों के लोगों में काँग्रेस की पहचान बढ़ेगी ।"

10.4 हरिपुरा काँग्रेस अधिवेशन एवं भारतीय राज्य

अब धीरे-धीरे काँग्रेस को यह महसूस होने लग गया था कि देशी राज्यों के लोकप्रिय आन्दोलन के संदर्भ में उसकी नीति को पुनर्परिभाषित करने की तुरन्त आवश्यकता है । काँग्रेस के हरिपुरा अधिवेशन (फरवरी 1938) में एक नया प्रस्ताव आया जिसमें कहा गया कि काँग्रेस राज्यों में भी शेष भारत की तरह ही समान राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्वतन्त्रताओं का समर्थन करती है और देशी राज्य भारत के अभिन्न अंग हैं जो अलग नहीं किए जा सकते । इसलिए काँग्रेस राज्यों में पूर्ण उत्तरदायी सरकार एवं नागरिक स्वतन्त्रता की गारन्टी का समर्थन करती है और वर्तमान में कई राज्यों में पिछड़ी दशाओं के लिए, व्यापक स्वतन्त्रता का अभाव एवं नागरिक स्वतन्त्रताओं का दमन के लिए खेद प्रकट करती है । अब काँग्रेस ने माना है कि राज्यों में इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कर्म करना उसका अधिकार और विशेषाधिकार दोनों है । लेकिन विद्यमान परिस्थितियों में राज्यों में इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु काँग्रेस प्रभावी रूप से कार्य करने की स्थिति में नहीं है क्योंकि शासकों ने कई अधिक सीमाऐं व प्रतिबन्ध लगा रखे हैं और ब्रिटिश सरकार उनको समर्थन प्रदान कर रही है । काँग्रेस की इच्छा है कि राज्यों के लोगों को उनकी एकजुटता का विश्वास दिलाया जाए और सक्रिय एवं सतर्क हितों में तथा स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रति सद्भावना प्रदर्शित की जाए । यह विश्वास है कि मुक्ति के दिन दूर नहीं हैं।"

सितम्बर 1938 में अखिल भारतीय काँग्रेस समिति द्वारा पारित प्रस्ताव में कहा गया कि "काँग्रेस की सहयोग की नीति एक निरन्तर प्रयास की होनी चाहिए जो राजाओं के विचारों को इस रूप में रूपान्तरित करें कि उनका सच्चा कल्याण स्वैच्छिक रूप में, जो ब्रिटिश भारत के नाम से जाना जाता है, जिसमें सम्बन्धित राज्यों में संवैधानिक प्रधान होता है, को सत्ता सौंपने में ही निहित है।"

इस प्रस्ताव में काँग्रेस ने अपना उद्देश्य स्पष्ट रूप से राज्यों के लोगों के साथ एकीकृत किया जो कि अब तक लोगों के कन्धों पर निर्भर था । गाँधीजी ने 26 फरवरी, 1938 को अपने समाचार पत्र 'हरिजन' में शासकों को सलाह दी कि इस संगठन के साथ गठजोड़ एवं मित्रता की जाए जो कि भविष्य में परमोच्च सत्ता को हटायेगी । काँग्रेस का सहयोग एवं

सद्भावना का विश्वास तथा स्थानीय संगठनों के निर्माण का आव्हान ने राजस्थान के राज्यों में प्रजामण्डल आन्दोलन के जन्म एवं विकास का नेतृत्व किया । सन् 1931 में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अखिल भारतीय राज्यों के लोगों के सम्मेलन (All India States peoples' Conference) की अध्यक्षता ग्रहण की । इस नीतिगत बदलावों के सन्दर्भ में गाँधीजी ने 3 मार्च, 1938 के हरिजन में लिखा कि-

"काँग्रेस की अहस्तक्षेप की नीति, मेरे विचार में उस समय राजनीति का उत्कृष्ट नमूना था, क्योंकि तब राज्यों के लोग राजनीतिक रूप से जागरूक नहीं थे । यह नीति उस समय कायरता होती जब राज्यों के लोगों के बीच राजनीतिक जागरूकता का व्यापक प्रसार हो तथा उनके उचित अधिकारों की आजादी के लिए लम्बे संघर्ष से गुजरने का एक दृढ़ निश्चय है ।"

अब शासक भी उनके राज्यों में बढ़ती अचानक राष्ट्रवादी गतिविधियों की लहर एवं वृद्धि के कारण सचेत हो गए । अब आन्दोलन को दबाना कठिन हो गया ।

10.5 प्रजामण्डल आन्दोलन एवं गाँधीजी

प्रजानण्डल आन्दोलन का लक्ष्य उनके शासकों की छत्रछाया के तहत उत्तरदायी सरकारों की स्थापना करना था । उनकी माँगों में शामिल था - एक अच्छा एवं उदार प्रशासन, नागरिकों के लिए नागरिक स्वतन्त्रताऐं, प्रेस की आजादी, स्थानीय निकायों में प्रतिनिधित्व एवं बेगार सहित अन्यायपूर्ण करों में सुधार । यह कहना अनावश्यक होगा कि इन उदारवादी माँगों की निन्दा की गई और शासकों द्वारा नकार दी गई । बहुत से राज्यों में प्रजामण्डलों को प्रतिबन्धित किया तथा अवैध घोषित किया गया ।

मेवाड़ (1938), कोटा (1936), अलवर (1938), जयपुर (1938), एवं जैसलमेर (1940) में प्रजामण्डलों की स्थापना हुई । भरतपुर राज्य प्रजा परिषद् (1939) एवं मारवाड़ लोक परिषद् (1938) ने भी इसी प्रकार की सेवा की । इन संगठनों ने गाँधीजी का पर्याप्त ध्यान खींचा तथा मार्ग निर्देशन भी प्राप्त किया ।

मेवाड़ में सत्याग्रह की शुरूआत 4 अक्टूबर, 1938 को तब हुई जब प्रजामण्डल पर से प्रतिबन्ध हटा लिया गया । नाथद्वारा में कार्यकर्ताओं पर लाठी चार्ज करने पर 18 फरवरी, 1939 को गाँधीजी ने टिप्पणी की कि - राज्य के सिविल प्रतिरोधकों को याद होना चाहिए कि वास्तविक युद्ध अभी बाकी है । छोटे-बड़े राज्य एकीकृत होकर कार्यवाही करते प्रतीत होते हैं । वे ब्रिटिश भारत में अंग्रेजों द्वारा अपनायी गई पद्धति की नकल कर रहे हैं । वे सनकी हैं उन्हें जनमत का कोई भय नहीं है, जबकि देशी राज्यों में तो ऐसा कोई भी नहीं है । कुछ दुर्लभ मामलों को छोड़कर के ।"

इसके बाद 3 मार्च, 1939 को मेवाड़ प्रजामण्डल ने अपने आन्दोलन को गाँधीजी की सलाह पर स्थगित कर दिया, इस आशा के साथ कि संगठन पर से प्रतिबन्ध उठा लिए जायेंगे और लोगों को बोलने की, प्रेस की तथा संगठन बनाने की आजादी मिल जाएगी ।

जब जमनालाल बजाज ने अकाल राहत कार्यों के संचालन हेतु जयपुर यात्रा करने का निर्णय किया तो जयपुर सरकार ने उनके प्रवेश को निषेध कर दिया और जयपुर प्रजामण्डल को

1939 में अवैध घोषित कर दिया । गाँधीजी ने बजाज को सरकार के आदेशों का उल्लंघन नहीं करने की सलाह दी । कोई भी अन्तिम निर्णय लेने से पहले उससे सलाह करने को कहा । बजाज गाँधीजी से सलाह लेने बारदोली गए जहाँ गाँधीजी उनकी उग्र एवं बड़ी मांगों को अलग रख दिया और स्वयं ने नई मांगों का एक प्रारूप तैयार किया जिसमें भाषण की स्वतन्त्रता, संगठन बनाने की स्वतन्त्रता जैसी नागरिक स्वतन्त्रताऐं शामिल थी । स्पष्ट रूप से महात्मा गाँधी एक दृष्टि रखते थे और देशी राज्यों में राजनीतिक आन्दोलन की सीमाओं को समझते थे । 16 जनवरी, 1939 के 'हरिजन' में गाँधीजी ने प्रजामण्डल के प्रतिबन्ध पर टिप्पणी करते हुए लिखा कि - "यह पूर्णतया खतरनाक है और श्री जमनालाल बजाज एवं जयपुर के लोग उनके निर्देश पर सभी ताकतों के साथ प्रतिरोध के लिए प्रतिबद्ध है, काँग्रेस को अहिंसा और सत्य के धर्म के साथ स्वतन्त्रता में कोई संदेह नहीं है । यह भी पता होना चाहिए कि महाराजा अपने मंत्रियों के हाथों का यंत्र मात्र है, जिनमें से ज्यादातर बाहरी लोग हैं तथा उनमें भी कुछ अंग्रेज हैं ।"

यह गाँधीजी का देशी राज्यों के आन्तरिक प्रशासन एवं उसके राज्य में शासक की स्थिति के सम्बन्ध में एक कठोर टिप्पणी थी । गाँधी के '5वे पुत्र' को उसकी अपनी भूमि पर प्रवेश से मना करने पर गाँधीजी इतने विचलित हुए कि उन्होंने सरकार को एक व्यापक भारतीय संकट की चेतावनी दी, यदि प्रतिबन्ध नहीं हटाया गया तो । उन्होंने पुन: 22 जनवरी, 1939 के द ट्रिब्यून में टिप्पणी करते हुए लिखा कि - "जयपुर के बारे में अनोखी बात यह है कि वहाँ का वास्तविक शासक एक उच्च पदस्थ अंग्रेजदां (सर डब्ल्यू बेउचाम्प सेंट जॉन, जयपुर राज्य के प्रधानमंत्री) है, महाराजा नहीं है ।"

वे आगे जोड़ते हैं - "यह समय राजाओं और केन्द्रीय सरकार के लिए कार्यवाही की समान नीति धीरे-धीरे विकसित करने का है ।"

स्पष्टत: गाँधीजी देख सकते थे कि देशी राज्यों के सभी राजे-महाराजे दमन की पद्धति का समान रूप से अनुसरण कर रहे थे और वे इसकी गुप्त अनुशंसा केन्द्र सरकार द्वारा प्राप्त करते थे, इसलिए वे विश्वास करते थे ।

बजाज पर दोबारा प्रतिबन्ध लगाया, गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया परिणामत: सविनय अवज्ञा आन्दोलन जयपुर में अपने चरम पर था । गाँधीजी ने 12 फरवरी, 1939 के 'हरिजन' में लिखा है कि-

"काँग्रेस प्रतिक्षा और निगाह नहीं कर सकती जबकि जयपुर के लोग मानसिक और नैतिक भूख से मरे जा रहे हैं । विशेषकर जब ब्रिटिश ताकत द्वारा समर्थित सरकार राष्ट्रीय अधिकारों की मांग को नकारती हो । यदि प्रधानमंत्री को इसे रोकने की सत्ता नहीं है तो उसे बुलाना चाहिए ।"

उन्होंने गिरफ्तारी के सम्बन्ध में वायसराय लिनलिथगो को भी लिखा । गाँधी की सलाह पर 24 मार्च, 1939 को सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया ताकि राज्य सरकार प्रजामण्डलों की माँग के सम्बन्ध में कोई नीति बनाने का एक अवसर दिया जा सके । जब राज्यों ने कैदियों को रिहा करने से मना किया तब 22 मई, 1939 को टाइम्स ऑफ इण्डिया

में गाँधीजी ने एक लेख लिखकर उनको चेतावनी दी । आखिरकार जयपुर के प्रधानमंत्री सर बेउचाम्प सेंट जॉन को केन्द्रीय सरकार ने बुला लिया और राजा ज्ञाननाथ को प्रधानमंत्री बनाया गया, जिसके साथ बजाज सफलतापूर्वक 'देशी शासकों के तहत उत्तरदायी सरकार की स्थापना' के लिए समझौता किया जो कि प्रजामण्डल का तात्विक लक्ष्य था । इस उपलब्धि पर गाँधीजी ने बजाज को बधाई दी ।

मारवाड़ लोक परिषद् ने दमनकारी कानूनों के विरूद्ध सत्याग्रह आन्दोलन चलाया । सन् 1939 में वर्धा में पथिक गाँधीजी से मिले और उनको आन्दोलन की सूचना दी । गाँधीजी ने कार्यकर्ताओं से केन्द्रीय सलाहकारी बोर्ड की सदस्यता से तथा साथ ही राज्य सरकारों द्वारा गठित विभिन्न समितियों से भी त्याग-पत्र देने की सलाह दी । जोधपुर राज्य ने परिषद् को अवैध घोषित कर दिया । गाँधीजी ने 16 अप्रेल, 1940 को महाराजा द्वारा परिषद् पर प्रतिबन्ध की वैधता पर टिप्पणी करते हुए कहा कि लोक परिषद् के विरूद्ध दमनकारी कार्यों को उसके समर्थन में महाराजा अनावश्यक रूप से उनकी संधियों एवं दोस्ती को अंग्रेजों के साथ और यूरोप में युद्ध में खींच रहे हैं । उसे ऐसा करने में कोई हिचकिचाहट नहीं हो रही है । यह लोगों के हित में है कि कम से कम परिषद् के विरूद्ध लगाये गए आरोप तो सिद्ध हो । इस समय में परिषद् के सदस्य न्याय पा रहे हैं या नहीं मुझे नहीं मालूम, लेकिन मुझे आशा है वे निरन्तर इन सभी बुराइयों के विरूद्ध निरन्तर संघर्षरत रहेंगे ।

अजमेर काँग्रेस द्वारा 1940 में 8 से 16 अप्रेल तक राष्ट्रीय सप्ताह मनाया गया जिसमें जलियावाला बाग हत्याकाण्ड की वर्षगांठ भी मनायी गई । इसकी मुख्य विशेषताऐं थी - खादी और घरेलू सामान की प्रदर्शनी तथा काँग्रेस के झण्डे फहराना । पुलिस ने प्रदर्शनी सचिव को झण्डों को हटाने के आदेश दिए लेकिन उसने आदेश को मानने से मना कर दिया । फिर पुलिस ने इन्हें हटाया और कार्यकर्ताओं ने उस वक्त गाँधी की प्रशंसा में नारे लगाये । गाँधीजी ने कार्यकर्ताओं से कहा कि आदेशों को प्रस्तुत करें और कमिश्नर के आदेशों की आलोचना करें (हरिजन 20 अप्रेल, 1940) । अजमेर कमिश्नर के लिए अजमेर के बिगड़ते हालात से निपटना बहुत कठिन है, वह ब्रिटिश सम्मान को नहीं बढ़ा पाए हैं । यह तर्क दिया जा सकता है कि कमिश्नर कोई बहुत खराब नहीं है बजाय बहुत से ऐसे सरकारी अधिकारियों के जो दण्ड के डर से मुक्ति के साथ कई ज्यादा खराब कार्य करते हैं । बाद में उनको सौंपे गए तथ्यों से संतुष्ट हो उन्होंने 16 अप्रेल, 1940 को हरिजन में लिखा था कि मेरे विचार से, इस मसले की केन्द्र सरकार द्वारा जाँच की जानी चाहिए । सामान्यत: मुझे ऐसे आदेशों को नकारने में कोई संकोच नहीं होता है । लेकिन यहाँ अब एकता नहीं है । मुस्लिम लीग ने खुले रूप से झण्डे को नकारना शुरू कर दिया । यह ज्यादा बेहतर होगा कि इस तरह के अपमान का बदला लेने की भावना को दबाया जाए । राजनीतिक कार्यकर्ताओं ने कमिश्नर की आपत्तियों के जवाब में तथ्य भेजे ।

उपर्युक्त वक्तव्य में गाँधीजी का हिन्दु-मुस्लिम एकता की भावना का भ्रम स्पष्ट रूप से सामने आ गया ।

1941 में अजमेर के मुकुट बिहारी भार्गव की युद्ध विरोधी अभियान और गाँधीजी द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित व्यक्तिगत सत्याग्रह को देखने के लिए काँग्रेस कमेटी का प्रथम डिक्टेटर के रूप में नियुक्ति की गई ।

10.6 भारत छोड़ो आन्दोलन एवं राजस्थान

गाँधीजी ने राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए अन्तिम आगाज करने का पुन: निर्णय लिया और शायद प्रथम बार देशी-राज्यो के लोगों को भी आगामी संघर्ष में उनकी भूमिका के बारे में निर्देश दिए । गाँधीजी ने गवालिया टैंक ग्राउण्ड (बम्बई) से लगभग भारतीय राज्यों से आये 100 प्रतिनिधि मण्डलों को आगामी जन आन्दोलन में उनकी भूमिका के नारे में सम्बोधित किया । उन्होंने आगामी आन्दोलन में देशी राज्यों से शिरकत करने के लिए एक रूपरेखा प्रस्तुत की । उन्होंने सलाह दी कि प्रत्येक प्रजामण्डल को अपने राज्य के शासक को एक पत्र भेजना चाहिए जिसमें उससे अंग्रेजी सत्ता से सम्बन्ध तोड़ लेने की प्रार्थना करनी चाहिए ।

जयपुर प्रजामण्डल निरन्तर रूप से उत्तरदायी सरकार का आश्वासन पाने के चक्कर में संघर्षरत रहा । 20 अगस्त, 1942 को उदयपुर प्रजामण्डल ने एक प्रस्ताव पारित करते हुए राज्य में उत्तरदायी सरकार की स्थापना की मांग रखी और ब्रिटिश सरकार से सभी सम्बन्धों को तोड़ने की भी मांग की । इसके उलट सरकार ने दमन के कठोर हथकण्डों का सहारा लेना शुरू कर दिया । बीकानेर में रघुवीर दयाल गोयल को गिरफ्तार कर राज्य से बाहर भेज दिया क्योंकि उसने जुलाई, 1942 में उत्तरदायी सरकार की मांग रखी थी । उसका निर्वासन व्यापक रूप से चर्चा का और आलोचना का विषय रहा, 8 अगस्त, 1942 की अखिल भारतीय राज्य जन सम्मेलन की स्थायी समिति की बैठक में, जो कि गाँधी द्वारा जेल में सम्बोधित की गई थी । भरतपुर प्रजा परिषद् ने 6 से 13 अप्रेल, 1942 में 'भरतपुर में राष्ट्रीय सप्ताह' मनाया । राज्य ने इस आन्दोलन को कुचलने की कोशिश की । कोटा में सत्याग्रह आन्दोलन ने तब अलग स्वरूप ग्रहण किया जब सत्याग्रहियों ने कोटा शहर के प्रशासन को तीन दिन तक ठप्प कर दिया और इसे अपने नियंत्रण में ले लिया ।

जोधपुर के सत्याग्रह ने गाँधी का ध्यान खींचा । मारवाड़ लोक परिषद् ने उत्तरदायी सरकार की स्थापना और जागीरों में लाग-बागों को कम करने के लिए प्रतिरोध शुरू किया । दमन दोहरा था एक तरफ राज्यों द्वारा तथा दूसरी ओर जागीरदारों द्वारा । गाँधीजी ने 10 मई, 1942 के 'हरिजन' में लिखा है -

"...और अब जोधपुर से चिंताजनक समाचार आया है । वहाँ भी, अन्य राज्यों के समान ही, स्थानीय परिषद् के लोग सत्ता के साथ सहयोग कर कार्य करने की कोशिश की है । उन्होंने कोई भी राजनीतिक जागरूकता का प्रश्न नहीं उठाया । लेकिन राजपुताना के राज्य दूसरों के समान बहुत से जागीरदार रखते हैं जो राजा-महाराजाओं के साथ सहभागी है और उनके सत्ता का संचालन भी करते हैं । उन्हें भी राज्यों के बीच राज्य की संज्ञा दी जा सकती है । उनको संचालित करने वाले कोई कानून नहीं हैं । राजे-महाराजा उनसे हमेशा ही भयभीत रहे हैं । उनमें जागीरदार के क्षेत्र में जनता के मामलों में हस्तक्षेप करने का कोई साहस नहीं है । परिणामत: भारतीय पदसोपान में जागीदारी प्रथा में लोगों की स्थिति बद से बदतर हो गई है । ब्रिटिश

भारत में सरकार द्वारा समर्थित कोई संगठन, ऐसा कहा जाता है कि, लोकप्रिय परिषदों के विरूद्ध स्थापित होते हैं ।"

13 जून, 1942 को ब्यावर में आयोजित राजपुताना के राजनीतिक कार्यकर्ताओं की बैठक में जोधपुर आन्दोलन पर चर्चा हुई और बाद में व्यास जी की भूख हड़ताल और सत्याग्रह पर चिन्ता व्यक्त करते हुए राजपुताना के नेताओं ने एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया जिसमें शामिल राजनेता थे - हीरालाल शास्त्री (जयपुर प्रजामण्डल के नेता), लादूराम जोशी (सचिव, जयपुर राज्य प्रजामण्डल), मास्टर भोलानाथ (अलवर राज्य प्रजामण्डल), गोकुल भाई भट्ट (सचिव, राजस्थान संघ), हरिभाऊ उपाध्याय (अजमेर-मेरवाड़ा), पुखराज सिंघवी (सिरोही), आनन्द राज सुराणा (दिल्ली से), दुर्गाप्रसाद चौधरी (सम्पादक, नवज्योति, अजमेर), मुकुट बिहारी भार्गव (अजमेर काँग्रेस कमेटी), मुकुट बिहारी वर्मा (सम्पादक, हिन्दुस्तान, दिल्ली), सत्यदेव विद्यालंकार (सम्पादक, विश्वमित्र), सेठ घीसूलाल आदि ।

दूसरी बैठक 23 जून, 1942 को वकील द्वारकादास पुरोहित के कार्यालय में आयोजित हुई । जिसमें शामिल राजनीतिक नेता थे - श्री प्रकाश (एम.एल.ए., बनारस एवं ड्येपुटी ऑफ महात्मा गाँधी), द्वारकानाथ कोचर (सचिव, पं. नेहरू), कन्हैयालाल विद्या (ए.आई.एस.पी.सी. की कार्यकारी समिति के सदस्य), लादूराम जोशी (सचिव, जयपुर राज्य प्रजामण्डल), ठाकुरदास (बनारस के बडे राजनीतिक कार्यकर्ता) हरेन्द्र कुमार (मारवाड़ लोक परिषद् के प्रचारक सचिव), भोलानाथ (अध्यक्ष, अलवर राज्य प्रजामण्डल) एवं अन्य । लादूराम जोशी ने श्री प्रकाश को कहा कि महात्मा गाँधी को यह कहना, यदि जोधपुर आन्दोलन को सम्पूर्ण राजपुताना का आन्दोलन बना दिया जाए तो जिसमें जयपुर से हीरालाल शास्त्री ने अपने को 100 अन्य स्वयंसेवकों के साथ आन्दोलन में सहायता का प्रस्ताव रखा । इसी तरह अलवर से भोलानाथ 100 स्वयंसेवकों के साथ सहयोग करने का प्रस्ताव रखा । श्री प्रकाश इन विभिन्न सुझावों को सुनने के बाद कार्यकर्ताओं से कहा कि वह इन सब बातों को गाँधीजी के समक्ष रखेंगे और वर्धा को प्रस्थान कर गये ।

गाँधीजी उस समय जोधपुर सत्याग्रह, पर निरन्तर अपने लेखों में (हरिजन) टिप्पणी करते रहे, जिसने काफी गम्भीर रूप ग्रहण कर लिया था । गाँधीजी ने जयनारायण व्यास की गिरफ्तारी पर टिप्पणी करते हुए 30 मई, 1942 को लिखा, "मुझे आशा है कि वह (व्यास) अच्छी तरह समझते हैं कि उसे स्वयं ही सम्पूर्ण भार अपने कंधों पर आगे ले जाना है, उन्होंने हिन्दुस्तान के कोने-कोने से बहुत सारी सद्भावनाऐं प्राप्त की लेकिन इनका उनके लिए कोई अर्थ नहीं था ।" 7 जून, 1942 के हरिजन में उन्होंने लिखा है - जोधपुर से यह समाचार आया है कि श्री जयनारायण व्यास को महाराजा से मुलाकात करने की इच्छा के कारण और जोधपुर में उत्तरदायी सरकार के लिए आन्दोलन जारी रखने के प्रस्ताव के लिए गिरफ्तार कर लिया है । प्रत्यक्षत: श्री जयनारायण व्यास के पास कोई अन्य विकल्प नहीं था । मैं जोधपुर के कार्यकर्ताओं की सफलताओं की कामना करता हूँ । लेकिन मुझे विश्वास है कि वे महसूस करते हैं कि उन्हें अकेले ही हल में जोत दिया गया है । उनको सम्पूर्ण भारत से सद्भावनाऐं प्राप्त हुई

होगी लेकिन ये सूखी सद्भावनाऐं उनकी सहायता नहीं कर पायेगी । सहायता उनके स्वयं के दृढ़ संकल्प की इच्छा और अटल साहस से आनी चाहिए ।"

गाँधीजी ने 2 अगस्त, 1942 को हरिजन में लिखा है "मुझे ऐसी आशा है कि जोधपुर के लोग उनके उद्देश्य की प्राप्ति के प्रति दृढ़ संकल्पित हैं जब तक वे अपने तात्विक लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर लेंगे तब तक दुःख सहते हुए डटे रहेंगे । आन्दोलन के प्रमुख नेता गिरफ्तार हो चुके थे । 16 जून, 1942 को जेल सुविधाओं में सुधार की मांग के लिए उपवास रखते हुए बालमुकुन्द बिस्सा ने अपना जीवन त्याग दिया । गाँधीजी ने श्री प्रकाश को तथ्य अन्वेशण मिशन के तहत भेजा और 15 जुलाई, 1942 को बिस्सा की मृत्यु पर सहानुभूति प्रकट की । बाद में उन्होंने पाया कि तथ्य सही थे ।"

गाँधी द्वारा प्रेरित तथा निर्देशित इन आन्दोलनों व विरोध प्रदर्शनों के परिणामत: शासकों ने धीरे-धीरे अपने राज्यों में प्रतिनिधिक एवं उत्तरदायी सरकारों की संरचना को विकसित किया ।

एक से अधिक बार के लिए गाँधीजी ने राजस्थान की काँग्रेस समिति के आन्तरिक संघर्षों में हस्तक्षेप किया । गाँधीजी चिन्तित और दुःखी हुए । जब उन्होंने साम्प्रदायिक हिंसा के यह समाचार सुने कि अलवर और उसके आसपास का क्षेत्र इसकी गिरफ्त में आ चुका है । उन्होंने अलवर के बाह्य अंचल के गांव घसेरा की यात्रा की और मेव समुदाय को अपने गांवों को लौट जाने को कहा । उन्होंने श्री जे.एन. व्यास, श्री चारी एवं श्री वर्षभान को अलवर में साम्प्रदायिक तनावों के सम्बन्ध में उनको जानकारी देने हेतु भेजा । 28 जनवरी, 1948 को श्री जयनारायण व्यास, श्री हरिभाऊ उपाध्याय एवं श्री देशपाण्डे गाँधीजी से बिड़ला हाउस में मिले जहाँ उन्होंने अलवर और भरतपुर के दंगों पर काफी गहरा दुःख व्यक्त किया ।

यह सम्भवत: राजस्थान के नेताओं से उनकी अन्तिम मुलाकात थी । गाँधीजी की दूरदृष्टिता उनके कार्यों में निहित है और उनके दिशा-निर्देश कार्यकर्ताओं में । वे अच्छी तरह महसूस करते थे कि राज्यों का वातावरण उदार-राजनीतिक गतिविधियों के लिए उपयुक्त नहीं है और देशी राज्य संवैधानिक एवं कानूनी स्थिति के विशेषाधिकार का उपभोग करते थे । उन्होंने शासकों की छत्रछाया में उत्तरदायी सरकार की प्रजामण्डलों की मांग सम्बन्धी गतिविधिईयों को सीमित किया । उन्होंने कई बार कार्यकर्ताओं को चेतावनी दी कि सत्याग्रही के लिए विनम्र भाषा ही उपयुक्त होती है । राजस्थान में किसी भी प्रकार की घटना की सूचना प्राप्ति पर उन्होंने तत्काल तथ्य अन्वेषण मिशन भेजा और कार्यकर्ताओं से आन्दोलन का नैतिक और आध्यात्मिक चरित्र बनाए रखने के लिए आग्रह किया । गाँधीजी का जन्म भी प्रिंसिलि स्टेट में ही हुआ था इसलिए राज्यों के लोगों की आवाज अच्छी तरह पहचानते थे और उनके प्रतिनिधित्व और उनकी भावनाओं को राष्ट्रीय स्तर पर उचित रूप में रखते थे । राजस्थान के प्रमुख कार्यकर्ताओं में शामिल है - रामनारायण चौधरी, हरिभाऊ उपाध्याय, माणिकलाल वर्मा, अर्जुनलाल सेठी, पं. हीरालाल शास्त्री, शोभालाल गुप्ता, जयनारायण व्यास, पं. अभिन्न हरि आदि । ये सभी नेता गाँधी से व्यक्तिगत रूप से बातचीत करते थे, वर्धा, बारदोली आदि स्थानों पर । यह वास्तव में दुर्भाग्य था कि गाँधीजी की हत्या में अलवर की जटिलता को भी दलील रूप में पेश किया जाता

है । हालांकि अलवर के महाराजा व उनके प्रधानमंत्री डी.एन.बी. खरे को दोषमुक्त करने सम्बन्धी मामले की भी जाँच करवायी ।

10.7 गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम एवं राजस्थान

गाँधी दर्शन की सफलता राष्ट्रीय जीवन से निकटता से जुड़े विभिन्न सामाजिक-आर्थिक प्रश्नों पर व्यावहारिक अनुप्रयोग में निहित है । उनकी स्वराज की अवधारणा में राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्व-निर्भरता और स्वायत्त ग्रामीण इकाईयाँ सम्मिलित हैं । गाँधीजी न केवल राजनीतिक आन्दोलन के दौरान रचनात्मक कार्यक्रम पर जोर देते थे बल्कि रचनात्मक कार्यक्रम तो राष्ट्र-निर्माण की स्थायी विशेषता होनी चाहिए ताकि जब राजनीतिक स्वराज प्राप्त कर लिया जाए तब इसे सामाजिक-आर्थिक अर्थों में साकार भी किया जा सके ।

गाँधीजी के आर्थिक दर्शन का प्रमुख आधार स्वदेशी की अवधारणा है । उन्होंने लिखा, "यह (स्वदेशी) अपने तात्विक एवं आध्यात्मिक अर्थों में, आत्मा का भौतिक बन्धनों से आखिरी मुक्ति का समर्थन करती है । स्वदेशी एक सेवाधर्म है जो प्रत्येक को अपने तत्काल बाद के परिवेश या वातावरण के लिए लागू होती है । समाज के स्वदेशी धर्म को निभाने की ओर पहला अपरिहार्य कदम खादी है । इसलिए वे कहते थे कि खादी स्वदेशी का मुख्य तत्व होना चाहिए ।"

10.7.1 राजस्थान में खादी का प्रसार

गाँधीजी ने घोषणा की कि खादी सम्पूर्ण देश की आर्थिक स्वतन्त्रता एवं समानता की शुरूआती बिन्दु का संकेत करती है और इसके सभी प्रभावों का लाभ लेना चाहिए । उनके लिए स्वदेशी का व्यापक अर्थ था - यह मानव जीवन के संचालन हेतु आवश्यक चीजों की खोज ग्रामीणों द्वारा अपने श्रम व बुद्धिमता से करने के संकल्प का नाम है ।

गाँधीजी जोर देते थे कि प्रत्येक काँग्रेस कार्यकर्ता को सूत कातना चाहिए और इसलिए हमें राजस्थान के कई बड़े काँग्रेसी कार्यकर्ताओं के सूत कातने के उदाहरण देखने को मिलते हैं । चाहे वे अपने कार्यस्थल पर काते या गाँधी आश्रम में । रामनारायण चौधरी, जमनालाल बजाज, हरिभाऊ उपाध्याय, छोटेलाल, हीरालाल, माणिक्यलाल वर्मा आदि गाँधी की उपस्थिति में वर्धा में खादी कातने के अनुभवों को काफी याद करते थे । उनके खादी कातने पर बल देने को एक घटना द्वारा समझा जा सकता है । जब श्री जयनारायण व्यास गाँधीजी के सेवाग्राम की यात्रा की । सेवाग्राम से लौटते हुए व्यास ने उनको एक कविता भेंट की । बापू ने कविता को पढ़ा और टिप्पणी की कि, "कविता अच्छी है, लेकिन यह गरीब की गरीबी को शान्त नहीं करती है । जयनारायण कतली से सूत काते तो उसे ज्यादा पसन्द करूंगा ।

राजस्थान खादी कार्यों के लिए उपयुक्त वातावरण देता है । गाँधीजी ने टिप्पणी की, जब अन्य प्रान्तों से चरखा समाप्त कर दिया गया, जो राजस्थान में आज भी चल रहा है ।

सन् 1922 को एक राजनीतिक सम्मेलन की अध्यक्षता के रूप में कस्तूरबा जी ने अजमेर की यात्रा की । उन्होंने महिलाओं के एक समूह को सम्बोधित किया और उनसे अपील की कि वे अपने को खादी पहनने के लिए तैयार कर ले । उन्होंने टिप्पणी की थी कि, "विदेशी

कपड़े पहनना उतना ही खतरनाक है जितना की स्वराज के साथ विश्वासघात करना । खादी हिन्दुओं के लिए गाय की रक्षा के समान है और मुसलमानों के लिए खिलाफत प्रश्न की रक्षा के समान है ।" उन्होंने गुलाबदेवी, अजमेर की प्रमुख खादी कार्यकर्ता, द्वारा आयोजित सभा की भी यात्रा की ।

खादी को बढ़ावा देने हेतु 1926 में अखिल भारतीय चरखा संघ की स्थापना हुई । इसकी एक शाखा राजस्थान में स्थापित हुई । श्री बलवन्त सानवाला राम देशपाण्डे को उसका प्रभारी बनाया गया ।

10.7.2 बिजौलिया परीक्षण

बिजौलिया ने राजस्थान में राजनीतिक आन्दोलन का नेतृत्व किया था । एक बार पुन: इसने खादी के क्षेत्र में राजस्थान का नेतृत्व किया । इस क्षेत्र में किसान आन्दोलन के कारण राजनीतिक चेतना स्तर बहुत ऊँचा था । यहाँ पंचायतों और कार्यकर्ताओं को सहायता हेतु मूलभूत आधार संरचनाऐं प्राप्त थी । श्री जेथालाल गोविन्द ने महात्मा जी के निर्देशन और प्रेरणा से 1921 में खादी कार्य शुरू किया । जेथाभाई नियमित रूप से खादी कार्य में प्रगति की रिपोर्ट गाँधीजी को भेजते थे और उनसे सहायता भी लेते थे । ये रिपोर्ट नवजीवन में गाँधीजी की टिप्पणियों के साथ प्रकाशित हुई थी । किसान सूत कातने में कुशल नहीं थे लेकिन वे बुनाई और रंगने में कुशल थे । गाँधीजी ने 27 सितम्बर, 1928 के नवजीवन में प्रकाशित जेथाभाई की विशाल रिपोर्ट पर टिप्पणी करते "हुए लिखा कि "हम खादी के पीछे कुछ ही लोगों को पागल कर पाये उनमें जेथाभाई एक है ।

7 मार्च, 1929 को जेथाभाई ने नवजीवन में खादी कार्यकर्ताओं के बीच एक बहुत ही व्यावहारिक समस्या पर विचार-विमर्श किया था । यह रंगों से सम्बन्धित थी जिसके लिए वे विदेशी रंगों (लाल, पीला एवं गुलाबी रंगों के लिए) पर निर्भर रहते थे । उन्होंने व्यापारियों के अशोभनीय व्यवहार की भी शिकायत की और कहा कि उन्हें कैसे सुधारा जाए । गाँधी ने आत्म-निर्भरता के अर्थ को परिभाषित किया और व्याख्या की कि कोई भी आदमी एक तरफ से और निरपेक्ष रूप में आत्मनिर्भर नहीं हो सकता है । एक सामाजिक प्राणी के रूप में वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्यों पर निर्भर रहेगा ही । इसलिए उग्र आत्म-निर्भरता के लिए कभी भी इच्छुक नहीं होना चाहिए और सलाह दी कि खादी-आन्दोलन का उद्देश्य आत्म-शुद्धिकरण था और इसलिए इसका तात्कालिक प्रभाव व्यापारियों पर भी आना चाहिए । "यह बेहतर होगा यदि हम हमारे स्तर पर ही रंगों का प्रबन्ध कर लेते । उन्होंने सलाह दी कि उग्र या नितान्त को त्याग दें और मध्यम मार्ग का ही अनुसरण करें क्योंकि वही श्रेष्ठ मार्ग है ।"

बिजौलिया को पुन: एक बार बड़े संकट का सामना करना पड़ा जब कुछ खादी कार्यकर्ताओं को उनके राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न होने की आशंका के आधार पर मेवाड़ सरकार ने गिरफ्तार कर लिया । उनकी मांग थी कि खादी आश्रम के प्रबन्धक उन्हें लिखित में आश्वासन दे कि वे किसी भी राजनीतिक कार्यकर्ता की मेहमान नवाजी नहीं करेंगे ना ही उनसे कोई सम्बन्ध रखेंगे । खादी श्रमिक प्रतिबद्ध थे कि वे किसी भी राजनीतिक गतिविधि में प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: भाग नहीं लेंगे । श्री जमनालाल बजाज बिजौलिया पहुँचे, तथ्यों की

जाँच की । उन्होंने सरकार से वादा किया कि खादी कार्यकर्ता केवल खादी के उत्पाद और बेचने हेतु लोगों को निरन्तर संगठित करते रहेंगे । इस घटना पर टिप्पणी करते हुए 21 जुलाई, 1927 को नवजीवन में गाँधीजी ने लिखा कि - "जमनालाल बजाज द्वारा दिए गए वचन से कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि यह तो चरखा संघ की मौलिक और अपरिवर्तनीय नीति है जो देशी राज्यों में केवल खादी के कार्य को स्वयं ही सीमित करनी चाहिए ।"

10.7.3 रींगस में खादी कार्य

जयपुर तुलनात्मक रूप से खादी की प्रगति की दृष्टि से रूचिकर परिवेश उपलब्ध कराता है । इस राज्य ने रूई पर से आयात शुल्क हटा दिया था और खादी पर से निर्यात शुल्क भी । रींगस ने खादी में बिजौलिया परीक्षण का अनुसरण किया । जून, 1929 में भाई मूलचन्द ने गाँधीजी को सूचित किया कि आज की तारीख तक 900 श्रमिक धुनने और चीरने में प्रशिक्षित है । क्या उन्हें बुनाई भी सीखनी चाहिए थी? गाँधीजी ने 6 जून, 1929 के नवजीवन में लिखा कि - "वे लोग जो बुनना सीखने की इच्छा रखते हैं, उनको खादी सेवक अपने कर्तव्य पालन के बतौर सिखाऐं । ओटाई भी बुनाई का अपरिहार्य भाग है ।" इसलिए वे खादी को एक सम्पूर्ण मनोवृत्ति कहते थे।

सन् 1927 श्री हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा हदुण्डी में गाँधी आश्रम की स्थापना की गई जो धीरे-धीरे

रचनात्मक गतिविधियों का केन्द्र बन गया और गाँधी दर्शन का भी केन्द्र बन गया ।

कस्तूरबा जी 1931 में जब पुन: अजमेर यात्रा पर आयी तब हटुण्डी आश्रम में ही ठहरी थी। वे पुष्कर में एक खादी प्रदर्शनी में भी गई थी और श्रमिकों से खादी पहनने का आव्हान किया । धीरे-धीरे खादी का संदेश प्रचारित हुआ । यह राष्ट्रीय पहचान और गर्व का प्रतीक बन गई। श्री चन्द्रभान शर्मा ने 1925 के पूर्व ही जयपुर के पास चौमू में खादी कार्यालय खोला । 26, 27 और 28 फरवरी, 1938 को ब्यावर में एक देशी ग्राम प्रदर्शनी का आयोजन हुआ । प्रदर्शनी में हस्तनिर्मित उत्पाद के अतिरिक्त जोधपुर, जयपुर, बीकाने और भरतपुर के राज्यों द्वारा जारी प्रतिबन्धात्मक आदेश और अधिनियमों को कांच और लकड़ी में प्रदर्शित किया गया । इसलिए इस प्रदर्शनी ने काफी लोकप्रियता हासिल की । अलवर में कुंजबिहारी मोदी ने खादी के संदेश को प्रचारित करने का कार्य शुरू किया । एक कला और दस्तकारी प्रदर्शनी 8 और 9 मई, 1938 को जयपुर में आयोजित हुई जिसका उद्घाटन कस्तूरबा गाँधी ने किया ।

जमनालाल बजाज और उसके परिवार ने अपने आपको खादी कार्य और इसके प्रचार-प्रसार मे समर्पित कर दिया । सन् 1939 में राधाकृश्ण बजाज और जानकी देवी बजाज डुण्डलोद और मुकन्दगढ़ से अपने कुछ कार्यकर्ताओं के साथ नवलगढ़ की यात्रा की थी । उन्होंने झुन्झुनू धर्मशाला में एक व्याख्यान भी दिया था । इस भाषण में राधाकृष्ण बजाज ने कहा कि "आप जानते हैं कि हम यहाँ क्यों आए हैं । हमारा प्रथम उद्देश्य खादी को लोकप्रिय बनाना और दूसरा तुम यह जानों कि काँग्रेस वर्तमान में क्या कर रही है और वह क्या करना चाहती है । " तब उन्होंने खादी के अर्थशास्त्र पर विस्तार से प्रकाश डाला और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार की

वकालत की । जानकी देवी बजाज ने राधाकृष्ण के भाषण का समर्थन किया और अन्त में "महात्मा गाँधी की जय" के साथ सम्बोधित किया।

सन् 1939 में एफ.एस. यंग (जयपुर राज्य के पुलिस महानिरीक्षक) जयपुर के खादी कार्यकर्ताओं से यह आश्वासन चाहते थे कि वे कभी भी राजनीतिक विरोध प्रदर्शन में भाग न लें । 1940 में अलवर के नाथुराम मोदी ने 'खादी भण्डार' की शुरूआत की जिसका महादेव देसाई ने उद्घाटन किया । प्रदेश के प्रमुख नेताओं जैसे जमनालाल बजाज एवं हरिभाऊ उपाध्याय ने 1940 के षुरू में उदयपुर की यात्रा की और गाँधीवादी आदर्शों के उपदेश दिए तथा खादी के प्रयोग की वकालत की । सन् 1941 में खादी के क्षेत्र में कई नई गतिविधियाँ शुरू हुई । खैरथल में खादी प्रदर्शनी लगी और श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित ने उदयपुर में खादी प्रदर्शनी का उद्घाटन किया । श्री जे.एन. व्यास ने गाँधी जयन्ती पर 1941 में खादी एवं चरखा प्रदर्शनी का आयोजन किया । करौली के खादी कुटीर के सदस्यों ने भी गाँधी जयन्ती मनाई । सितम्बर, 1941 में श्री जे.एन. व्यास और छगन राज चौपासनीवाला ने नागपुर में एक खुली खादी प्रदर्शनी की यात्रा की । अक्टूबर, 1941 में श्री महादेव देसाई ने पुन: एक खादी प्रदर्शनी का उद्घाटन किया जो कि अखिल भारतीय चरखा संघ की राजस्थान शाखा के साथ सहयोग से आयोजित की गई थी । साधु सीताराम दास और पण्डित अभिन्न हरि ने भी कोटा में खादी को लोकप्रिय बनाया और मांगरोल और सकतपुरा में दो खादी उत्पाद केन्द्र खोल दिए ।

गाँधीजी की निरन्तर प्रेरणा और मार्ग निर्देशन की भावना ने राजस्थान में खादी को लोकप्रिय बना दिया । बापू के लिए खादी मनोवृत्ति थी जो उत्पादन का विकेन्द्रीकरण करने का और जीवन की आवश्यक वस्तुओं का आपूर्ति का साधन थी ।

10.7.4 अछूतों का उत्थान

सामन्ती सामाजिक संरचना के कारण राजस्थान एक विशाल एवं जटिल पदसोपान व्यवस्था रखता था जिसमें अछूतों का स्थान खराब से भी खराब स्थिति में था । जब राजस्थान में उनकी स्थिति के प्रति गाँधीजी का ध्यान गया, उन्होंने स्वीकार किया कि अस्पृश्यता एक प्लेग थी और इससे लड़ने का प्रत्येक हिन्दू का भारी कर्तव्य था । उन्होंने अपील की कि "कोई भी अछूत पैदा नहीं होता है जैसे एक ही आग से निकलने वाली सभी ज्वालाऐं । जब एक अस्पृश्यता के निराकरण को आध्यात्मिक दृष्टि से देखता है तो उसके भौतिक और राजनीतिक परिणाम महत्त्वहीन में डूब जाते हैं ।"

जब 1922 में कस्तुरबा जी ने अजमेर की यात्रा की तब उन्होंने दलित वर्गों के उत्थान और अस्पृश्यता के निवारण की अपील की थी । 1923 के शुरू में अलवर के हरिनारायण शर्मा ने अपने घर का मन्दिर हरिजनों के लिए खोल दिया था । उसने "अस्पृश्य निवारण संघ", 'वाल्मिकी संघ", और "आदिवासी संघ' की स्थापना की थी । सन् 1926 में अमरसर (जयपुर) के खादी केन्द्र पर एक हरिजन स्कूल खुला । धीरे-धीरे उच्च वर्गों के बच्चों, ने भी इसमें प्रवेश लिया । इससे प्रेरित होकर खादी कार्यकर्ताओं ने यहाँ हरिजन सहायक मण्डल की स्थापना की

जिसने तीन स्कूलों का प्रबन्धन किया, जाति पंचायत को संगठित किया और सामाजिक सुधारों को लागू करवाया ।

बाद में हरिजन सेवक संघ की स्थापना हुई, इसकी प्रान्तीय शाखा राजस्थान में 1932 में अमृतलाल ठक्कार (ठक्कर बापा) द्वारा स्थापित की गई । श्री हरविलास शारदा इसके अध्यक्ष थे और रामनारायण चौधरी सचिव बने । इस संगठन ने कठोर मेहनत की दलित वर्गों के ऊत्थान में, विशेषकर के अछूतों के लिए । एक साल के अन्तर्गत इसने 125 दिवारात्र विद्यालय खोले जिसमें 3000 छात्र (लड़के-लड़कियाँ) पढ़ते थे और संगठन की 50 उप-शाखाएँ खोली । सन् 1933 में ब्यावर हरिजन सेवक संघ की स्थापना हुई । सन् 1934 में गाँधीजी ने ब्यावर और अजमेर की यात्रा की । अपनी हरिजन यात्रा के दौरान, जो कि सविनय अवज्ञा के स्थगन के बाद शुरू की गई थी, वे हरिजन नेताओं से मिले जिन्होंने उन पर थोपे जाने वाले 'बेगार' की शिकायत की । उन्होंने हरिजन सेवकों को सम्बोधित किया और उनसे निवेदन किया कि हरिजन उत्थान के साथ राजनीति को नहीं मिलाया जाए । उन्होंने अजमेर में हरिजन बस्तियों- दिल्ली दरवाजा, तारागढ़ आदि का दौरा भी किया । बाद में राजपुताना हरिजन सेवक संघ ने उनको एक रिपोर्ट राजस्थान में उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के बारे में प्रस्तुत की । बाबा बालनाथ द्वारा गाँधीजी के अछूतों उद्धार के कार्यक्रम का विरोध करने की घटना भी काफी चर्चित रही । गाँधीजी ने उसको न केवल अस्पृश्यता के पक्ष में भाषण देने की ही इजाजत दी बल्कि उसको धैर्यपूर्वक सुना और बाबा द्वारा उन पर हमले को भी देखते रहे । उन्होंने बाद में ब्यावर की यात्रा की और जैन साधुओं को प्रभावित किया । हरिजन उत्थान के लिए चन्दा एकत्र करने हेतु उन्होंने ब्यावर की हरिजन बस्तियों में और हरिजन मन्दिर की यात्रा भी की । अजमेर यात्रा के दौरान उन्होंने अजमेर स्टेशन के गुशलखानों को भी देखा, जहाँ सफाई करने वाले मैले को ले जाते थे और कार्य की दशाऐं बहुत खराब थी । उन्होंने इस दृश्य को हरिजन सेवक में वर्णित किया और इसे 'अजमेर का नरक' कहा। उन्होंने सभी हरिजन सेवकों से आग्रह किया कि अजमेर के 'मेला स्टेशन' की दशाओं में सुधार किया जाए ।

सन् 1934 में रामनारायण चौधरी द्वारा अजमेर के पास ठोली गाँव में हरिजन सेवक आश्रम की स्थापना की गई । अजमेर के पास कल्याणपुरा गाँव में उन्होंने मेर, मेहरात, गुजर, चमार व बलाई जातियों में चेतना का प्रसार किया और उनकी पंचायतों को संगठित किया ।

राजपुताना हरिजन सेवक संघ ने 1934 में नारेली (अजमेर) में एक प्रशिक्षण केन्द्र खोला । शायद यह अपने प्रकार का पहला केन्द्र था जहाँ 1०० से अधिक हरिजन सेवकों को छह माह का प्रशिक्षण दिया जाता था और फिर उनको अस्पृश्यों के उत्थान के लिए नियुक्त किया जाता था । जब यहाँ जनवरी 16 से 27 जून, 1936 को हरिजन सेवक सम्मेलन का आयोजन हुआ तब गाँधीजी ने उनके लिए संदेश भेजा कि "वास्तविक सेवा उनके द्वारा ही उपलब्ध करायी जा सकती है जो धर्म में विश्वास रखते हैं, हरिजनों से प्यार करते हैं और अपने आपको हरिजनों की सेवा के लिए समर्पित करने को तैयार रहते हैं ।"

दिसम्बर, 1934 में रींगस में आयोजित खादी प्रदर्शनी का आयोजन हुआ जिसमें एक हरिजन लड़का खादी बेचने हेतु बरामदे में बैठा हुआ था । उच्च जाति के लोगों ने इस प्रदर्शनी

का बहिष्कार किया, लोगों से कहा कि उनकी लड़कियों को स्कूल नहीं भेजे और हरिजन पाठशालाओं के शिक्षकों को अपने घरों में प्रवेश ना दें । जिन्होंने इसकी अनुपालना नहीं की उन पर जुर्माना लगाया गया । जब गाँधीजी को यह सब पता लगा तो उन्होंने 'हरिजन' में लिखा कि "यदि असमानता समाप्त नहीं की गई तो धर्म समाप्त हो जायेगा । किसी को भी बहिष्कार से भयभीत नहीं होना चाहिए और अन्य दलों से बातचीत का रास्ता खुला रखना चाहिए । यह शुभ संकेत है कि लोगों पर बहिष्कार का कोई असर नहीं हुआ ।"

मार्च, 1939 में अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ की उपाध्यक्षता राजेष्वरी नेहरू और ठक्कर बापा ने मध्य भारत और दक्षिण राजपुताना का दौरा किया और कहा कि 'दौरे का उद्देश्य हरिजन सेवक संघ के कार्य को संगठित करना था जहाँ वे विद्यमान थे । जहाँ यह कार्य नहीं हो रहा था वही नये केन्द्र खोले जाए और अस्पृश्यता निवारण के लिए प्रचार-प्रसार किया जाए । " उनके दौरे की रिपोर्ट 'हरिजन' के पाक्षिक अंक में प्रकाशित हुई ।

गाँधीजी के हरिजन और दलित वर्गों के उत्थान के प्रयासों को कुछ देशी राज्यों ने भी कुछ सहायता प्रदान की जैसे मेवाड़ राज्य ने । इस राज्य ने उदयपुर के सफाईकर्मियों को मन्दिर बनाने के लिए जमीन और आर्थिक सहायता उपलब्ध करायी । दलित वर्गो के लिए नई पाठशालाऐं खोलने की स्वीकृति प्रदान की और इन स्कूलों के विद्यार्थियों को मुफ्त में भोजन देने की व्यवस्था की । सरकार द्वारा एक लाख 50 हजार रूपये का एक कोष बनाया गया जिससे सालाना 10,000 रूपये की अतिरिक्त सहायता की घोषणा की और इन वर्गों की दशा को सुधारने का भी आव्हान् किया गया ।

प्रजामण्डलों ने एक राजनीतिक चेतना को संगठित किया और ये पददलित लोगों की दशाओं को सुधारने में संलग्न हो गए । मेवाड़ प्रजामण्डल ने 1942 में हरिजनों और भीलों के उत्थान के कार्य किये । 1944 में मेवाड़ हरिजन सेवक संघ की स्थापना हुई । बागड नवयुवक मण्डल की स्थापना आदिवासियों एवं हरिजनों को शिक्षित करने के लिए तथा सामाजिक सुधारों की शुरूआत करने के लिए की । इसने उनके लिए पाठशालाओं की स्थापना भी की । इसी क्रम में अलवर प्रजामण्डल ने भी प्रसिद्ध राम-लक्ष्मण मन्दिर में हरिजनों और उच्च जातियों के लिए साथ में अन्नकूट प्रसादी का वितरण किया गया ।

कुछ कार्यकर्ताओं ने भी व्यक्तिगत उदाहरण प्रस्तुत किए । जैसे पं. नैनुराम शर्मा (कोटा) ने हरिजनों के लिए पाठशालाओं की स्थापना की और उनके साथ भोजन लिया । अजमेर में पं. गौरीशंकर भार्गव ने हरिजन बस्तियों में सफाई कार्य का नेतृत्व किया । डूंगरपुर के राजगुरू ने हरिजन सेवक समिति के अध्यक्ष के पद को स्वीकार किया और उन्होंने हरिजनों के लिए अपने घरेलू मन्दिर को खोल दिया जबकि वे कट्टर वैष्णवी थे । करौली में चिरंजीलाल शर्मा ने हरिजनों के उत्थान के कार्य किए ।

10.7.5 शिक्षा एवं प्रेस

गाँधीजी का विश्वास था कि यदि लोगों को स्वराज प्राप्ति और रख-रखाव के लिए प्रशिक्षित किया जाना है तो घरेलू शिक्षा व्यवस्था को भी धीरे-धीरे विकसित और प्रचारित किया

जाना चाहिए । इसलिए उन्होंने मौलिक शिक्षा या नई तालीम की अवधारणा को विकसित किया । उनके अनुसार "मौलिक शिक्षा बच्चों से जुड़ी हुई है चाहे वे शहर के हों या गाँवों के । भारत में सभी के लिए यही श्रेष्ठ और अन्तिम है । यह व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक दोनों पक्षों का विकास करती है और बच्चों को सम्मान व वैभव के साथ जमीन से जोड़े रखने की भावी दृष्टि भी है ।" इसके लिए हिन्दुस्तान तालिमि संघ ने काग्रेस के हरिपुरा अधिवेशन से ही कार्य करना शुरू कर दिया था ।

अक्टूबर, 1935 में हीरालाल शास्त्री ने एक बालिका शिक्षा केन्द्र-बनस्थली (टोंक जिले में) में खोला जो बनस्थली विद्यापीठ के नाम से जाना जाता है । उनको महात्मा जी का आशीर्वाद प्राप्त था । गाँधीजी ने एक बार लिखा "बनस्थली हमेशा मेरे हृदय से सम्बद्ध रहती है ।" यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस संस्थान ने गाँधी के सिद्धान्तों को कार्यों के माध्यम से क्रियान्वित किया । यहाँ सभी के लिए खादी पहनना अनिवार्य था ।

1936 में स्वामी केशवानन्द और अन्य लोगों ने चुरू शेखावाटी सभा, पुस्तकालयों, अध्ययन कक्षों, पुत्री पाठशाला, कबीर पाठशाला, रात्रिकालीन महाविद्यालयों आदि की स्थापना की। शोभाराम ने घड़साना में मौलिक शिक्षा योजना के सिद्धान्तों पर आधारित गाँधी विद्यालय की स्थापना की । गुलाबदेवी ने अजमेर में बालिका पाठशाला खोली । सेठ आनन्दीलाल पोद्दार ने शेखावाटी क्षेत्र में शिक्षा को बढ़ाया । गाँधीजी जी.डी बिडला की पिलानी स्थित स्कूल से बहुत प्रभावित हुए थे ।

बजाज और बिड़ला ने लोगों का पुस्तकों के प्रति प्रेम को बढ़ाने के लिए सस्ती दर पर किताबें उपलब्ध कराने हेतु सस्ता साहित्य मण्डल की स्थापना की ।

गाँधीजी, जो स्वयं कई समाचार पत्रों के प्रकाशन में व्यस्त थे, ने विचार किया कि प्रेस राजनीतिक चेतना के फैलाव का प्रभावी माध्यम है । कई समाचार-पत्र राजस्थान के राजनीतिक कार्यकर्ताओं द्वारा प्रकाशित किए गए जिन्होंने गाँधीजी से सलाह और मार्ग निर्देशन प्राप्त किया था । महात्मा पत्रकारिता के पक्के समर्थक थे, जिसका सभी के द्वारा अनुसरण करने के लिए उन्होंने बल दिया । राजस्थान सेवक संघ द्वारा नवीन राजस्थान, तरूण राजस्थान, राजस्थान केसरी आदि का प्रकाशन किया गया । रामनारायण चौधरी उस जमाने के प्रख्यात पत्रकार थे जिन्होंने नवज्योति, ऊपर माल या डांको और यंग राजस्थान का प्रकाशन किया । 'राजस्थान सेवा संघ' के संस्थापक सदस्य के बतौर वे संघ द्वारा संचालित समाचार पत्रों से निकटता से जुड़े हुए थे । गाँधी जोर देते थे कि विरोधी को भी अपनी स्थिति को स्पष्ट करने के लिए एक सप्ताह का समय दिया जाना चाहिए । चौधरी स्मरणीय हैं क्योंकि एक बार उन्होंने तरूण राजस्थान में एक महान् क्रान्तिकारी राजा महेन्द्र प्रताप सिंह का पत्र प्रकाशित किया जिसमें लोगों से अंग्रेजों को खदेड़ने की अपील की गई थी । गाँधीजी ने इस कृत्य को यह कहकर सही ठहराया कि सरकार के दृष्टिकोण को ध्यान में रखना सम्भव नहीं था । एक बार चौधरी ने सर्वसम्मति से यंग राजरथान में एक गद्यांश छापा जो कि गैर-कानूनी था । गाँधीजी ने स्वयं चौधरी की ओर से इसके लिए माफी मांगी । उन्होंने इसके लिए चौधरी के नाम का एक पत्र अजमेर-मेरवाड़ा के जिला मजिस्ट्रेट को भेजा । पुलिस की सिफारिशों के बावजूद भी मिस्टर

गिब्सन ने चौधरी के विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं की । यंग-राजस्थान का अन्तिम सम्पादकीय, 26 दिसम्बर, 1929 का, गाँधीजी ने स्वयं चौधरी के नाम से लिखा । नवज्योति निरन्तर राष्ट्रीय भावनाओं को प्रचारित करता रहा, भारत छोड़ो आन्दोलन से पहले और बाद में भी । राजस्थान केसरी अपने दो पृष्ठ विशेश रूप से असहयोग आन्दोलन और किसानों तथा श्रमिकों के लिए आरक्षित रखता था । पं. अभिन्न हरि ने रणभेरी का सम्पादन किया और युगल किशोर चतुर्वेदी ने नवयुग सन्देश प्रकाशित किया ।

10.7.6 अन्य रचनात्मक कार्य

राजस्थान सेवक संघ और प्रजामण्डल ने गाँधीजी के आशीर्वाद से बेगार प्रथा, अनावश्यक लोग-बागों तथा अवैध करों के विरूद्ध आन्दोलन शुरू किया । श्री हीरालाल शास्त्री स्वावलम्बी गाँवों की योजना से प्रेरित होकर 1929 में एक स्वावलम्बी इकाई के रूप में जीवन कुटीर की स्थापना की । पं. अभिन्न हरि ने परिवारों के सामुहिक सहयोग पर आधारित आदर्श गाँव की अवधारणा का भी प्रतिपादन किया । उन्होंने 'अटरू' को आदर्श गाँव नाम दिया । 1942 में काफी जाँच और हिचकिचाहट के उपरान्त राज्य सरकार द्वारा इसे अनुमति प्रदान की गई ।

10.8 निष्कर्ष

संक्षेप में गाँधी दर्शन के प्रभाव में कार्यकर्ताओं द्वारा निर्मित एक व्यापक कार्य योजना जो अधिक स्वीकार्य और सामाजिक समानता के परिवेश में कार्य हेतु तैयार की, जिसने स्वराज को सही अर्थपूर्ण रूप से मूर्त रूप दिया जा सकेगा ऐसा उनका विश्वास था । राजनीतिक एजेण्डे के साथ-साथ रचनात्मक कार्यक्रम भी समानान्तर रूप से चलते रहे । स्वदेशी मिशन गोविन्द गिरि द्वारा 20वीं सदी के आरम्भ से पहले शुरू कर दिया गया था लेकिन इसने बाद में नया अर्थ ग्रहण किया और गाँधीयन तकनीकों के अनुप्रयोग के साथ जोड़ा गया । स्वदेषी और सामाजिक कार्य अब राष्ट्रीय सम्मान के साथ जुड़ गए थे ।

10.9 अभ्यास प्रश्न

1. राजस्थान में प्रजामण्डल आन्दोलन में गाँधीजी की भूमिका की चर्चा कीजिए ।
2. राजस्थान के बारे में गाँधीजी की चिन्ताओं की समीक्षा कीजिए ।
3. राजस्थान के संदर्भ में गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों की समीक्षा कीजिए ।

10.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. चौधरी, रामनारायण, "वर्तमान राजस्थान : सार्वजनिक जीवन के संस्मरण", पत्रिका चिकित्सा ग्रन्थमाला कार्यालय, नीम का थाना, 1949.
2. गुप्ता, शोभालाल, ''गाँधीजी और राजस्थान'', राजस्थान राज्य स्मारक निधि, भीलवाड़ा, 1969.

3. जर्नल ऑफ श्री जे.एस. गेहलोत रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जोधपुर, राजस्थान फ्रीडम मुवमेंट, स्पेशल नं. 5-6, वॉल्यूम- 1(सम्पा.) सुखवीर सिंह गेहलोत, 1966.
4. केला, भगवानदास, "देसी राज्यों में जागीरदारी", इलाहाबाद, 1948.
5. कोचर, के.एल., " रियासती राजपुताना से जनतान्त्रिक राजस्थान ", राजस्थान स्वर्ण जयन्ती समारोह समिति, जयपुर, 2002.
6. लक्ष्मण सिंह, "पॉलिटिकल एण्ड कॉन्स्टीट्यूशनल डेवलपमेंट इन दी प्रिसली स्टेट्स ऑफ राजस्थान (1920-1949)", जैन ब्रादर्स, नई दिल्ली, 1970.

ISBN-13/978-81-8496-041-9